माधव-विनोद

लेखक :

कवि सोमनाथ चतुर्वेदी

संपादक :

डा. सोमनाथ गुप्त
एम. ए., पी-एच. डी.



१९६४

कृतज्ञता प्रकाशन

"माधव-विनोद" पाठकों के हाथ में है। इसे प्रस्तुत करने में भरतपुर की हिन्दी समिति के सभापति श्री युधिष्ठिर चतुर्वेदी ने मेरी बड़ी सहायता की है। समिति का "माधव-विनोद" किसी हस्तलिखित प्रति की प्रतिलिपि है जिस का उपयोग करने का अवसर मुझे चतुर्वेदीजी की कृपा से ही प्राप्त हो सका। श्री मुनि कान्तिसागरजी की एक हस्तलिखित प्रति से भी विशिष्ट सहायता ली गई है।

उक्त दोनों महानुभावों के प्रति अपना हार्दिक आभार प्रगट करने में मुझे बड़ा हर्ष हो रहा है।

भूमिका का प्रारंभिक अंश 'भारत के प्राचीन मनोरंजन' के आधार पर संकलित किया गया है। अतएव उसके लेखक का कृतज्ञ हूं। जिन अन्य विद्वानों की रचनाओं का लाभ उठाने का अवसर मुझे प्राप्त हुआ है उनके प्रति भी विनम्रता पूर्वक आभारी हूँ।

हिन्दी नाटक साहित्य के इतिहास में माधव-विनोद का प्रकाशन, आशा है, एक उपयोगी कड़ी सिद्ध होगा और अब तक उसके विषय में जो भ्रांतियां चली आरही हैं उन्हें दूर कर पाठक आचार्य सोमनाथ की प्रतिभा का आनन्द लेने में समर्थ होसकेंगे ?

—सोमनाथ गुप्त

भूमिका

१. लोक धर्मी नाट्य :

भरत ने कहा है—

स्वभाव भावोपगतं शुद्धं त्वविकृतं तथा ।
लोकवार्ता क्रियोपेतमङ्गलीलाविवर्जितम् ॥ ७० ॥
स्वभावाभिनयोपेतं नाना स्त्री पुरुषाश्रयम् ।
यदीदृशं भवेन्नाट्यं लोकधर्मी तु सा स्मृता ॥ ७१ ॥
अतिसत्त्व क्रियो पेतमतिसत्वातिभाषितम् ।
लीलाङ्गहाराभिनयं नाट्यलक्षणलक्षितम् ॥ ७२ ॥
स्वरालकारसंयुक्तमस्वर्भूपुरुषाश्रयम् ।
यदोदृशं भवेन्नाट्यं नाट्यधर्मी तु सा स्मृता ॥ ७३ ॥
आदि आदि.................

नाट्यशास्त्र, अध्याय १४.

७० और ७१ वें श्लोक मे भरत मुनि ने लोकधर्मी नाट्य के लक्षणों की ओर संकेत करते हुए बताया है कि लोकधर्मी नाट्य में निम्न तत्व होते हैं—

१. स्वभाविक रूप से उत्पन्न भाव चाहे वे शुद्ध हों अथवा विकृत ।
२. लोक वार्ता, लोकप्रसिद्ध घटना (क्रिया) से संयुक्त ।
३. उत्तम लीलांग से विवर्जित ।
४. स्वभाविक अभिनय से युक्त ।
५. नाना स्त्री पुरुषों द्वारा अभिनीत ।

भरत के कथन से स्पष्ट है कि लोकधर्मी नाट्यय की कथा वस्तु का आधार कोई ऐसी घटना होती है जो लोक प्रसिद्ध हो अथवा कोई ऐसा कथानक हो जो लोक में प्रचलित हो । अवश्य ही 'लोक' शब्द से अभिप्राय उस निश्चित 'भूभाग' या 'जनपद' से है जहां लोकधर्मी नाटक का अभिनय किया जाय । ऐमे 'भूभाग' की सीमा स्वभाविक रूप से सांस्कृतिक अधिक होगी और भूगोलिक कम । अतएव लोकधर्मी नाट्य जनपदीय मनोरंजन की वस्तु है सार्वजनीन नही । और इसीलिये उसकी परख की कसौटी भी पर्याप्त मात्रा मे सीमित ही रहनी चाहिये ।

रस की दृष्टि से भरत ने लोकधर्मी नाट्यों में किसी विशेष रस के प्रतिपादन की ओर निर्देश नही किया है । केवल इतना ही माना है कि स्वभाविक रूप से जन समाज

में उत्पन्न होने वाले स्थायी भाव ही रस पुष्टि के लिए पर्याप्त है। इन भावों में शुद्धि अथवा विकृतता का आरोपण नही है। संभवतः भरत का अभिप्राय यह है कि लोकधर्मी नाट्य केवल किसी आचार संयुक्त उपदेश देने अथवा किसी नीति या नैतिकता का प्रचार करने के लिए नही होते। उनका लक्ष्य किसी कृत्रिम भावना का उद्रेक करना नही होता है वरन मानवी प्रकृति को जैसा का तैसा ही व्यंजित कर सामाजिको का मनोरंजन करना मात्र होता है। अतएव यदि 'भोंडे' हास्य अथवा थोड़े बहुत अश्लील या असंस्कृत भावों का समावेश ऐसे नाट्यो मे हो तो वह क्षम्य ही होना चाहिये।

परन्तु इस व्याख्या का यह अर्थ लगाना कि भरत सामाजिकों के निकृष्टतम भावों का उद्रेक करने और उनकी निम्नतम सहज प्रवृत्तियो को उभारने के साधन थे, उचित नही है। भरत का कथन जन समाज की अशिक्षित अथवा अर्धशिक्षित अवस्था के सन्दर्भ मे ही लेना चाहिए। किसी अन्य वातावरण अथवा परिवेष्ठन के संदर्भ में उस कथन का संयोग अवांछित और अनुपयुक्त है।

अतएव लोकधर्मी नाट्य मानव-समाज के सामुहिक सहज स्वभाव, अकृत्रिम संस्कार, उनकी शुद्ध अथवा विकृत भावनाओं का अभिव्यक्तिकरण है समाज की तथाकथित कृत्रिम सभ्यता एवं सस्कृति और शिष्टता से पृथक।

अभिनय के सम्बन्ध में भी लोकधर्मी नाट्य के साथ अभिनय की शास्त्रीय परम्पराओं का कोई अनिवार्य संबध नही है। शास्त्रीय अभिनय तत्वों का समावेश उसमे अनिवार्य नही है। अभिनय को केवल 'स्वभाविक' होना है, मानव प्रकृति के अनुकूल होना है। संभवतः इसीलिए उसमें उत्तम लीलांग विवर्जित है।

पात्रों के विषय में भी कोई विशेष वर्ग अथवा प्रकार की आवश्यकता नही है। नायक धीरोदात्त आदि में से ही कोई हो और नायिका भी उसी प्रकार कोई कुलीन उच्च वर्गीय स्त्री हो, यह आवश्यक नही है। कथा वस्तु के अनुकूल पात्रों का चुनाव होना चाहिये। संख्या के सम्बन्ध मे भी कोई विशेष निर्देश नही है।

यदि इस सम्बन्ध में भरत ने किसी विशेषता की ओर ध्यान दिया है तो वह यही कि लोकधर्मी नाट्य नाना स्त्री पुरुषों से युक्त अभिनय सम्पन्न हो। अभिनय में पुरुषों के साथ स्त्रियो के होने के लिए नाट्यधर्मी नाट्यों में भरतने ऐसी कोई शर्त नही रखी। संभवतः यह लक्षण इसीलिए हो कि लोकधर्म की दृष्टि से स्त्री-पुरुष समवेत रूप से समाज में खुले विचरण करते हों, उनका परस्पर व्यवहार ऐसा हो जो बिना किसी आपत्ति के समाज में ग्राह्य हो अथवा इस प्रकार की अभिनय परम्परा पूर्वकाल से समाज मे प्रचलित हो।

लोकधर्मी नाट्यों की उपरोक्त विशेषतायें नाट्यधर्मी नाटकों के लक्षणों से जिनका उल्लेख भरत मुनि ने ७२ से लेकर ८२ श्लोक तक किया है, भिन्न सी ही हैं।

अतएव हिन्दी में भी लोकधर्मी नाट्यों की परम्परा पर विचार करते समय इन लक्षणो को ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है।

२. 'लोक' शब्द की व्याख्या :

वैसे तो 'लोक' शब्द कोई विशेष नया शब्द नही है। 'इंद्रलोक' और 'परलोक' के रूप में इसका दार्शनिक अथवा धार्मिक संदर्भ में बहुत पुराना। वेद, रामायण, महाभारत और गीता आदि मे इसका प्रयोग अनेकों स्थानों पर हुआ है। वैदिक साहित्य में 'वैदिक' और 'लौकिक' परिपाटियां प्रसिद्ध हैं। वेद विधि से विपरीत परन्तु जन-सामान्य में प्रचलित किसी परम्परा के लिए भी 'लौकिक' शब्द का प्रयोग बहुत प्राचीन है। परन्तु प्रस्तुत संदर्भ में 'लोक' और 'लौकिक' एक विशिष्ट अर्थ रखने लगा है। यहां तक कि 'लोक' संज्ञा भी है और विशेषण थी। विशेषण के रूप में प्रयुक्त होने पर उसका अर्थ बहुत कुछ 'लौकिक' होने पर भी उससे एक भिन्न भाव का बोधक है।

आज 'लोक' शब्द अंग्रेजी के 'folk' का हिन्दी रूपान्तर है। स्वयं अंग्रेजी में भी यह शब्द जर्मन भाषा से आया है। जर्मन भाषा मे 'व' का उच्चारण 'फ' होता है। अतएव जर्मन भाषा का 'volk' शब्द ही अंग्रेजी में 'folk' बन गया है। जर्मन भाषा में 'volk' का अर्थ होता है मानव, जाति, वर्ग, पशुओं का समूह, सामान्य जन मानस, निम्न कोटि के मनुष्य, श्रमिक वर्ग के मनुष्य आदि आदि।

शिष्ट समुदाय की अपेक्षा निम्नस्तरीय समुदाय की भावना यही से अंग्रेजी में आई और अंग्रेजी का 'folk' ही हिन्दी मे 'लोक' रूप में अवतरित हुआ। यही कारण है कि 'लोक-साहित्य', 'लोक-गीत', 'लोकनाट्य', आदि शब्दों का प्रचलन ऐसे साहित्य गीत अथवा नाट्य के लिए होने लगा जो पांडित्यपूर्ण, अहंकार और शास्त्रीय नियम विधानो की विडम्बना की अपेक्षा सर्वथा स्वभाविक एवं बंधन मुक्त है परन्तु है स्वभाव जन्य। इस प्रकार के साहित्य एवं साहित्य विधाओं की एक निर्वाध धारा सभी संस्कृतियो में मिलती है अतएव 'लोक-साहित्य' को 'शिष्ट-साहित्य' अपने स्थान से हटाने मे समर्थ न हो सका। 'लोक-तत्वों' से अनुप्राणित 'लोक-साहित्य' लोक की अभिव्यक्ति का प्रवाहमान रूप है। आज के सभ्य संसार ने उसकी उपयोगिता को पहिचाना है और अत्यन्त विकासोन्मुखी विज्ञान एवं तकनीकी साहित्य के समक्ष भी उसके महत्व को स्वीकार किया है।

'लोक-संस्कृति' ही वास्तव में किसी राष्ट्र की मूल आत्मा है, उसके सांस्कृतिक विकास की प्रेरणा का आदि उद्गम है। अतएव स्पष्ट है कि कृत्रिमता से दूर, आडम्बर रहित सहज वातावरण में परिप्लावित लोक-साहित्य और लोक मनोरंजन का इतिहास स्वयं में एक महत्वपूर्ण विषय है।

लोक-नाट्य परम्परा का प्रयोग, 'लोक-धर्मी' विशेषण के रूप मे कदाचित भरत मुनि ने इसी अर्थ और इसी प्रसंग मे किया है और 'लोकधर्मी' नाट्य को 'नाट्यधर्मी' से पृथक माना है। उनके बताये हुए उपरोक्त लक्षणों से हमारी धारणा की पुष्टि होती है।

लोकधर्मी नाट्य लोक-समाज के मनोरंजन की एक सुन्दर और मनोनीत कड़ी माने जाते हैं। अतएव उनके इतिहास की जानकारी भी वैसी ही पुरानी होनी चाहिये जैसी पुरानी समाज मनोरंजन की पुरातन कहानी है।

३. प्राचीन मनोरंजन :

यदि शरीर के अस्तित्व के लिए भोजन सामग्री की आवश्यकता है तो मानव की भावनाओ की अभिव्यक्ति और रस सिंचन के लिए आमोद प्रमोद भी उसी मात्रा में आवश्यक है। संभवतः जब से मनुष्य ने सुसंस्कृत होकर अपना विकास किया तभी से मनोरंजनो की भी नीव पड़ी होगी। भारतीय मनोरजनों का इतिहास इस दृष्टि से एक महत्वपूर्ण प्रसंग है।

मोहन्जो-दड़ो और हड़प्पा से प्राप्त सामग्री के आधार पर इतिहास वेत्ताओं का कथन है कि सिन्धु-घाटी की सभ्यता के विकास में ऐसे साधन प्रस्तुत थे जिनसे तत्कालीन व्यक्ति एवं समाज के मनोविनोदो का एक अच्छा ज्ञान प्राप्त हो जाता है। उस समय के मनोरजनों मे निम्नलिखित मनोरंजन प्रधान थे :

१. दौड़-धूप
२. नृत्यगीत
३. आखेट
४. मिट्टी के खिलौनों द्वारा बाल मनोरंजन
५. चौसर या शतरंज आदि आदि

भारतीय सभ्यता की दूसरी सरणी वैदिक काल के नाम से प्रख्यात है। इसका आरंभ मोहंजोदड़ो और हड़प्पा के लगभग ११ हजार वर्ष बाद से होता है। वैदिक-काल के मनोविनोदो मे घुड़-दौड़, आखेट, नृत्यगीत, आख्यान वर्णन, नाटक, जादूगर के खेल आदि प्रसिद्ध हैं। ऋग्वेद में नर्तन का उल्लेख है[1]। जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण में नृत्य गीत का उल्लेख है।[2]

वैदिक साहित्य मे नाटको की विद्यमानता के सम्बन्ध मे कहीं स्पष्ट उल्लेख नही मिलता। पश्चिमीय कुछ विद्वान वार्तालाप युक्त ऋचाओं को नाटक जैसी ही मानते हैं। 'संवाद' नाम की ऋचायें कर्मकाण्ड से संबद्ध नाट्याभिनय के वाक्कांश ही माने गये हैं।

---

१. ऋगवेद १।१०।१. २. १।४२.

मैत्रायणीय उपनिषद में स्पष्ट रूप से नटो के विषय में कहा गया है कि वे अल्पकाल के लिए वेश-भूषा (क्षणवेशः) पहन कर अभिनय करते है।[1] अधिक नही तो पाणिनि के कथनानुसार शिलालीन और कृशाश्व के नटसूत्रों का अस्तित्व नाटक और उसके अभिनय का साक्षी है। अन्यथा नाट्यसूत्रों की आवश्यकता ही क्या थी ?

छंदस साहित्य के पश्चात पाली साहित्य की बारी आती है। पाली साहित्य मे अधिकांश रूप से बौद्धधर्म की नीति, आचार विचार और दर्शन का समावेश है। इन्ही प्रसंगों के संदर्भ में कहानियों का प्रणयन भी हुआ है। विशेष रूप से 'जातक' कथाओं में अनेकों प्रसंगों द्वारा जीवन के कटु एवं मधु अनुभवो की अभिव्यक्ति की गई है। जातकों के अध्ययन से पता चलता है कि उस समय मे भी अनेक मनोरंजन प्रचलित थे यथा आखेट, कुश्ती, पशु युद्ध, रास, मायाकारों या जादूगरो के खेल. शतरंज, नाटक, सुरा पान आदि। कणावेर जातक[2] में एक यायावर नाटक मंडली का वर्णन मिलता है। सामा (श्यामा) नाम की एक वैश्या एक चोर पर जो राजाज्ञा से शूली पर चढ़ाने के लिए बीच नगर से ले जाया जा रहा था आशक्त होगई। उसने उसे छुड़ा लिया। परन्तु वह चोर एक दिन उसे धोखा देकर उसका गला दबाकर और उसे मरी जान भाग गया। होश आने पर सामा को अपने प्रिय के वियोग ने बहुत सताया। वह उसे पुनः प्राप्त करने के प्रयत्न मे लगगई। उसे एक युक्ति सूझी। उसने नटों को बुलाकर कहा—

"ऐसी कोई जगह नही है जहां तुम्हारी पहुंच न हो। तुम ग्राम-निगम तथा राजधानियों में घूमते हुए तमाशा करते समय तमाशा देखने वालों के इकट्ठे होने पर पहले पहल यह गीत गाना—

यन्तं वसन्तसमये कणवेरेसु भानुसु।
सामं बाहाय पीलेसि सा तं आरोग्यमब्रवि॥

(तूने वसन्त समय मे लाल लाल कनेर के वृक्षों के बीच मे जिस सामा को हाथों से दबाया था, वह तुझे अपने आरोग्य की सूचना देती है।)

यदि आर्य-पुत्र उस परिषद में होगा तो तुम्हारे साथ बातचीत करेगा। उसे मेरा आरोग्य कहकर उसे लिवा लाना। यदि न आये तो मुझे सन्देशा भेजना।"

सामा को अपने आर्य-पुत्र का पता तो नटो द्वारा चल गया परन्तु वह उसके पास न आकर और कही दूसरे देश को भाग गया।

इस प्रकार इस नट मंडली द्वारा अभिनय की सूचना प्राप्त होती है। पाली साहित्य मे और भी कई स्थानों पर नाटक एवं अभिनय सूचक शब्दो का प्रयोग मिलता है यथा नाटक के लिए 'नटसमज्ज', प्रेक्षागृह अथवा रंगमंच के लिए 'रंग मंडल',

---

१. ४।२. २. जातक, तृतीय खंड, पृ० २२६, अनु० भदन्त आनन्द कौसल्यायन.

अभिनेता के लिए 'नट', नाचने वाले के लिए 'नत्तक' और तुगी बजाने वाले के लिए 'कुंभधुनिक'। प्राकृत साहित्य में भी नाटक विषयक उल्लेख प्राप्त है। यद्यपि जैन समुदाय के जो ग्रंथ अर्धमागधी प्राकृत में लिखे गये उनमें प्रधानता वैराग्य, संयम, तप, व्रत, ध्यान, आचार, भिक्षाटन आदि की है परन्तु जैन शास्त्रकारों ने नगर के ऐश्वर्य अथवा उत्सवादि का विवरण प्रस्तुत करते समय समाज में प्रचलित आमोद-प्रमोद के साधनो का भी उल्लेख किया है। जैन ग्रंथों 'अंगों' 'उपांगो' और 'नियुक्त्यादि' का संकलन हुआ। यदा कदा इनमें एवं इनसे सम्बन्धित अन्य सूत्र ग्रन्थों में मनोरंजन के साधनों का उल्लेख आता ही है। प्रश्न व्याकरण सूत्र (२।४।१०) में ब्रह्मचारियों को रास-लीला में सम्मिलित होने के लिए मना किया गया है। "औपपातिक सूत्र" मे चम्पानगरी के वर्णन प्रसंग में वहां नट (नाटक के अभिनेता), नर्तक (नाचने वाले), प्लवक (उछलकूद करने वाले), लासक (प्रेम सम्बन्धी या रास विषयक गीत गाने वाले), एवं लेख (बांस पर चढ़कर काम दिखाने वाले) आदि अनेक प्रकार के आमोद प्रमोद करने वालो का उल्लेख हुआ है।[१] 'आचारांग सूत्र'[२] में कहा गया है कि महावीर स्वामी जब एक देश में गये तो वहां के निवासियों ने उन्हें बहुत सताया परन्तु उन्होने उनकी परवाह न की और न मूक अभिनेता (आधय) आदि की कृतियों की ओर ही आंख उठाकर देखा।

'भगवती सूत्र' मे ३२ प्रकार की नाट्य विधियों का उल्लेख है।[३] यह नाट्य विधियां विशेष प्रकार की नृत्य विधियां थी।

'स्थानांग' में चार प्रकार के नाटकों का उल्लेख आया है—[४]

१. अंचित	२. रिभित
३. आरभट	४. भिसोल

इसी प्रकार चार प्रकार के अभिनय होने का भी साथ की साथ उल्लेख है—

१. दृष्टान्तिक	२. पांडशृत (पांडसुए)
३. सामंतोवनीक	४. लोक मध्यावसान ?

"राज प्रश्नीय" मे चार प्रकार की नाट्य विधियों का उल्लेख हुआ है।[५]

संस्कृत साहित्य में वर्णित मनोरंजन के साधन : मनोरंजन के साधनों का पुराना नाम 'क्रीड़ा' था। पाणिनी ने' मल्ल-क्रीड़ा, द्यूत-क्रीड़ा' आदि शब्द इसी अर्थ मे रखे हैं। महाभारत में 'क्रीड़ा' शब्द के अतिरिक्त 'विहार'[६] शब्द का भी प्रयोग हुआ। वात्स्यायन ने मनोविनोद के साधनों को 'क्रीड़ा'[७] कहा है। भासने अपने बाल-चरित नाटक में हल्लीसक नाम के नृत्य को 'क्रीड़ा'[८] नाम दिया।

---

१. सूत्र १ २. १।८।१।८. ३. ३।१, ११।१०;१४।८;१८।२.
४. ४।४।४० ५. ३।८ ६. ३।२३६।२२ ७. १।४।४२ ८. तीसरा अंक

संस्कृत वाङ्मय मे वर्णित विभिन्न मनोरंजन के साधनो–जिनमे द्यूत-क्रीड़ा वा कठपुतली का नाच, नृत्य (ताण्डव, हल्लीसक, रास आदि) एवं नाटक आदि सम्मिलित हैं–को देखकर आश्चर्य विमुग्ध हो जाना पड़ता है। ये मनोविनोद दो प्रकार के होते थे–सार्वजनिक एवं स्थानीय। संस्कृत साहित्य के इस सृजन-काल मे अर्थात सन् ५०० ई० तक अश्वघोष के नाटक और भरतमुनि के नाट्य-शास्त्र का प्रणयन एवं नाटक विषयक तत्वों का विवेचन तत्कालीन मनोविनोद के अस्तित्व एवं उसके सम्यक विकास का स्वतः प्रमाण हैं।

उत्तर संस्कृत काल (सन् ५००–१२०० ई०) तक भारत ने जो राजनीतिक एवं धार्मिक उथल पुथल का सामना किया वह किसी से छिपा नही है। वैदिक धर्म पर तांत्रिको का आघात इस युग की विशेष देन है। तत्कालीन साहित्य मे भी मनोविनोद के साधनों में नाटक की गणना होती थी। मानसोल्लास ग्रन्थ मे 'वाजि वाह्य-यालि-विनोद' वर्तमान 'Polo' का वर्णन वड़े ही स्पष्ट शब्दों मे पाया जाता है। 'रूपक' और 'उप-रूपकों' का विवेचन भी यह सिद्ध करता है कि नाटक दोनो प्रकार के होते थे–शिष्ट समाज के मनोरंजन के लिए भी और ग्रामीण जनता के मनोविनोदार्थ भी।

अतएव ये दोनों परिपाटियां बहुत प्राचीन समय से चलती आई है। भावाभिव्यक्ति का माध्यम चाहे संस्कृत रही, चाहे प्राकृत और पाली भाषा अथवा उनकी उत्तराधिकारिणी अपभ्रंश भाषायें, नाटक की दोनो परम्परायें सुरक्षित रूप से निरंतर चली आरही थी। डा० दशरथ ओझा ने 'रास' को हिन्दी का पूर्वज नाट्य इसी कारण माना है।

४. लोक-धर्मी नाट्य परम्परा :

प्राकृत एवं अपभ्रंश की अनेक 'रास' रचनाओं के आधार पर डा० दशरथ शर्मा ने लोक धर्मी परम्परा का लिपिवद्ध विकास सन् ९०५ ई० से माना है। उनका मत है कि सब से प्राचीन 'रास' का नाम "रिपुदारण रास" है और उसका रचनाकाल सन् ९०५ ई० है।[1]

डा० ओझा ने इस सम्बन्ध मे जो प्रमाण उद्धृत किये है उनके आधार पर इन रासों को नाटक न मानने के पक्ष मे केवल एक बड़ा तर्क यह है कि प्रायः वे सभी रास ग्रंथ 'गेय' हैं 'अभिनेय' नही है। उन्होंने यह प्रमाणित करने का प्रयत्न किया है कि 'गेय' रासों का अभिनय भी होता था और इसी लिए उन्हे लोक-नाटक मानना चाहिये! यद्यपि डा० ओझा के तर्क में वल है परन्तु सम्पूर्ण रूपेण उनके मत को मानने में वुद्धि और तर्क थोड़ा संकोच का अनुभव करता है इसलिए नही कि वे गीति-काव्य हैं वरन

१. रास और रासान्वयी साहित्य, पृ० १७६

इस लिये कि उनके शिल्प-विधान में जो वर्णन की प्रधानता और संवाद का अभाव है उसके कारण उन्हें वार्तालाप पूर्ण कैसे मान लिया जाय ?

यह तो संभव है कि वर्णन का गेय अंश किसी एक व्यक्ति द्वारा दर्शक समाज के सामने रखा जाय और वर्णनकर्ता को भी एक प्रमुख पात्र मान लिया जाय परन्तु नाटक के अभिनय मे पात्रों का परस्पर संवाद– चाहे वह जितना भी कम हो— अति आवश्यक है। डा० ओझा ने अपनी पुस्तक में जितने रासकाव्यो का संकलन किया है उनमे यह कमी बड़ी खटकने वाली है। अतएव अपनी समझ में उन्हे नाटक-काव्य नही कहा जा सकता। डा० ओझा ने गेय रचनाओं को नाटक मानने के लिए एक विचित्र तर्क दिया है। उनका कहना है—

"... ....'यदि श्रव्य-काव्य का अभिनय के रूप मे प्रदर्शन किया जाय तो दृश्य-काव्य मानने में क्या आपत्ति हो सकती है"[1] डाक्टर साहब ने अपने 'अभिनय' संबंधी विचार को स्पष्ट नही किया है। कहा नही जासकता कि डाक्टर साहब श्रव्य-काव्य के अभिनय प्रदर्शन को नाटक कैसे मानते है और वह कैसे संभव है ? यदि किसी उपन्यास को भी अभिनय करके रखा जाय तो क्या वह नाटक कहला सकेगा जब तक उसमें पात्रों का परस्पर वार्तालाप न हो अथवा समय एवं गति की एकता दिखाई न दे। सत्य तो यह है कि श्रव्य-काव्य को दृश्य-काव्य बनने के लिए तत्सम्बन्धी लक्षणों को धारण करना पड़ेगा। ऐसे प्रदर्शन अधिकतर संगीत और नृत्य के अन्तर्गत तो माने जा सकते है परन्तु नाट्य के अन्तर्गत मानने मे बड़ी दुविधा होती है। यदि डा० ओझा यह प्रतिपादित करते कि 'रास' वर्तमान ओपेरा (Opera) का एक रूप है तो फिर भी कुछ सीमा तक उनके मत को मान्यता दी जा सकती है। परन्तु शुद्ध ओपरा संगीत अधिक है नाट्य कम है। वर्तमान काल में इस अंग्रेजी शब्द ने नाट्य परक हमारी धारणाओं में एक भ्रम उत्पन्न कर दिया है और स्वांग या नौटंकी जैसी नाट्य विधाओं को संगीत-प्रधान होने के कारण हम Opera मानने लगे हैं। ऐसे समय हमारा विचार इस तथ्य की ओर नहीं जाता कि स्वांगो या सांगीतों में संगीत, नृत्य के साथ साथ संवाद का अंश पर्याप्त मात्रा में जुड़ा होता है और इसी लिए उसे गीति-नाट्य कहा जाता है।

५. हिन्दी लोक-नाट्य के विभिन्न रूप :

वर्तमान समय में हिन्दी में लोक-नाट्य की विभिन्न विधायें एवं रूप प्राप्य है यथा रास-लीला, राम-लीला; भगत, नौटंकी या स्वांग (सांगीत), ख्याल आदि। डा० सुरेश अवस्थी ने अपने शोध ग्रन्थ 'हिन्दी के विविध नाट्यय रूप' मे इस प्रसंग में पर्याप्त अध्ययन प्रस्तुत किया है और अद्यावधि प्राप्त प्रमाणों के आधार पर उनके ऐतिहासिक श्रोतों पर भी प्रकाश डाला है।

---

१. हिन्दी नाटक : उद्भव और विकास, प्रथम संस्करण पृ० ६१

मौखिक परम्परा के रूप मे लोक-नाट्य की गतिविधि बहुत पुरानी है परन्तु लिपिबद्ध इतिहास के रूप में उसका उल्लेख अकबर कालीन 'आइने-अकबरी' और औरंगज़ेब कालीन मौलाना 'ग़नीमत' की मसनवी 'नैरंगे-इश्क (र. का. सन् १६८५ ई.) में मिलता है।

आईने-अकबरी मे एक उल्लेख है—

"The Bhagtiya have Songs similar to above (Kirtaniya) but they dress up in Várions disguises and exhibit extra-ordinary mimicry.

Kirtaniya—are brahmans whose instruments are such as were in use in ancient. They dress up smooth faced boys as woman and make them perform singing the praises of Krishna and reciting his acts."[१]

Jadunath—Sırcar, Aiene-Akbari.
Vol. 3 Page 272

उपरोक्त उद्धरण से 'भगतिया' और कीर्तनिया दो लोक मनोरंजनो का उल्लेख स्पष्ट है। 'कीर्तनियां' मे संगीत की प्राधनता थी और 'भगत' मे सगीत के साथ साथ 'बहुरूपियापन' की। अकबर के समय का होने के कारण इस प्रचलन को सन् १६०० के लगभग मानना पड़ेगा।

इसी 'भगत' और 'भगत बाजो' का उल्लेख सन् १६८५ के लगभग जीवित मौलाना मोहम्मद अकरम 'ग़नीमत' के 'नैरंगे-इश्क' मे है। इस उल्लेख की चर्चा डा० रामबाबू सक्सेना ने अपने "उर्दू साहित्य के इतिहास" में की थी और तत्सम्बन्धी वास्तविक उद्धरण मैने अपनी पुस्तक 'हिन्दी नाटक साहित्य का इतिहास' (सन् १६४७) में दिया था। मसनवी 'नैरंगे-इश्क' का एक संस्करण लखनऊ के हुसनी प्रेस से हिजरी सन् १२६१ अर्थात सन् १८४७ ई० के लगभग प्रकाशित हुआ था।

पाठक उक्त उल्लेख 'हिन्दी नाटक साहित्य का इतिहास' पुस्तक में देख सकते है। आईने-अकबरी और नौरंगे-इश्क दोनों मे 'भगत' के लिए प्राय; एक ही कथन है। 'ग़नीमत' के आधार पर यह अवश्य पता चलता है कि "भगतबाज" अपनी मंडली लेकर स्थानो में घूमते फिरते थे। आज 'भगत' का प्रचलित रूप और उसकी प्रधानता आगरे में ही सर्वाधिक मिलने का प्रधान कारण मुगल काल मे राजधानी होने के कारण आगरा नगर की प्रधानता प्रतीत होता है। आगे चलकर राजनीतिक कारणों से 'बहुरूपियो' और 'भाडों' की मंडलिया अपनी कला के साथ अवध की ओर लखनऊ की

१, यह उद्धरण 'भातीय-साहित्य' पत्रिका के अप्रैल-जुलाई १६६० अंक में श्री अरविन्द कुलश्रेष्ठ के लेख 'आगरा का लोक नाट्य "भगत" मे पृ० ३७ पर दिया गया है।

नवाबो के आश्रय में, चली गईं । आज भी न्यूनाधिक यह नाट्य रूप अब भी लखनऊ और उसके प्रभाव से आसपास में जीवित है ।

६. हिन्दी स्वांग :

'स्वांग', 'सांग' और 'सांगीत' आज भी पर्यायवाची शब्द है । वैसे अपने प्राचीन काल में 'स्वाग' का प्रयोग किसी 'पात्र के स्वरूप' के लिए होता था । यथा-ब्रजवासी-दास (सन् १७६० ई०)

(१) "तबहिं स्वांग हंकार को पटते प्रकट्यो आय ।
वृद्ध विप्र के भेष सो निपटहिं तीव्र सुभाय ॥"

—प्रबोध चन्द्रोदय

(२) आचार्य सोमनाथ (सन् १७५२ ई०)

यौं कहि के नेपथ्य में एऊ दुरै दयाल ।
और स्वांग आगमन की भई तयारी हाल ॥

परन्तु 'स्वाग' का प्रयोग एक नाट्य रूप विशेष के अर्थ मे भी मिलता है—यथा "रसरूप" कृत "हास्यार्णव नाटक" में जो लगभग सन् १६८६ ई० मे लिखा गया था, सूत्रधार कहता है—

"महाराज तैलंगपति, अति प्रसिद्ध चहुँ दांग ।
कामरूप नट सौं कह्यो, हमहु देखावहु 'स्वांग' ॥"

इसी नाटक के समाप्त होने पर सूत्रधार पुनः कहता है—

"महाराज महिपाल मनि, जो कछु आयसु दीन्ह ।
अनयसिंधु नरनाथ को, सकल "स्वांग" मैं कीन्ह ॥"

आचार्य कवि सोमनाथ ने अपनी रचना 'माधव-विनोद' मे 'स्वांग' के स्थान पर 'ख्याल' शब्द का भी प्रयोग किया है—

"माधव अरु मालतीय के प्रेम-कथा कौ "ख्याल ।"
वरनत सो ससिनाथ कवि हुकुम पाय कैं हाल ॥

परन्तु यहां 'ख्याल' का अर्थ वह नाट्य रूप विशेष नही प्रतीत होता जो 'मारवाड़ी "ख्याल" कहलाता है और लोक-नाट्य परम्परा मे अपना निजी स्थान रखता है । संभवतः कवि ने 'ख्याल' का प्रयोग 'खेल' अथवा 'तमाशा' के अर्थ में किया है । ब्रजभाषा मे इसी अर्थ में सूरदास ने कृष्ण के मुख से कहलाया है—

"मैय्या मै नहिं माखन खायो ।
ख्याल परै यह सखा सबै मिलि मेरे मुख लपटायौ ॥"

अतएव 'ख्याल' और 'स्वांग' पर्यायवाची नही माने जासकते ।

७. 'स्वांग' का प्रयोग और इतिहास :

'स्वांग' या 'सांग' के प्रयोग के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ कहना बड़ा कठिन है। डा० दशरथ ओझा ने सिद्ध कवि कण्हपा (६ वी शताब्दी) का उद्धरण दिया है जिस में 'सांग' शब्द आया है—

"आलो डोंबि ! तोए सम करिव म सांग (सग)
निघिण कण्ह कपालि जोइ लांग ॥"

ओझाजी ने उक्त उद्धरण स्व० राहुलजी की "हिन्दी काव्य-धारा" के पृ० १५० से लिया है। परन्तु हमारे विचार में यहां 'सांग' का अर्थ 'संग' या सम्पर्क है 'सांग करना' कथवा 'खेल करना' नही है। यदि यह अर्थ होता तो ओझाजी का मनतव्य मान्य हो सकता था। वास्तव मे उक्त उद्धरण में पाठ मे 'साग' न होकर 'संग' ही हैं। परन्तु हरिहर प्रसाद शास्त्री द्वारा सम्पादित "वौद्ध गान ओ दोहा" नामक वंगाली पुस्तक मे ३० वें पद में यही पद दिया हुआ है। उसमे पाठ 'सांग' ही है। परन्तु उस पद की संस्कृत टीका से पता चलता है कि 'डोंबि' शब्द स्वयं योग का एक पारिभाषिक शब्द है और 'सांग' का अर्थ 'सम्पर्क' है।

अतएव उपरोक्त उद्धहरण 'सांग' की प्राचीनता की दृष्टि से ग्राह्य नही है।

कवीर (१५वी शताब्दी) की रचनाओ मे इस शब्द का प्रयोग अवश्य मिलता है—

(१) वाजीगर डंक बजाई। सम खलक तमासे आई ॥
वाजीगर "स्वांगु" सकेला। अपने रंग रवै अकेला ॥

—आदि ग्रंथ, रागु सोरठि ४

(२) कथा होय तंह श्रोता सोवैं, वक्ता मूंड पचाया रे।
होय जहां कही "स्वांग" तमाशा, तनिक न नींद सताया रे॥

(डा० ओझा द्वारा उद्धृत हि० ना० : उद्भव और विकास पृ० ३६)

कवीर के पश्चात मलिक मोहम्मद जायसी (१६वी शताब्दी) के पद्मावत में भी यह शब्द आया है—

(१) पातुरि एक हुति जोगि-संवागी।
साह अखारे हुँत ओहि मांगी ॥१॥
(२) भीख लेहुँ, जोगिनि ! फिरि मांगू।
कंत न पाइये किए सवागू ॥८॥

—पद्मावत : वादशाह दूती खंड

इस प्रकार मुग़लकाल तक उल्लेख रूप में इस स्वांग परम्परा का उल्लेख और प्रचलन तो उपलब्ध होता है परन्तु वास्तविक लिपिवद्ध स्वांग प्राप्त नही होते। यह

हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखको मे से केवल दो लेखकों ने ही 'रसरूप' के विषय में उल्लेख किया है। प्रथम उल्लेख फ़रांसीसी लेखक 'तासी' का है।[1] इस उल्लेख के अनुसार उसने हास्यार्णव नाटक की एक मुद्रित प्रति किसी संग्रह में देखी थी। इस संग्रह में कुल मिलाकर सात रचनायें थी और हास्यार्णव की क्रम संख्या तीसरी थी। इन रचनाओं के संकलन कर्ता श्री रघुनाथ के पुत्र गोकुलचंद (बाबू) थे। हास्यार्णव नाटक सन् १८६८ में बनारस में छपा था और ५२ अठपेजी पृष्ठों का था।

दूसरा उल्लेख मिश्र बन्धु विनोद भाग २ और भाग ३ में मिलता है।[2] इन उल्लेखो के हिसाब से एक 'रसरूप' का ग्रंथ रचनाकाल सन् १७५३ ई० है। इनकी रचनाओ में 'हास्यार्णव नाटक' का नाम नही है। अन्य किसी प्रकार का जीवन वृत्त भी प्राप्त नही है। दूसरे 'रसरूप' का रचनाकाल सन् १८६७ ई० बताया गया है। यह कवि पिपरी, राज्य छत्रपुर के निवासी थे। इनकी प्राप्त रचनाओ मे 'हास्यार्णव नाटक' का नाम नही बताया गया।

अतएव यह निष्कर्ष निकलता है कि गार्सा दा तासी के अतिरिक्त हस्यार्णव नाटक के लेखक और उसकी इस रचना का नाम किसी अन्य इतिहास लेखक ने नहीं लिखा।

''हास्यार्णव नाटक'' नामक जिस पुस्तक के आधार पर प्रस्तुत विवरण लिखा जारहा है वह बनारस की छपी है। पुस्तक के अन्त मे लिखा है—

''श्रीयुत बाबू गोकुलचंद की आज्ञानुसार पं० मन्नालाल ने वाराणसी संस्कृत यंत्रालय में छापी।............ ...संवत् १९२३ मिति कुआर वदी ४, बृहस्पतिवार''।

उपरोक्त उल्लेख से तासी द्वारा दिया गया विवरण बहुत कुछ मेल खाता है। दोनों में पुस्तक प्रकाशक के रूप मे गोकुलचंद नाम है और दोनों वाराणासी के यंत्रालय मे उसके छपने का उल्लेख करते है। अन्तर केवल प्रकाशन तिथि का है। तासी 'हास्यार्णव नाटक' का प्रकाशन सन् १८६८ में लिखते हैं और दूसरी प्रति से यह तिथि सन् १८६६ बैठती है। अतएव दोनों मे दो बरस का अन्तर है।

इस अन्तर के कारण तीन होसकते हैं—

१. दोनो प्रतिया भिन्न वर्षो में मुद्रित हुई।
२. तासी के उल्लेख में कहीं असावधानी से ग़लत तिथि लिखी रह गई।
३. तासी का उल्लेख किसी अन्य संस्करण का है।

गहराई मे जाने से पता चलता है कि 'हास्यार्णव' के दो संस्करण और निकले थे। एक संस्करण भारत-जीवन प्रेस बनारस से ही निकला था। इसका प्रकाशन काल

१. हिन्दुई साहित्य का इतिहास; अनुवादक डा० लक्ष्मी सागर वार्षणेय; पृ० ५५
२. पृ० ७०८, संख्या ८५० तथा पृ० ११५६–६०, संख्या २१४३

सन् १८८५ ई० है।[1] परन्तु तासी का उल्लेख स्पष्टतया इसके सम्बन्ध में नही होसकता दूसरी पुस्तक 'हास्यार्णव का एक भाण्ड' शीर्षक से सन् १८६१ ई० में खिचड़ी प्रेस मिर्ज़ापुर से प्रकाशित हुई थी जिसके लेखक के रूप में माधव प्रसाद का नाम दिया गया है।[2] तासी का अभिप्राय इस पुस्तक से भी नही होसकता। दुर्भाग्य से प्रस्तुत लेखक की दृष्टि में दोनो नही आई हैं। अतएव प्रस्तुत लेखक की पुस्तक और तासी की पुस्तक एक ही प्रतीत होती है।

'हास्यार्णव नाटक' का रचना काल : मुद्रित मे रचनाकाल के सम्बन्ध में निम्न दोहा लिखा है—

"अधिक तीस दै खण्ड सत, संवत् परम अनूप।
सनि अश्वनि दसमी विजय, रच्यो ग्रन्थ रसरूप ॥४॥

दोहे से स्पष्ट है कि लेखक ने उसका रचनाकाल सामान्य रूप से प्रचलित कालोल्लेखन शैली मे न देकर मिश्रित शैली में दिया है। अतएव समय निश्चित करने मे कुछ कठिनाई का सामना करना पड़ता है। 'सत' शब्द सात (७) की संख्या का वाचक है और 'खण्ड' छः अथवा नौ (६ या ९) की संख्या का द्योतक है। इसी प्रकार 'परम अनूप' एक (१) की संख्या का वोधक है। "अंकों की गति वाम होती है" इस सूत्र के आधार पर सत्रहसौ संवत सुगमता से निकल आता है। शेष रह जाते है दो अंक जो एकाई और दहाई स्थान के द्योतक हैं। इन दो अंको के निकालने में दोहे का तीसरा और चोथा चरण सहायक होता है। सम्वत् ऐसा होना चाहिये जिसमे विजय दशमी का पर्व आश्विन मास मे शनिवार के दिन पड़ा हो।

संवत् १७०० से लेकर १८०० तक ऐसे सम्वत, गणना के अनुसार इस प्रकार है—

संवत् १७०२, १७०६, १७०९, १७२६, १७२७, १७२९, १७४३, १७४६, १७५०, १७५३, १७७०, १७७३, १७७७, १७८०, १७९४ और १७९७.

अतएव इन्ही संवतों मे से कोई संवत 'हास्यार्णव नाटक' की रचना का काल संवत होना चाहिये। यदि 'खण्ड' का अर्थ छः लै और सत का सात तथा इन दोनों को जोड़कर तीस में अधिक करदें तो ६+७+३०=४३ की संख्या प्राप्त होती हैं और यदि खण्ड के लिए ९ की सख्या लें और शेष पूर्ववत रहने दें तो यह संख्या ४६ बनती है। दोनों को १७०० में मिलाने पर संवत् १७४३ या १७४६ संवत रचनाकाल निकलता है। अर्थात् यदि हमारा हिसाव ठीक है तो 'हास्यार्णव नाटक' का रचनाकाल सन् १६८६ या सन् १६८९ होना चाहिये ?

---

१. हिन्दी पुस्तक साहित्य; ले० डा० माताप्रसाद गुप्त पृ० ५४१. (प्रथम संस्करण)
२. वही पृ० ५४८. (,,)

यदि 'सत' को खंड और 'अधिक तीस' की संख्या में सम्मिलित न किया जाय तो रचनाकाल १७३६ या १७३९ आयेगा जो दोहे की दूसरी पंक्ति से मेल नही खाता। इसी प्रकार यदि खण्ड को नौ मानकर 'खण्ड सत' का अर्थ ६०० लगाया जाय तो भी संगत नही बैठती क्योकि ऐसी दशा मे रचनाकाल १६३० बनता है जो प्रस्तुत मुद्रण के बाद का समय है। 'खण्ड सत' का अर्थ ६०० मानकर रचना का संवत १६३० बन सकता है जिसका अर्थ होगा पुस्तक का रचनाकाल सन् १५७३ ई०। यदि 'अधिक तीस' के स्थान पर 'अधिक बीस' होता तो संवत १७२६ या १७२९ निकल सकता था जो गणना के अनुसार ठीक बैठ जाता। परन्तु पाठ मे ऐसा नही है।

अतएव सब संभावनाओं पर ध्यान देने के पश्चात यही परिणाम निकलता है कि पुस्तक का रचनाकाल संवत १७४३ या १७४६ ही मानना चाहिये।

यदि यह निष्कर्ष अमान्य नही है तो हिन्दी का सर्वप्रथम लोकधर्मी लिपिबद्ध स्वांग सन् १६८६-१६८९ मे लिखा गया।

सहास्यार्णव का कथानक : यह नाटक नौ अंकों में विभाजित है और प्रत्येक अंक के अन्त मे अंक में वर्णित कथानक का संकेत देदिया गया है। यथा—

१. इति श्री हास्य नाटक अनेक रूपनि रूपने रसरूप कृते नृप वंस प्रसंसा कथनम् नाम प्रथमो अंकः।
२. इति श्री ....वंधुरा आगमनो नाम द्वितीयोअंकः।
३. इति श्री.... .... विश्व भंड कायाकल्पोपाय निदेस कथनं नाम त्रितीयोअंकः।
४. इति श्री ....व्याधि-सिन्धु गुण कथनं चतुर्थो अंकः।
५. इति श्री......................मदनांकुस न्याय कथनं नाम पंचमो अंकः।
६. इति श्री......... ....चौर भय वर्ननं नाम षष्टम अंकः।
७. इति श्री ....अच्युतानंद दीक्षितादि वार्ता कथनम् नाम सप्तमो अंकः।
८. इति श्री ....विश्व भंडादि विवाह वार्ता कथनम् नाम अष्टमो अंकः।
९. इति श्री......................अनयसिंधु समत्थ कौतुक कथनं नाम नवमो अंकः।

नाटक के प्रमुख पात्र इस प्रकार हैं—

अनय सिंधु—अमरजादपुरी के राजा और नायक

कुमति वर्मा—अनयसिंधु का मंत्री

विश्वभंड—कामतंत्र पंडित एक विलासी व्यक्ति

कलहांकुर —विश्वभंड के दुर्मति शिष्य
व्याधि-सिन्धु —रोगपुर के निवासी कायाकल्प के विशेषज्ञ
मदनांकुस —एक नगरवासी
अच्युतानंद दीक्षित—
रक्त कल्लोल —एक नापित
मिथ्याराव —एक नगरवासी

स्त्री पात्र :
वंधुरा —एक वृद्ध गणिका
मृगांक लेखा —वंधुरा की नव यौवना पुत्री

हास्यार्णव की कथा-वस्तु : हास्यार्णव नाटक की कथावस्तु बहुत सीधी और सरल है। नाटक का उद्देश्य है यह दिखाना कि नायक अनयसिंधु की मूर्खता और उसको मंत्रणा देने वाले व्यक्तियो के कारण अनयसिंधु किस प्रकार स्वजनो सहित मृत्यु को प्राप्त हुआ।

कवि रसरूप ने आरंभ मे वताया है कि तैलंगपति ने कामरूप नामक नट से कहा कि वह स्वांग द्वारा अनयसिंधु के वंशनाश को दिखावै।

"अनयसिंधु को कौन कुल, कीजहु वर्नन वंस।
कैसे कर्यो अनीति वहु, केहि विधि भयो विधंस ॥१०॥

आज्ञानुसार नट ने पहले अंक मे अनयसिंधु के वंश का वर्णन किया। तत्पश्चात नट ने अपनी नटी बुलायी। कवि ने नटी के सुन्दर स्वरूप एवं नटी-पैज का वर्णन करने के उपरान्त स्वांग की भूमिका आरंभ करदी।

सर्व प्रथम 'अजथार्थवादी' प्रतिहार का प्रवेश हुआ और उसने राजा अनयसिंधु के आगमन के सत्कार में की जाने वाले कार्य-व्यापार की एक पूरी सूची प्रस्तुत करदी। उसका कथन समाप्त होते ही कंठ मे परिकर वांधे, कटि मे मुक्तामाल पहने, श्याम छत्र सिर पर धारण कर और दिन में ही जलती हुई मशाल के प्रकाश मे राजा अनयसिंधु ने रंगमंच पर प्रवेश किया और लोहे के सिंहासन पर आकर बैठ गये।

सिंहासनारूढ़ होते ही उनके दूत ने प्रवेश किया और शिकायत की कि प्रजा प्रभु की आज्ञा के विपरीत कार्य करती चली जा रही है यथा—

'अंजन नैन, जंघ में नाहीं। जावक पग, न देहि मुख मांहीं॥
वंदन भाल, नाभि नहिं साधे। कटि किंकनि, ग्रीवा नहिं वांधे॥१६॥

आदि, आदि। जो कुछ न्यायसंगत व्यवहार था उसे राजाज्ञा के विपरीत बताकर दूत अनयसिंधु के राज्य की दुर्व्यवस्था का आभास देता है।

यह वर्णन सुनते ही राजा अपने मंत्री 'कुमति वर्मा' को आज्ञा भंग करने के हेतु दण्ड की व्यवस्था करने का आदेश देता है। कुमति वर्मा प्रविष्ट होकर इस विपरीतता का नया कारण बताता है और कहता है—

"फेरति हैं मनिका गनिका कहि राम जनीन में जाति हमारी।
छूटि गये रसगीत सबै रसना अब आरति गावन हारी॥
ऐसी अनीति लखी न सुनी 'रसरूप' नई यह रीति निहारी।
या पुर में हम लोग के भाग रही बचि वंधुरा एक विचारी" ॥२५॥

इसी वंधुरा गनिका के घर मे राजकाज सम्बन्धी सभा करने का विचार स्थिर हुआ और सभामंडली उसके स्थान को पधारी।

घर पहुंचते ही वंधुरा को 'मां' कहकर प्रणाम किया। वंधुरा ने राजा को पलंग पर बिठाते हुए आर्शीवाद दिया—

"कन्या सुर नर नाग जेहि सम और न धन्य।
सो मृगांकलेखा रहौ तुम पर सदा प्रसन्न ॥३१॥

इस आर्शीवाद के साथ ही साथ दूसरा अंक भी समाप्त हुआ।

तीसरे अंक का आरंभ वंधुरा के नृत्य से हुआ। इसी बीच एक अनाथ याचक का आगमन हुआ और उसने दान की प्रार्थना की परन्तु राजा ने उसे दान न देकर सूखा टाल दिया। उसके बाद राजा ने वधुरा से मृगाकलेखा के विषय मे पूछा—

"कहं मृगांकलेखा सुकुमारी ? सुमुखि मनोहर सुता तुम्हारी !
आजु वाहि इन आंखिन देखे; जीवन जन्म सुफल करि लेखे ॥७॥

वंधुरा ने उसका शृङ्गारपूर्ण सौंदर्य वर्णन करके परिचय दिया और मृगांकलेखा ने मंच पर प्रवेश किया। उसके आते ही राजा अनयसिंधु ने उसे—

"अति ही निसंक नृप भरेऊ अंक" ॥१॥

राजा-वंधुरा का पुनः संवाद हुआ और वंधुरा ने पुत्री को विश्वभंड पंडित द्वारा काम-तंत्र पढ़ाने की इच्छा प्रगट की। राजा ने भी उनके दर्शन करने की इच्छा प्रगट की और विश्वभंडजी मंच पर आगये ? उनके आगमन की सूचना 'सांगी' द्वारा दी गई है। उनके विलासी लक्षणो की गाथा भी उसीने कहकर विश्वभंड का परिचय सामाजिकों को दिया है।

वंधुरा ने विश्वभड की प्रशंसा कर उन्हे बैठने के लिए आसन दिया। विश्वभंड ने भी वंधुरा को 'माय' कहकर आशीस दिया। राजा ने भी 'विश्वभंड पंडित बड़े वेस्या भक्त सुभाव' कहकर उन्हे प्रणाम किया। यह देखकर विश्वभंड ने अपने शिष्य कलहाकुर से राजा को आर्शीवाद देने के लिए कहा। कलहांकुर बोला—

'दुर्मति, दुर्गति, व्याधि, भय, पाप, सत्रु, दिन सिद्धि ।
होउ सदा महाराज के सात वस्तु की वृद्धि" ॥३२॥

तत्पश्चात कलहांकुर ने मां वंधुरा के पैरो पड़कर साष्टांग प्रणाम कर (उसके वस्त्र के अंदर झांक कर) अट्टाहास किया । फिर कभी वंधुरा की, कभी मृगांकलेखा की, कभी विश्वभंड की उक्तियां होती रही । अन्त में विश्वभंड ने राजा से कहा—

"तदपि एक विधि सुलभ अति व्याधिसिधु को लाय ।
महाराज करि दीजिये, कायाकल्प उपाय" ॥४६॥

इसी उक्ति पर तीसरा अंक समाप्त हुआ ।

चौथे अंक का उद्‌गम व्याधि सिन्धु विषयक राजा अनर्यसिंधु विषयक जिज्ञासा से होता है । विश्वभंड उनका समाधान करते है । समाधान करते ही व्याधि-सिन्धु प्रवेश करते है और अपना परिचय स्वयं देते हैं—

"नेक न वार लगै असुनी के कुमार मरै उपचार हमारे" ॥७॥

इसके वाद विश्वभंड, और व्याधिसिन्धु का परस्पर कथोपकथन होता है । वंधुरा अपनी कायाकल्प का प्रस्ताव स्वयं व्याधिसिन्धु के सामने रखती है । व्याधिसिंधु उपाय वताते है—

लोह कड़ाह में के तिल तैल तुचा सिगरी जब जाति जराई ।
पाछि कै पाछि भरै विष पुंज करै तेहि मर्दन मास अढ़ाई ॥
नौ दिन वांधि करै घट जंत्र ज्यों वैद्यक तंत्र में बात बताई ।
या विधि जाय विलाय जरा तन आवै तुरंत नई तरुनाई ॥१२॥

इस पर मृगांकलेखा स्वयं वैद्यराज पर ही इस उपचार का प्रयोग करने के लिए कहती है परन्तु विश्वभंड व्याधिसिन्धु की कुशलता की प्रशंसा करते जाते है और कहते हैं कि—

"असली पद पद काटि निवारैं नैन-पीर में नैन निकारैं ।
मृतक आपने सीस उठावें मुदित मसान भूमि पहुँचावें" ॥१६॥

पुनः विश्वभंड और व्याधि सिन्धु के परस्पर संवाद से वैद्यजी के चरित्र पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है । उन्ही के गुणगान पर यह अंक समाप्त होता है ।

पांचवें अंक में सर्वप्रथम भौतिक पिशाच का आगमन होता है । सामाजिक उसकी उक्तियों का स्वाद चखते हैं, तत्पश्चात रक्तकल्लोल नापित प्रवेशकर अपने गुणों का बखान कर अपना परिचय देता है । फिर मुग्ध-वनिक, आकर नापित की शिकायत करता है—

"कर पग की अंगुरी हई, गई सीस की खाल ।
नाक हीन आनन कियो, यह नापित चांडाल" ॥१४॥

इस शिकायत का उत्तर मंत्रीवर कुमति वर्मा इस प्रकार देते हैं—

"खरच मिटायौ क्षौर को, कंटक लिये बटोरि ।
राखो नख को नाम नहिं, वार न जमै बहोरि ॥"

इसी समय मिथ्यार्नव का आगमन होता है और उनके बाद में मदनांकुश का। फिर तो निरंकुशा किंकरी, दुर्मुखसुपत्री आदि अनेकमात्र आ आ कर अपनी काम दशा का वर्णन करते है। सब का न्याय मदनाकुंश महाराज के भिन्न आदेशों द्वारा होता है। इसी कारण इस अंक का नाम मदनांकुस न्याय कथन रखा गया है।

हास्यार्णव नाटक का छटा अंक चौर-भय वर्णन है। राजा अपने सचिव से अनेको प्रकार के चोरो का वर्णन करता है। इस पर मंत्री रन जंक, सस्त्र संक, दुर्वल घातक, जलपना और रक्तहत नामक पांच वीरो को उन चोरों को दंड देने की आज्ञा देता है।

इसी अवसर पर विषयान्तर होता है। वंधुरा मंत्री से पूछती है—

"कहहुँ नाथ ! रानी कर भाऊ। जेहि लगि भयो सोच वस राऊ॥
जाके हेत पलक नहिं लाये। पांच वीर वानैत बुलाये" ॥२६॥

कुमति मंत्री रानी का वर्णन करता है और उस वर्णन को सुनकर वंधुरा अपनी और अपने घर में होने वाली सभा की सराहना करती है। तभी श्री अजोगवल जोतषी आकर राजा को आर्शीवाद देते हैं। तत्पश्चात कलहांकुर और अजोगवल में ठनाडनी का संवाद होता है और अजोगवल के वाक्य पर अंक की समाप्ति होती है।

कथानक को आगे बढ़ाने में यह अंक कुछ भी सहायक प्रतीत नही होता।

सातवें अंक मे अंधकाव्य का वर्णन है तथा विभिन्न शृंगार परक उक्तियो का कथन मात्र है जो कतिपय पात्रो के चरित्र का द्योतक है। कथानक में नितान्त सहायक नही है।

आठवें अंक में विश्वभंड का विवाह मृगांक लेखा से करा दिया गया है। तत्पश्चात राजा अपनी सभा समाप्त कर अपने घर की ओर चले गये हैं। नवें अंक में राजा रानी का संक्षिप्त संवाद, राजा का आखेट को जाकर वापिस आने पर उनके साथ नट, चित्रकार, लेखा वैश्या आदि की उक्तियां वर्णित की गई है। राजा चित्रकार को सूली देने की आज्ञा देता है परन्तु इस कर्म मे शुभ फल प्राप्त होने की बात सुनकर स्वयं ही सूली खाकर मर जाता है। कथानक यही समाप्त होता है।

तत्पश्चात कामरूप नट तैलंग महीपति से कहता है—

"महाराज महिपाल मनि जो कछु आयसु दीन्ह।
अनयसिधु नरनाथ को सकल स्वांग मैं कीन्ह" ॥

'हास्यार्णव' के इस कौतुक को देखकर राजा तैलँग राजपाट छोड़ सन्यासी होजाता है और कवि अपनी थोड़ी सी उक्तियों में ज्ञान उपदेश देकर स्वांग को समाप्त कर देता है।

सांगीत का शिल्प-विधान : सांगीत में वाद्ययंत्र वालो के अतिरिक्त सांगी का महत्व तो रहता ही है क्योंकि अधिकांश वर्णन उसी के द्वारा संगीतमय किया जाता है परन्तु पात्रों का प्रवेश, प्रस्थान, परस्पर वार्तालाप भी अवश्य ही रहता है। उक्त सांगीत में भी अधिकांश भाग सांगी का ही है। पात्रों के प्रवेश और कभी कभी उनका परिचय भी वही देता है यथा अन्यसिंधु के प्रवेश और उनके चरित्र के विषय में वह कहता है—

परिकर बांधे कंठ में, कटि में मुक्तामाल।
स्याम छत्र सिर पर धरै, दिनहूँ बरत मसाल ॥११॥
विसमित बैठे लोह के, सिंहासन पर आय।
कहत काम संग्राम ने, विघनो लिये बचाय ॥१२॥

दोहे के अन्तिम पाद मे अनयसिंधु की कामुकता का आभास देकर लेखक ने सांगी द्वारा अपने सांगीत के विषय की प्रधान प्रसंगयोजना का संकेत देदिया है। अपनी उसी भावना का अधिक उन्मेषण लेखक ने आगे वाली घनाक्षरी में करवाकर नायक की प्रकृति को सामाजिकों के सामने स्पष्ट कर दिया है। अपनी रानी के दुकूल को ही कवच बनाकर काम के प्रहार से बचने वाले राजा अनयसिंधु का बड़ा ही यथार्थ रूप अंकित किया है—

"किंसुक नख-छत सो कौन दशा जानै,
कौन कहा वेधि जात्यो वान कुंदन के फूलको।
चीर जाते केतकी के आरे तें अखिल अंग,
सहतो प्रहार आम मंजरी के सूल को॥
कवि 'रसरूप' ऐसे दारुन वंसत बीच,
हियो हहरात हन्यो कोकिला की हूलको।
काम की कला तें कहूं वांचते न केहूं विधि,
कवच न होतो जो पै रानी के दुकूल को" ॥१५॥

परन्तु उपरोक्त उदाहरण से यह न समझ लेना चाहिये कि पात्र-परिचय का कार्य केवल सांगी ही करता है। कही तो पात्र स्वयं अपना परिचय देते है। राजसभा मे आकर एक याचक कहता है—

"सुन्यो देत नृप जाचकन, वज्रपात को दान।
हम अनाथ अति दीन हैं, होउ नाथ कल्यान" ॥२३॥

अथवा इसी अंक मे विश्वभँड का शिष्य कलहांकुर अपना परिचय देता हुआ महिपाल को आशीर्वाद देता है—

"वैर बीज वसुधा कुमति, इरखा बरखा पूर ।
आसिष देत महीप कों, हम हैं कलहांकुर" ॥३.३१॥

चौथे अंक में व्याध-सिंधु का परिचय विश्वभंड द्वारा लेखक ने दिलवाया है—

" ....
....

रहैं रोगपुर में सदा अहै सत्य संकल्प ।
व्याधि-सिन्धु तिनके तनय करें जु कायाकल्प ॥४.६॥

और भी अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं । अतएव एक विशेपता "हास्यार्णव" की यह है कि इसमे पात्रो का परिचय यातो सांगी करता है, अथवा पात्र स्वयं देता है अन्यथा कोई अन्य पात्र इस कार्य को सम्पन्न कर सामाजिको को पात्रों के विपय मे ज्ञान करादेता है ।

कथानक के विस्तार में भी लेखक ने यही प्रणाली अपनाई है । सांगी, पात्र और परस्पर वार्तालाप कथासूत्रों को प्रगट करता है और फिर वही परस्पर सम्बद्ध होकर पूर्ण सागीत की कथा-वस्तु का निर्माण करते हैं ।

सांगीत का एक प्रधान तत्व संगीत और नृत्य भी है । प्रस्तुत सांगीत में नृत्य का आधिक्य नही है । कम से कम उसका संकेत भी नही है एक दो स्थानों को छोड़कर । परन्तु संगीत की तो आदि अंत तक भरमार है । यथा संभव छोटे छोटे छंदों—दोहा, सोरठा, तोमर, बरवा, काव्य, मधुभार, तोटक, का प्रयोग अधिक किया गया है जिससे गाने वाला अपने गले को पर्याप्त विश्राम दे लेता है परन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं है कि सांगीत मे बड़ी तानो का अभाव है । सवैया, धनाक्षरी, मालती कला और किरीट आदि छंदों में संगीत का यह पहलू भी निखर कर आया है । रसरूप की विशेपता यह है कि वर्णन करने में उन्होंने कला छंद का अधिक उपयोग किया है जिसके कारण संगीत की विविधता से सांगो वच गया है और सामाजिकों को भी एक ही स्वर वारवार सुनने के कारण कथानक को समझने मे सुगमता होजाती है ! अवश्य इस सांगीत में किसी गेय पद का अभाव है । संभवतः उसकाल मे गेय पद सम्पन्न सांगीत परिपाटी चालू नही थी ।

संक्षेप में रचनाकाल एवं शिल्प-विधान दोनों दृष्टि से 'हास्यार्णव नाटक' एक महत्वपूर्ण रचना है ।

(अ) माधव-विनोद :

नाम करण : पुस्तक के नाम के सम्बन्ध मे लेखक का कथन है—

"माधव-विनोद इहि ग्रन्थ नाम । सुनि रीझें जाको वुद्धि धाम ॥
नर प्रेमी विनु समझे न याहि । हौं कहत सत्य उर मै उछाहि" ॥१.२२॥

रचना का कारण :

कही वहादुरसिंह ने एक दिना सुख पाय।
'सोमनाथ' या ग्रन्थ की, भाषा देहु वनाय ।।१.२०।।
माधव अरु मालताय के प्रेम कथा कौ ख्याल ।
वरनत सो शशिनाथ कवि, हुकम पाय कै हाल ।।१.२१।।

उपरोक्त पंक्तियो से स्पष्ट प्रगट है कि लेखक की इच्छा भवभूति के मालती-माधव नाटक का अनुवाद करने की नही थी। अवश्य उस प्रचलित कथा को "ख्याल" का रूप देकर भाषा मे लिखना था। अपने आश्रयदाता वहादुरसिंह के कहने से कवि ने उनकी इच्छा पूर्ति की और "माधव-विनोद" उसी का परिणाम है।

आश्रयदाता वहादुरसिंह : अपने आश्रयदाता के सम्बन्ध में कवि सोमनाथ ने लिखा है कि—

२. ता भाऊ के प्रगटे हुव वदनसिंह वडभाल ।
ब्रजमंडल कौ राज सब दीनौ जाहि गुपाल ।।६।।
३. वदनसिंह महाराज के सुन्दर पुत्र अनेक ।
जेठौ सूरजमल्ल है पडित चारु विवेक ।।९।।
सोदर सूरजमल्ल कौ श्री परताप प्रचंड ।
महि मंडल में जगमगै जाकौ सुजस अखंड ।।१०।।
४. सिंह वहादुर नाम ताकौ पुत्र सुहावनौं ।
सकल गुननि कौं धाम, मोहन मूरति कामसौं ।।१४।।

इन्ही वहादुरसिंह को कवि ने अपना आश्रयदाता मानकर उनकी प्रशंसा में ५ छंद लिखे हैं जो यथाशैली अतिशयोक्ति से परिपूर्ण है। उनमें से एक यहां उद्धृत किया जाता है—

सुन्दर आनन कौ अवलोकि प्रफुल्लित अम्बुज पुंज विसारियै ।
जुद्ध मै पत्थ समान समत्थ गनेस ज्यौं वुद्धि विलास विचारियै ।।
और चली श्री वहादुरसिह के तेज करालनि सत्रु प्रजारियै ।
दान अरत्थ कहा कहिये जिहि हत्थनि पै कल्पद्रुम वारियै ।।१७।।

रचना-काल :

"ठारहसै अरु नव वरस, संवत आश्विन मास ।
शुक्ल त्रयोदशी भृगु दिनां भयौ ग्रन्थ परकास ।।१०.१५६

संवत १८०६ अथवा सन् १७५२ ई० में इस ग्रंथ की रचना हुई। इस प्रकार य रचना अमानत कृत 'इंदर-सभा' (र० का० १८५३ ई०) से एकसौ वर्ष पहिले क. नना है।

माधव-विनोद का परिचय : इस रचना का विषय मालती और माधव की प्रेम कथा है। समस्त रचना १० अंकों में विभाजित है। प्रस्तुत पुस्तक से प्रत्येक अंक का परिचय प्राप्त हो सकता है अतएव उसे लिखना आवश्यक नही है।

शिल्प-विधान : माधव-विनोद की रचना संस्कृत नाट्यशास्त्र की प्रचलित परम्पराओं पर हुई है। आरंभ मे नान्दी, सूत्रधार द्वारा वंदना, सूत्रधार और पारिपार्श्विक संवाद है। पर्याप्त विस्तृत विष्कम्भक मे स्वांग की कथावस्तु का सार योगिनी कामंदकी एवं उसकी शिष्या अवलोकिता के परस्पर संभाषण द्वारा देदिया गया है। इस सुविधा के कारण सामाजिको मे रसोद्रेक की कोई बाधा उत्पन्न नही होपाती। यथास्थान स्वांग-परिपाटी के अनुसार रंगा ने पात्रो के परिचय भी देदिये है। मुख्य पात्रो के रूप वर्णन कर उसने उनके प्रति दर्शकों की सहानुभूति भी प्राप्त करली है।

किस किस स्थान पर किस किस ने नृत्य किया है इसका उल्लेख भी पात्रो के प्रवेश एवं प्रस्थान सहित रंगा के द्वारा देदिया गया है।

कही कही घटनाओ अथवा पात्रों के काव्यमय वर्णन बड़े मनोहारी है। कवि ने प्रायः वर्णन प्रधान अंश पावकुलक और तोमर छंदो मे तथा हृदयगत भावो की व्यंजना सवैया और कवित्त मे की है। संगीत की दृष्टि से यह व्यवस्था बड़ी समुचित है।

'हास्यार्णव' और 'माधव-विनोद' दोनो की भाषा ब्रजभाषा है। बड़ी मधुर और सरल भाषा मे दोनों रचनायें लिखी गई है। कवि सोमनाथ की कविता अवश्य अधिक उत्कृष्ट है। परिपाटी दोनों मे प्रायः समान है। रंगा का स्थान दोनो में प्रधान है। माधव-विनोद में नृत्य की मात्रा हास्यार्णव से बहुत अधिक है।

प्रबोध-चन्द्रोदय : (र० का० सन् १७६० ई०) ब्रजवासीदास के जीवन वृत्त का ज्ञान बहुत ही कम है। मिश्र-बन्धु-विनोद एवं साहित्य के अन्य इतिहासकारों ने उन्हें नगण्य सा साहित्यकार मानकर छोड़ दिया है। परन्तु नाटकसाहित्य की दृष्टि से उनकी रचना का बड़ा महत्व है।

रचनाकाल : 'प्रबोध-चन्द्रोदय' का रचनाकाल लेखक ने इस प्रकार दिया है—

ऋषि[७] शशि[१] धन[८] गणपति[१]—रदन सम्मत सरस विलास।
ता में यह भाषा करी जन ब्रजवासीदास ॥१.२३॥

अर्थात् सम्वत् १८१७ अथवा सन् १७६० ई०

रचना को साहित्य की कौन सी विधा के अन्तर्गत माना जाय? इस प्रश्न का उत्तर लेखक के शब्दों मे ही यह है—

१. नाम राख्यो ग्रन्थ को परबोधचन्द उदोत।
सुनत मधुरे श्रवण को अति समुझिते सुख होत ॥

मथि निकास्यो वेद निधितें सुधा को सो सोत ।
रीत नाटक तासु पाठक शिप्य कीन्हों पोत ॥१–१५॥

२. कृष्णदास भट शिष्य सो कहत कथा प्रबोधि ।
नट लीला के व्याज करि परम तत्व मय शोधि ॥१–२४॥

३. प्रथम सभा मधि आय कै, लगे करन दोउ नृत्य ।
वाज उठे वाजे सवै, गाय उठे नट भृत्य ॥१–६०॥

४. ऐसे कहि रति पानि गहि गयो काम को भेश ।
सुमति सहित आयो सभा स्वांग विवेक नरेश ॥१–१२३॥

५. यहि विधि मति सों मंत्र करि गयो विवेक भुआल ।
गाय उठे नट शिष्य तव, वाजे तंत्री ताल ॥१–१७७॥

६. वहुरि सभा के मद्धि नट, कीन्हों निर्त्त सुदेश ।
भयौ प्रसन्न चरित्र लखि, कीरत व्रह्म नरेश ॥६–१६२॥

उपरोक्त उद्धरणो से स्पप्ट है कि प्रस्तुत रचना प्रधानतया 'सुनने' के लिए है; नाटक नही वरन 'नाटक की रीति' से वनाई गई है; 'नट-लीला' अर्थात नटों द्वारा जिसका प्रदर्शन होता हे ऐसी लीला है; नृत्य इस कृति का अनिवार्य अंग है; रगमंच पर पात्रो के प्रवेश एवं प्रस्थान की सूचना सामाजिको भी दीजाती है, और पात्रो को आधुनिक भापा मे 'पात्र' विशेप न कहकर 'अमुक पात्र का स्वाग' कहा जाता है ।

ये प्रणाली 'स्वांग' या 'सागीत' की ही है । अतएव व्रजवासीदासजी की रचना एक 'सांगीत' है जिसका मूल आधार संस्कृत का नाटक 'प्रवोध-चन्द्रोदय' है ।

ग्रंथ रचना का इतिहास नामकरण और उद्देश्य : कवि ने ग्रंथोत्पत्ति के विपय में लिखा है—

दक्षिन भूमि भयौ एक पंडित । भक्तिज्ञान विद्या गुण मडित ॥
परम दयाल दीन हितकारी । जीवन को पूरण चितकारी ॥
शिष्यन करै ज्ञान उपदेशा । जनम मरन जिहि मिटै कलेशा ॥
मोह तिमिर नाशक जिमि धामा । कृष्णदास भट अस ता नामा ॥
तिन के शिष्य एक द्विज वालक । गुरु कृपा सरनागत पालक ॥
दया भाव तापर अति भारा । भवसागर तै चहै उवारा ॥
ताहि गुरु वेदान्त पढ़ावै । भक्ति ज्ञान वैराग दृढ़ावै ॥
सो किशोर वय काम नवीना । शृंगारादिक रस मन भीना ॥
गुरु उपदेश न मन मै आवै । जिमि ज्वर ग्रसित सुनाज न भावै ॥
जो मांगे तौ कुपथ खटाई । जाके खात ताप अधिकाई ॥
ताहि वैद समरत्थ सुजाना । चूरण देत [illegible] पाना ॥
जाके खात होय ज्वर नाशा । औगुन अमल न वर्ष का [illegible] ॥१–१३॥

तैसे गुरु सुजान, कीन्हों ग्रन्थ नवीन तव ।
कला विदूषक खान, ग्रर्थ सिद्ध वेदान्तमय ॥१–१४॥

संगीतिका छंद

नाम राख्यो ग्रन्थ को परबोध चन्द उदोत ।
सुनत मधुरे श्रवण को अति समुझिते सुख होत ॥
मथि निकास्यों वेद निधितें सुधा को सो सोत ।
रीत नाटक तासु पाठक शिष्य कीन्हों पोत ॥१–१५॥
सतसंग में ऐसे सुनी मै ग्रंथ की उत्पत्ति ।
रचना विचित्र प्रवन्ध सुन्दर वस्तु वरनन सत्ति ॥
हानि अह मम मोह प्रापति ज्ञान की सम्पत्ति ।
सुनै समुझै पढ़ै रुचि सौं मिटे जगत विपत्ति ॥१–१६॥

दोहा

सो तो वाणी संस्कृत, प्राकृत करि न विचार ।
ताके समुझन को चही, विद्या बुद्धि अपार ॥१–१७॥
वलीराम ताको करी, भाषा यमन किताव ।
सोऊ विद्या अति कठिन, समुझि न परै सिताव ॥१–१८॥
मित्र एक ऐसे कही, जो यह भाषा होय ।
सरल होय तो सवन को, सुनि सुख पावै लोय ॥१–१९॥
ताते ये भाषा करी, अपनी मति अनुसार ।
सत संगत परताप ते, विपुल छन्द विस्तार ॥१–२०॥

सतसंगत के प्रताप से अनुप्राणित यह ग्रंथ लेखक की 'अपनी मति अनुसार' लिखा गया है और उसका उद्देश्य है जगत के दुखों से छुटकारा पाकर पाठक को सुख की प्राप्ति करना ।

रचना की कथा-वस्तु :

समस्त नाटक छः अंकों में विभाजित है जिसका सार इस प्रकार है—

अंक १—गुरु-महिमा और गुरु कृपा प्राप्ति की आकांक्षा—छंद १–१२
ग्रन्थोत्पत्ति और उद्देश्य —छंद १३–२२
रचनाकाल —छंद २३

कृष्णदास भट्ट का शिष्य से नटलीला के वहाने कथा कहना २४–रचना के अन्त तक

कथा-सार :

कीतिब्रह्म [illegible] प्रतापी राजा राजमद में ग्रस्त रहता था । उसके सचिव का नाम [illegible] मधुरे एक दिन एक 'परम सुजान नटवर' अपने अनेक शिष्यों

को लेकर जिनमें सुन्दर, प्रवीण, गति और परिहास मे कुशल, विविध रूप धारण करने मे चतुर तरुणियां थीं, राजा के दरवार मे आया। सब शिष्यो ने पहले मंगलाचरण किया; फिर एक पट के पीछे सब स्वांगों को सजाकर नट और नटिनी ने नृत्य किया। तत्पश्चात नट-नटी संवाद आरंभ हुआ (२५-३१)। नट ने एक आकाशवाणी के सुनने की बात कही, फिर राजा कीर्तिब्रह्म की दशा का वर्णन किया और उनके सचिव गोपाल की यह आज्ञा बताई कि "राजा के सामने कोई शात रस की चीज दिखाओ" (३२-५४)। इसी बीच मे पर्दे के पीछे से कामदेव का स्वांग वोल उठा—

"हम जीवत हैं जग में जब लौं। कह मोह को जीति सकै तव लौं" ॥१-५६॥

काम के ये वचन सुनते ही नट और नटी मंच से बाहर प्रस्थान कर गये (५७-५८) और कामदेव रति सहित ठाठ वाठ से मंच पर आगये (५९)। पहिले दोनो ने नृत्य किया फिर सब का गाना हुआ (६०)। तत्पश्चात काम ने खूब बढ़ा चढ़ा कर अपना और अपने कर्मो का परिचय दिया (६१-६४)। रति ने कुछ प्रश्न किये (६५) और संवाद चलता रहा (६६-११३)। तव पट के भीतर से ही विवेक के स्वाग ने काम के विरोध में अपने पिता 'मन' की कुचालता के कारण उसे छोड़ने आदि घटनाओं का वर्णन कह सुनाया (११४-१२०)। इन वचनो को सुनकर काम और रति जो सभा बीच नृत्य कर रहे थे (१२१) मंच से बाहर चले गये; और राजा विवेक सुमति सहित मंच पर आगये (१२२-२३) विवेक और सुमति के वार्तालाप ने परिस्थिति को और अधिक स्पष्ट किया। दर्शकों को पता चला कि विवेक और मोह के परस्पर संघर्ष का कारण क्या है। (१२४-१७६)। तत्पश्चात दोनों पट के अन्दर गये और नट एवं शिष्यगण वाजों के साथ गाने लगे (१७७)। वस यहीं पर पहला अंक समाप्त हुआ।

अंक २—आरंभ मे ही नट सरदार ने राजा कीरतिब्रह्म से कहा कि "राजन इस प्रकार विवेक के विचारों को सुनकर राजा मोह ने अपने मंत्रियो को आज्ञा दी कि ऐसा करो जिससे विवेक का मंत्र सिद्ध न हो।" (१-२) नट यह कह ही रहा था कि पट के पीछे से दम्भ का स्वांग वोल उठा—'मुझे राजाज्ञा के कारण विवेक का नाश करने काशी नगरी जाना है।" (३-५) दंभ की वाणी सुनकर नट ने काशी नगरी और उसके जीवन का वर्णन कर दिया (६)। कवि ने काशी का सुन्दर वर्णन किया है। (७-१२)। दंभ आया और मंच पर पड़े हुए अपने सिंहासन पर बैठकर गंगा और काशी का दृश्य देखने लगा (१३)। इसी समय अहंकार के स्वाग का प्रवेश हुआ (१४)। दंभ के द्वारा काशी का वर्णन कराया गया है (१५-३०)। एक स्थान पर आकर अहंकार खड़ा होगया और सोचा यही निवास करना चाहिये। (३१)। तत्पश्चात एक घर मे घुसा और दंभ के पास पहुंचा। दोनों मे मित्रता होगई एक दूसरे को पहचान गये। परस्पर वार्तालाप चलता रहा जिससे श्रोताओ को भावी संघर्ष का संकेत मिल गया।

(३२–६०)। इसके बाद राजा मोह का स्वाग पट से वाहर आया (६१)। दंभ से भेंट हुई और मोह ने काशी का समाचार पूछा। मोह और दंभ दोनो ज्ञानमार्गियो की खिल्ली उड़ाते रहे (६२–८१) तब चारवाक का स्वांग एक शिष्य सहित आया। (८२) चारवाक ने अपने मत का कथन किया जिसको सुनकर राजा मोह उसे अपने अनुकूल जान प्रसन्न हुये! दोनों में वार्तालाप हुआ और कलयुग में विष्णु भक्ति का प्रभाव सुनकर राजा मोह ने असतसंग नामक प्रतिहार को उसे पकड़ लाने की आज्ञा दी। इस आदेश के वाद ही उत्कलवासी एक पात्र का प्रवेश हुआ और उसने 'महामद' की पत्री राजा के हाथ में दी। (८३–१०२) पत्रिका से पता चला कि 'श्रद्धा' अपनी पुत्री 'शान्ति' को लेकर कही चली गई है। और राजा विवेक ने उसे मनाने के लिए 'उपनिषद' को भेजा है जिससे 'वोध' की उत्पत्ति हो। (१०३)। यह सुनते ही राजा मोह सोच में पड़ गए और दूत से कहा कि जाकर महामद से कहना––"धर्म को छल वल करके पकड़ लेना और यहां भेज देना और श्रद्धा के पास जो उपनिषद को भेजा है उसे भी पकड़ने के लिए मैं सेना भेजता हूं।" (१०४–१०७), इसके वाद 'लोभ' और 'क्रोध' आये और अपनी २ हांकने लगे। (१०८–११४) फिर लोभ ने अपनी पत्नि 'तृष्णा' को बुलाकर कहा कि ऐसा जतन करो कि शान्ति श्रद्धा तक न पहुंच सके। (११५–११८)। तव क्रोध ने 'हिंसा' को बुलाया (११६)। हिंसा ने आकर पहले नृत्य किया। (१२०–२१)। फिर राजा मोह ने चारों को आज्ञा दी कि जिस प्रकार भी हो श्रद्धा और शान्ति को मार डालो। (१२२–२३)। अब राजा मोह सोचने लगा कि 'मिथ्या' को भी भेजूं जिससे यदि श्रद्धा वंधन में आजाय तो 'शान्ति' स्वयं ही दुख से मर जायगी और उपनिषद भी वेकाम रहेगा। ऐसा सोचकर उसने 'भ्रमावती' को बुलाया और समझा बुझाकर उसे 'मिथ्या' के पास भेजा (१२४)। 'मिथ्या' के पास 'भरमावती' आई। दोनों में परस्पर वार्तालाप हुआ और मिथ्या ने स्वयं अपने कुटिल चरित्र का वखान किया। (१२५–३८)। तव दोनों ने नृत्य किया। (१३६)। इतने में राजा मोह भी आगये; उन्होंने 'मिथ्या' को अपनी गोद में विठाया और उससे कहने लगे––

"सुना है शान्ति सहित श्रद्धा उपनिषद के पास गई है जिससे पुनः विवेक से मिलाप होकर वोध का जन्म हो। वोध के उदय होने से कुल का नाश होगा इसी की मुझे चिंता है। अतएव तू जाकर किसीभी प्रकार उसे पकड़ ला। मैं उसे वंदिगृह में वंद करदूंगा।" (१४४–४५) मिथ्या राजी होगई। राजा ने उसका मुख चुम्वन किया कुच स्पर्श किया और फिर पट के भीतर चलेगये। (१४६–१५१)। दूसरा अंक समाप्त हुआ।

अंक ३––लेखक ने कृष्णदास भट्ट के मुख से दूसरे अंक का सारांश कहलवा कर फिर नट के कथन से तीसरे अंक का आरंभ किया है। नट ने वताया कि मोह की भेजी हुई मिथ्या दृष्टि अपने साथ पाखण्ड–सृष्टि को लेकर उपनिषद के पास पहुंची

और फिर श्रद्धा को घेर लिया जिससे भयभीत हो श्रद्धा कहीं छिप गई और शान्ति अत्यन्त दुखी हो श्रद्धा को ढूंढने लगी। (१–२) फिर शान्ति करुणा सहेली को लेकर मंच पर आयी (३) और दोनो सखियो मे बातचीत होने लगी (४–११)। फिर जैनमतावलम्बी एक यती आया और उसके मलिन वेष आदि को देखकर शान्ति ने उसका रहस्य जानने की इच्छा की (१२–१६)। यतीजी सभा में बैठकर आने वाले शिष्यो को उपदेश देने लगे (१७–२५)। तब यती ने "अपनी श्रद्धा' को बुलाया। शान्ति विचलित होगई 'यह कौन सी श्रद्धा है।' करुणा ने सात्वकी, राजसी और तामसी तीनो श्रद्धाओ का वर्णन किया। कहा कि राजसी और तामसी/श्रद्धा ही पाखडियो के पास रहती है? (२६–३०) तब एक 'सेवरा' आया और नृत्य करके सभा मे खड़ा होगया और अपने मत की शिक्षा देने लगा (३१–३५)। शान्ति फिर सोच मे पड़गई। सेवरा का स्वांग सभा मे बैठ गया उसके पास कुछ बौद्ध धर्मावलम्बी भी बैठ गये। सेवरा पुनः शरीर को सुख आराम पहुचाने की शिक्षा देने लगा (३६–३६)। बौद्ध लोग बड़े प्रसन्न हुए और उसकी सराहना करने लगे उसने भी 'अपनी श्रद्धा' को बुलाया। आकर श्रद्धा नृत्य करने लगी और श्रावक ने अपने अनुयायिओ को परमाल (पायमाल) परास्त करने की आज्ञा दे दी (४०–४४)। पुनः जैनयती और बौद्ध श्रावक मे अपने अपने धर्म की उत्कृष्टता पर बहस होती रही ४५–५४)। तब एक कापालिक ने मंच पर प्रवेश किया। वह भी सभा मे नाचा (५५–५७)। फिर कापालिक और श्रावक मे वाद-विवाद हुआ (५८–७०) पुनः जती और कापालिक की बहस चली (७१–१११)। कापालिक ने अपने सावर मंत्र द्वारा राजा मोह के लिए धर्म समेत श्रद्धा को हरने की बात सोची परन्तु करुणा ने शान्ति को आश्वासन दिया कि तुम्हारे प्रताप से इन्हे धूल खाने को मिलेगी (११२–११५) और फिर सब स्वाग सभा से बाहर चले गये और नट लोग गाने लगे! तीसरा अंक समाप्त हुआ।

अंक ४–कृष्णभट्ट ने कहा—'राजन! अब विवेक का स्वांग आया चाहता है।' (१)

फिर 'मैत्री' आई और भैरवी विद्या द्वारा श्रद्धा को उठाकर आकाश में उड़ा ले जाने एवं हरि भक्ति द्वारा उसकी रक्षा की सूचना उसने दी (२–४)। मैत्री और श्रद्धा में परस्पर वार्तालाप हुआ जिसमे श्रद्धा ने भैरवी विद्या के सभी कारनामे बताये और हरिभक्ति द्वारा दिए गए आदेश के अनुसार अपने को विवेक के पास जाने की सूचना दी (४–२६)। नट ने आकर सूचना दी कि विष्णुभक्ति का संदेश पाकर राजा विवेक ने अपनी सेना सज्जित करने का आदेश दिया। (२७–२८) विवेक का प्रवेश हुआ और अपने प्रतिद्वन्दी मोह के विषय में उसने अपने विचार प्रगट किए और 'वस्तु-विचार' नामक पात्र को 'वेदपान' द्वारा बुलवाया। (२६–३४)। वस्तु विचार ने आने पर विवेक से उसे आज्ञा देने की बात कही (३५–४७)। फिर विवेक और वस्तु विचार में वार्तालाप हुआ और विवेक ने उसे काम को नष्ट करने के लिए भेज दिया (४८–५५)।

तत्पश्चात 'क्षमा' को बुलवाया, क्षमा ने आकर पहले नृत्य किया फिर राजा से राजआज्ञा मांगी और उसे सुनकर कार्य पूर्ति के लिए वहां से वाहर होगई (५६–६६)। तब राजा ने संतोष को बुलाया। लोभ की बुराई करता हुआ संतोष आया। फिर उसने भी यथावत नृत्य किया और राजा के पास हाजिर हुआ (७०–८२)। राजा ने संतोष से लोभ को जीतने के लिए जाने को कहा (८३–८४)। संतोष अपना कार्य करने चला गया (८३–८७)। ज्योतिषी ने आकर कहा राजा विवेक पुण्य समय है। मोह को जीतने के लिए प्रस्थान कीजिये। राजाज्ञा से शम, दम, नियम, यम आदि विवेक के साथी वीर तैयार होगए। और राजा रथ पर बैठकर युद्ध के लिए रवाना हुये। (८८–९५) उसी समय भक्ति ने त्याग सहित राजा के पास वैराग को भेजा (९६–७) इन सब को साथ ले राजा वनारस नगरी मे पहुंचे। सारथी ने वहां पहुँच कर उनसे वनारस नगरी और विंदु माधव का वर्णन किया और बताया कि मोह वहां पर अपने साथियो सहित रहता है। राजा ने जाकर विंदु माधव के दर्शन किये और मोह को पराजित करने का आशीर्वाद मांगा (९८–१०२)। जब दर्शनोपरात राजा आकर रथ पर चढ़े तो किसी चर ने आकर समाचार दिया कि विवेक की सेना के आगमन का समाचार सुनकर मोह भागजाना चाहता है। (१०३)। राजा ने यह कहते हुए कि कही मोह भाग न जाय मंच से प्रस्थान किया। उनके जाते ही नट शिष्य नृत्य करने लगे (१०४–५)। चौथा अंक समाप्त हुआ।

अंक ५—कृष्ण भट्ट कहते हैं कि विवेक के जाने के पश्चात नट ने आकर राजा कीर्ति ब्रह्म से कहा—

श्रद्धा ने आकर हरिभक्ति का संदेश विवेक से कहा। आगे चलकर मोह की सेना के मृत योद्धाओ का समाचार भी श्रद्धा हरिभक्ति से आकर कहेगी—(२–४)। इसी अवकाश मे शिष्य ने गुरु कृष्ण भट्ट से पूछा—"हे नाथ ! यह युद्ध स्वांग सज कर क्यों नही किया गया इसका कारण कहिये ?" (५)। कृष्ण भट्ट ने उत्तर दिया—"यदि स्वांग भरकर युद्ध किया जाता तो अनेकों स्वांग सजाने पड़ते। इसलिए वचन द्वारा वह युद्ध बताया गया है।" (६) अब श्रद्धा का स्वांग मंच पर आया, श्रद्धा, मोह के साथियों के नाश पर, दुख प्रगट करने लगी। और वाद मे कहने लगी विदा देते समय हरिभक्ति ने मुझ से कहा था कि काशी छोड़ कर तुम सुभग चक्र तीरथ में जाकर शान्तिसहित रहना। अब मैं वही चलूं। (७–१४)। वह उस स्थान पर पहुंची और मंच पर सुभग-चक्र वासी नटो ने दोनो (हरिभक्ति और शान्ति) को एक स्थान पर बैठाकर वार्तालाप शुरु किया। (१५-१६)। तत्पश्चात श्रद्धा ने विवेक की विजय का समाचार वहां जाकर कहा (१७–२१)। भक्ति के पास बैठी हुई शान्ति माता श्रद्धा को देखकर हर्षपूर्वक उसके चरन से लिपट गई (२२)। हरिभक्ति ने श्रद्धा से मोह विवेक युद्ध का समाचार पूछा। श्रद्धा ने बताया कि विवेक ने 'न्यायशास्त्र' को दूत बनाकर मोह के पास काशी

छोड़ने का संदेश भेजा और कहलाया कि ऐसा न करने पर उसका सिर काट लिया जायगा। (२३–२६) मोह ने इस प्रस्ताव का कड़ा उत्तर दिया और मोह एवं विवेक की सेनायें परस्पर युद्ध के लिए तैयार होगईं। दोनो के भटों की मुट-भेड़ होने लगी (३०–३६) यह देखकर शान्ति और श्रद्धा मे शंका समाधान होने लगा। श्रद्धा ने शान्ति को, वास्तविक स्थिति मे अवगत कराया। पुनः श्रद्धा और हरिभक्ति मे युद्ध के व्योरे की बात हुई। सांगोपांग वर्णन किया गया। मन, संकल्प, सरस्वति आदि सभी ने संवादो में भाग लिया। (३७–१५०) पुनः सरस्वति ने मृत्यु को प्राप्त होने वालों को तिलांजलि दी। (१५१) अन्त मे शारदा देवी मन को समझाकर सभा से बाहर गईं। तंत्री बाज उठी और अंक समाप्त हुआ। (१५२)।

अंक ६—प्रथम चतुर नटो ने राजा के आगे शुभगान किया और फिर शान्ति का स्वांग आकर प्रगट हुआ। (१) शान्ति कहने लगी राजा विवेक ने मुझे यह कहकर यहां भेजा है "मोह के साथ जो युद्ध हुआ उसके कारण उसके सभी साथी पराजय को प्राप्त हुए हैं और नई व्यवस्था स्थापित होगई है अतएव तुम उपनिषद को सादर बुला लाओ।" (२–६) शान्ति के इतना कहने पर श्रद्धा का स्वाग सभा मे आया। वह कहने लगी—"मेरे मन मे अब आनन्द होगया क्योंकि मोह के स्थान पर विवेक का राज स्थापित हुआ।" (७–८)। पुनः शान्ति और श्रद्धा में सारी परिस्थिति के सम्बन्ध मे संवाद हुआ। सिद्धि और साधन पर पूर्ण चर्चा चली। साधना और तर्क ने भी भाग लिया। मन यह सब सुन रहा था। वह सुनकर कुछ लजाया विशेपकर न्याय के वचन सुनकर। (६–४६)। फिर वैरागय ने श्रद्धा को बुलाकर पुरुष को मनाने के लिए भेजा और श्रद्धा अपनी पुत्री शान्ति से अपने जाने का समाचार देकर पुरुष को बुलाने गई (४७–५०) उधर शान्ति भी कहने लगी कि विवेक ने मुझे भी उपनिषद को बुलाने हेतु भेजा है। मै भी जारही हूं क्योकि विवेक के मन मे प्रबोध के जन्म लेने की बड़ी लालसा है। (५१)। इतना कह दोनो सभा मे नृत्य करने लगी और तत्पश्चात वहा से चली गईं। (५२)। तब जीवात्मा 'पुरुष' नाम का स्वांग मंच पर आया और संसार को शंसय-सिंधु माया-जल से भरा हुआ कहने लगा और भक्ति की कृपा से ही उस समुद्र को पार करने की बात कही। (५३–५४) तभी शान्ति और उपनिषद रानी के स्वाग सभामध्य आये। उपनिषद रानी कहने लगी कि उनके पति राजा विवेक ने उनका तिरस्कार कर भवन से बाहर निकाल दिया। मै उनका मुंह भी नही देखना चाहती (५५–५६)। शान्ति और उपनिषद का परस्पर संवाद चला और उसी बीच मे 'गीता' भी वहां आगई। गीता के कहने से उपनिषद रानी विवेक से मिलने पर राजी होगई। (५७–६४)। उसी समय श्रद्धा सहित विवेक सभा में आये। और उपनिषद की याद करके उच्छवास भरने लगे। श्रद्धा ने कहा कि गीता के कहने से शान्ति के साथ उपनिषद रानी आती ही होगी। (६५)। इतने में पुरुप आया। राजा विवेक ने उठकर स्वागत किया और पुरुष

अति प्रसन्न हुआ। फिर तो शान्ति के साथ उपनिषद भी आगई। उपनिषद पुरुष के पैरों पड़ी और सिर झुकाकर पति के पास बैठगई। (६६–६९) पुरुष और उपनिषद मे बातचीत हुई और उपनिषद ने कुबुद्धि आदि द्वारा उसकी जो दशा हुई थी उसका वर्णन किया। (७०–१५१) तव उपनिषद और विवेक के स्वांग सभा मे वाहर चलेगये और विद्या का स्वांग सभा में आया। पुनः प्रबोध का स्वांग आया। पुरुष और प्रबोध की परस्पर वार्ता हुई। और पुरुष ने निर्मल हो प्रबोधचन्द्र को प्राप्त किया। तब भक्ति का स्वाग आया। पुरुष ने प्रबोध को मिलाने के लिए भक्ति के प्रति कृतज्ञता प्रगट की। (१५२–५८) पुरुष ने भक्ति मे वर मांगा "संसार सागर में पडे हुए दुखी जीवों का उद्धार कीजिये।" विष्णु भक्ति ने कहा—"सब का कल्याण हो।" इस प्रकार सभी स्वाग सभा से निकल गये। (१५७–६१)।

अन्त में स्वयं नट ने नृत्य किया। राजा कीर्ति ब्रह्म प्रसन्न हुये और उनके मनमे मैल मिट गया। कृष्ण भट्ट की इस रचना के सुनने से उनके शिष्य का मन भी निर्मल होगया और लेखक ने हरिभक्ति की आवश्यकता बताते हुए निर्देश किया कि संसार मे यदि सुख पाना है तो हरिभक्ति को छोड़कर कोई उसमे सफल नही हो सकता। (१६२–६८)।

इस छः अंकीय स्वांग का विषय और कथा-वस्तु ऊपर के विवरण से स्पष्ट है। इसमें यही बताया गया है कि 'मन' की संतान 'विवेक' और 'मोह' मे किस प्रकार परस्पर संघर्ष हुआ। कौन कौन सी प्रवृत्तियां किस के साथ रही और अन्त मे किस प्रकार विवेक' की विजय हुई, 'पुरुष' का 'उपनिषद' से मिलाप हुआ और 'प्रबोध चन्द्र' के उदय के कारण सांसारिक झंझट से छुटकारा मिला।

राजा कीर्ति वर्मा जिनकी शान्ति के लिए, उनके सचिव के आदेश पर, इस स्वाग की रचना हुई अन्त में अपने सांसारिक मोह से छुटकारा पाकर शान्त रस मे विलीन होगये।

स्वाग के मूल कर्णधार कृष्ण भट्ट है। आरंभ मे भी ही पता चल जाता है कि अपने किसी शिष्य को आध्यात्मिक शिक्षा देने के कारण उन्होने नाटक की रीति पर इस स्वाग को बनाया। परन्तु बीच बीच मे वही राजा कीर्ति वर्मा को भी, प्रधान नट के नाते, अनेको घटनाओ की सूचना देकर कथा-वस्तु को आगे बढाते है।

शिल्प-विधान : इस नाटक के पढ़ने से स्पष्ट विदित होता है कि—

(१) रचना नाटक न होकर "नाटक की रीति" पर बनी है और "नट-लीला" के बहाने उसे लिखा गया है। इसमे यह निष्कर्ष निकालना कि उक्त रचना लोकधर्मी नाट्य परम्परा के आधार पर रचित है, न्याय संगत है।

(२) रचना में कथा-वस्तु का विकास निम्न प्रकार से होता है—

(अ) कृष्ण भट्ट की सूचना से अथवा किसी नट की सूचना से

(आ) स्वयं किसी पात्र के कथन से

(इ) पात्रों के परस्पर वार्तालाप मे

नाटक मे प्रथम उपकरण का प्रयोग नही होता । यह विशेषता 'स्वांग' आदि मे ही होती है । अतएव इस आधार पर भी इसे लोकधर्मी नाटक ही माना जायगा ।

(३) रचना संगीत एवं काव्य प्रधान है । लोकधर्मी नाट्यों मे इसी शैली का प्रयोग अधिक मिलता है ।

(४) रचना में नृत्य को प्राधान्य है । प्रायः सभी महत्वपूर्ण पात्र (पुरुष और स्त्री) अपना-अपना पृथक अथवा सम्मिलित नृत्य प्रदर्शित करते है ।

(५) जिनका अभिनय संभव नही है अथवा वांछनीय नही है उनके वर्णन द्वारा दर्शक मंडली को उनकी सूचना देकर कथा-वस्तु का विकास किया गया है । इसी रीति से साधारणीकरण में भी सफलता मिली है ।

(६) बृजवासीदास ने मूल संस्कृत नाटक की परिपाटी को नही अपनाया । उन्होने कथा तो मूल से ली है परन्तु उसकी रचना मे अपनी मौलिकता प्रदर्शित की है ।

(७) गंभीर विषय होते हुए भी लेखक ने कहीं कहीं हास्य की पुट लाने के लिए प्रयास किया है ।

(८) संपूर्ण स्वांग के अभिनय में साधारण लोक-नाट्य मच का प्रयोग स्पष्ट है । जहा कभी अभिनय की सूक्ष्मता मे जाने प्रसंग आया है वही 'मागी' ने अपने वर्णन द्वारा उस कठिनाई को दूर कर दर्शको के सामने उस चित्र को प्रस्तुत कर दिया है ।

संक्षेप मे, सुन्दर और प्रौढ ब्रजभाषा में लिखा हुआ यह स्वांग' हमारी हिन्दी नाट्य परम्परा की एक महत्वपूर्ण कड़ी है । 'हास्यार्णव' और 'माधव-विनोद' मे जो शिल्प-विधान मिलता है उसी का अनुकरण 'प्रबोध चन्द्रोदय' मे भी प्राप्त होता है । आगे चलकर यही परम्परा हमें 'अमानत' की 'इन्दर सभा' (१८५३) ई०) और शालोग्राम वैश्य के 'इश्क-चमन' (१८५४ ई०) तथा झब्बीलाल मिश्र (१८८६–५३ ई०) के सांगो मे भी मिलती है ।

पूर्व-भारतेन्दु काल की स्वाग परम्परा में ही अमानत की इदर-सभा का नाम आता है । उसके विषय मे यहाँ अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं क्योकि इन्दर-सभा बड़ी प्रसिद्ध रचना है। अधिकतर उर्दू भाषा मे होने के कारण उसे हिन्दी मे लिया भी नही जासकता ।

इन्दर-सभा से पूर्व लिखित कुछ अन्य स्वांगो का उल्लेख भी आया है—[1]

१. विसराम कृत 'सांगीत लैला मजनूं' (र० का० १८३३ ई०)
२. कंवरसेन कृत 'सांगीत गोवर्धन लीला' (र० का० १८३७ ई०)
३. लछिमनदास कृत 'सांगीत प्रहलाद' (र० का० १८४३ ई०)
४. लछिमनदास कृत 'सांगीत भरतरी' (र० का० १८४८ ई०)

जयपुर
१५ अगस्त, १९६४

सोमनाथ गुप्त

---

१. नागरी प्रचारिणी सभा की हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों का त्रैवार्षिक विवरण। (सन् १९२६–२८ ई०)

माधव-विनोद

प्रथम अंक

अथ ग्रन्थारम्भ लिख्यते

छप्पय

अछय अभय अनन्त नित्य आनन्द उमन्डित ।
जटाजूट शशि भाल तीन लोचन दुति मंडित ।।
कर त्रिशूल अरु डमरु व्याल भूपन अनखंडित ।
नृत्य प्रियसित रङ्ग अङ्ग भम्भूति घमंडित ।।
अर्धङ्ग वाम कुन्दनि वरनि, विकट कोटि संकट दरनि ।
जय कित्ति उजागर गंगधर, सौमनाथ मंगल करनि ।।२३।।

नाद्यं ते सूत्रधार

दोहा

सभा निवासी नटनसौ, उचरयौ रंगाचार ।
मौन भए कौतिक लखौ, हौ तुम सबै उदार ।।२४।।

छप्पय

मांथै मोर किरीट मंजु मंडित कुन्दनि मनि ।
कञ्चन कुण्डल कांन हार उर रहै सोभ सनि ।।
नव जलधर सम अंग काछनी सूही सज्जित ।
कटि लपट्यौ पटपीत होति दामिनि लखि लज्जित ।।
तिय बदन चन्द निरख्यत हरखि, नृत्य मुरली धर अधर ।
कहि सौमनाथ व्रजनाथ जय, श्री गुविन्द आनन्द कर ।।२५।।

दोहा

नैपथ्यहि अवलोकिकैं, सूत्रधार सुख दैन ।
पारिपारसिक सौं विहसि बोल्यौ यौं पुनि बैन ।।२६।।

छप्पय

सूत्रधार उच्चरयौ पारसिक सौहति मंडित ।
कुंवर बहादुर सिंह सभा ताकी सब पंडित ।।

और विचित्र अनेक चित्त मधि आनंद सरसन ।
अन्तर कपट विहीन करत निजु प्रभु कौ दरसन ॥
कछु सामग्री तुमनै रुचिर, रच्चिय है मनलाय कैं ।
जातै प्रसन्न ए हौंय नर, मुनि अवलोकि सुभाय कैं ॥२७॥

दोहा

यौं जब रंगाचार ने, कह्यौ वचन समुझाय ।
वहुरि पारसिक ने हरषि, उत्तर दियौ बनाय ॥२८॥
इनके मन की भावनां, हमकौं परै न जानि ।
ताते जो तुम कहौ सो, करिये अति सुखमानि ॥२९॥
सूत्रधार पुनि उच्चरचौ रीझत जिन्हैं प्रवीन ।
सतौगिनी सी वस्तु है चतुराई आधीन ॥३०॥

सवैया

अक्षर की रचना रमनीक सबै रस की चरचानि मिलानी ।
पण्डित और प्रवीनन के सुनि होत जु काननि कौं सुखदानी ॥
कै कछु नृत्य समाज विलोकि विनोद वढ़े हितु कै अगवानी ।
तेतो विचार तयार सबै तुमहूँ निरखौ लहि बुद्धि सयानी ॥३१॥

दोहा

सूत्रधार पुनि उच्चरयौ यह सुनि नट की बात ।
हम कौं सुधि आई जु तुम कियौ समाज सिहात ॥३२॥
यह सुनि नट बोल्यौ बहुरि, कहा विचारी चित्त ।
उचर्यौ रङ्गाचार पुनि, नट सौं हरषि सहित्त ॥३३॥

रङ्गाचार

पावकुलक छन्द

चरित मालती माधव वारौ । सौमनाथ वरन्यौ सुख भारौ ॥
सो समाज तुम ने ठहरायौ । भली भांति मोहू मन भायौ ॥३४॥
सूत्रधार की सुनि यह वानी । पुनि बोल्यौ नट बात सयानी ॥
हम ने सिखये सबै खिलारी । पै इक चिन्ता हियैं बिहारी ॥३५॥
कामन्दकि जुग्गिन के रूपै । को धारेगौ भांति अनूपै ॥
अवलोकिता सिष्यनी वाकी । हौ बनिहौ करि बुद्धि चलाकी ॥३६॥
कौन मालती माधव वनिहै । जु या समाज सिरोमनि धनि है ॥
ऐ सुनि नट के बचन प्रवीने । सूत्रधार बौल्यौ हित भीनें ॥३७॥

दोहा

कल हंसरु मकरन्द के, आगम समय उदार ।
सौ तो लखि राखे हियें, ताको कहा विचार ।।३८।।

दोहा

सूत्रधार सौ नट बहुरि बोल्यौ सन्मुख हेरि ।
सबै खिलारिन कौ करौ सावधान हौ फेरि ।।३६।।
ऐ सुनि कै नट वचन, सूत्रधार अतुराय ।
आपु गयौ नैपथ्य मै, करि के भलौ सुभाय ।।४०।।
कामन्दकि कौ रूपधरि आयौ बाहरि आप ।
अरु बनि कै अवलोकिता नट आयौ अनताप ।।४१।।

कामन्दकि रूप वर्णनम्

सवैया

वक्र जटानि कौ रूप सजै सिर चक्रन मे तनिकेत निकाई ।
अम्बर लाल औ भाल भभूति सु कानन कुण्डल की छविछाई ।।
कंठ मै माल जपै शशिनाथ हि नैननि में तप की अरुनाई ।
यौ सब सिद्धिनिसौ अभिरामनि कामद नामनि जुग्गिनि आई ।।४२।।

कुण्डलिया

आई पुनि अवलोकिता ताकी शिष्यनि सग ।
कटि लौं लटकति जाल भसम लपेटैं अंग ।।
भसम लपेटैं अंग हत्थ पुस्तक अरु माला ।
बंदन बिंदी भाल कमल दल नैन विसाला ।।
बेर बेर हित सहित करत शशिनाथ वड़ाई ।
इहिं विधि सब जग रूप मनौ सो लूटलि आई ।।४३।।

दोहा

कामंदकि अवलोकिता इहि विधि बाहर आय ।
नृत्य कियौ दोउनि मिली, लीनी सभा रिझाय ।।४४।।

सोरठा

अबलौंकितै सुनाय निजु बोली कामंदकी ।
दुहु सचिवन सुख पाय, भयो चहै सम्बन्ध अब ।।४५।।
फरकत लोचन बाम, उर में अति सरस्यौ हरषि ।
हौनहार है काम, चित उगाही देतु है ।।४६।।

कामंदानि के वैन ए, सुनि कै अवलोकिता ।
करिकै रूखे नैन, या विधि सों पुनि उच्चरी ॥४७॥

सवैया

तुमको इतनौ चित सोच कहा जग की सब रीति नसाय दई ।
सिर जूट जटानिकौ साजति हौ अग अंग भभूति लगाय लई ॥
कबहुक वघम्बर अम्बर लाल कि भूख औ प्यास निराय गई ।
अब तौ शशिनाथ सौ नेह करौ यह मो मन में मति आय गई ॥४८॥

दोहा

यौ उचरी अवलोकिता कामद सौ अनखाय ।
मुनि पुनि बोली जुगिनी, तासों वचन नुभाय ॥४६॥

सवैया

मित्र न भेद कह्यौ अपनौ जु निरन्तर खेदनि को हरनौ है ।
प्राननिहु करिकं तपकै अब मोहि नहीं पन तें टरनौ है ॥
ए अवलोकिता झूंठ गिनै जिन श्री शशिनाथ हियें धरनौ है ।
है जग मांझ यही हित कौ फल या विन और कहा करनौ है ॥५०॥

दोहा

देवरात अरु भूरिवसु, हम सौदामिन सग ।
पढ़त हुते इहि ठौर सौं, तू जाने न प्रसंग ॥५१॥
देवरात मंत्री भयौ कुंदिनपुर में जाय ।
विदरभ देश नरेश के सरस्यौ वित्त अघाय ॥५२॥
और भूरिवसु इहि पुरी नृप कौ भयौ प्रधान ।
दोऊ विप्रनि कै भई संतति रूप निधान ॥५३॥

पावकुलक छंद

देवरात कै माधव भयौ । सबै भांति सोभा सौ छयौ ।
भई भूरिवसु कै पुनि कन्या । रूप शीलगुण करिकैं धन्या ॥५४॥
सो अब कुन्दनपुर तें रूरौ । देवरात नै बुद्धि समूरौ ।
माधव अपनौ पुत्र पठायौ । पद्मावती पुरी मैं आयौ ॥५५॥
पढ़न भूरिवसु मंत्री पासै । विद्या तर्क बुद्धि परकासै ।
अरु करार की बुद्धि दिवाई । सुतहू की सब रीति दिखाई ॥५६॥
यह विचार उन आछो कीनौं । समये कौ टरि जान न दीनौं ।
यह सुनि कामदान की बानी । उचरी अवलोकिता सयानी ॥५७॥

मत्री क्यौ न मालती बेटी । देतु माधवहि बुद्धि लपेटी ।
जो चुराय कै व्याह करायौ । चाहत है उर में अतुरायौ ।।५८।।
कहा भूरिवसु कौ डर ऐसौ । कहौ क्यो न जैसै को तैसौ ।
भगवति दया कीजिए अव्वै । पूछति हौ मै छांडि गरब्बै ।।५९।।

सोरठा

अवलोकिता विचारि, जव जुग्गिन सौ यों कही ।
तव सिद्धिनी निहारि, चेली सों लागी कहन ।।६०।।

सवैया

नंदन नाम नरम्म सचिव्व है भूपति को जिन राख्यौ रिझाय कैं ।
ताके लियैं तिय मालती कौं निज मन्त्रिय सौं कहि राखी लुभाय कैं ।।
ह्वै न सकै यह बात प्रसिद्ध कह्यौ अवलोकितै तोहि सुनाय कैं ।
मालती माधव कौ सउछाह सु यौ करनौ है विवाह छिपाय कैं ।।६१।।

सोरठा

ता तैं आछी और, दूजौ नहीं उपाय है ।
दुरी दुरी धरि मौर, इन दोउ कौं व्याहियै ।।६२।।

तोमर छन्द

अवलोकिता पुनि आप । जुग्गिनिय सौ अनताप ।
उचरी बनाय सु बैन । करिकैं अचल जुग नैन ।।६३।।
अचिरज्ज है यह एक । वसुभूरि सहित विवेक ।
माधवहि जानत आहि । पै रहत बेपरवाहि ।।६४।।
यह सुनि सु जुग्गनि फेरि । उचरी दया दृग हेरि ।
अवलोकिते ! यह भेद । कहनौ नहीं अनखेद ।।६५।।
अरु इतै पै सुनि और । निहचै छिपावत ठौर ।
मालतिय माधव मध्य । लरिकई तैं बुधि लध्य ।।६६।।
वढ़ि रही अति ही प्रीति । यातैं छिपैबौ नीति ।
नृप और नन्दन अव्व । ए छले जांय सगव्व ।।६७।।

सवैया

माधव की अव रीति विलोकनि औरनि सौ वतरात घनौ है ।
सूधे सुभाय रहै सव सौ यह जानत नाहिं कछू सु मनौ है ।।
कोऊ नही पहचानतु जो मनमत्थ के तीरन कौ तपनौ है ।
लाज दराज भर्यौ दरसै सरसै हित काज करे अपनौ है ।।६८।।

पुनि अरध चन्द से भाल विमल मैं चन्दन बिंदु बनायौ ।
जनु मिलन चन्द सौ तजि छर छन्दनि धरनी नन्दन आयौ ॥
अरु भृकुटी कुटिल सघन अरुकारी चतुर विरंचि सवारी ।
जनु भरिकैं अनख जीति त्रिभुवन कौं काम कमान उतारी ॥९२॥

पुनि वरुनी वक्र सहित झपकारी पलकै यौं छवि छलकै ।
जनु रेसम के छोरन सौं बिजना पीपुश्रम हरिबौ ललकै ॥
दृग मृग मीन समद खंजन से अंजन सहित अन्यारे ।
लगि विकल करैं अंग अंगनि मानौ मन्मथ बान संवारे ॥९३॥

शुभ श्रवननि जटित जवाहर तरिवन गोल कपोलनि फलकैं ।
तिय मुख अरविंद निकट मधुपति की सैनी सी वर अलकैं ॥
तिल फूल तूल कामिन की नांसा नथ मंडल यौं राजैं ।
नट पंचवान की मनौ कुण्डली हित अखंड उपराजैं ॥९४॥

मृदु पल्लव से अधरन की रेखा हिरदै करति दरारैं ।
लखि दाड़िम दसन चमक विहंसनि में सुधि बुधि कौन सम्हारैं ॥
जिन्हि बानी कौ सुनिकैं पिकबीना धुनि कौं उरमें आनै ।
अरु जाकी सहज स्वास के सौरभ रहैं भंवर मडरानै ॥९५॥

यों नवल नारि मालनि की ठोड़ी लीला सहित सुहाई ।
जनु है यह चित्त मित्त माधव कौं चुभ्यौ छोड़ि अनुराई ॥
अरु सुभर गोल ग्रीवा मे राजैं रेखा तीनि अछीनी ।
मनु नर बानी सुर बानी प्राकृत तिन की गिनती कीनी ॥९६॥

तिहि मध्य कंठ श्री मनिमय मंजुल मुक्तनि हार हमेलै ।
जुत ललित कंचुकी बौनैं उरजनि छुवति छतनि की रेलै ॥
बर बाजूबंद वलित वाला की कनक बेलि सी बाहै ।
लखि जिनैं मृनाल कटिन की उपमां कौ कवि हियैं सराहैं ॥९७॥

नव टाड छन्न अरु वलया कंकन मनि बंधन मै सोहैं ।
अति जिन की जगमग जोति निरखि कैं सुर मुनि कैं मन छोहैं ॥
कर फूले लाल कमल से कोयल निरखैं लोचन फूलैं ।
अरु चम्पकली की उपमां अंगुरिन को कवि हर्षि कबूलैं ॥९८॥

मनि कनक मूंदरी खूंदे मन कौ मिहदी नखन रचाई ।
मनु तिहुं पुरनि की सोभा विधि नैं तिय के हाथ रुचाई ॥
अरु पेट पानि सौ त्रिबलि सिठी जनु जोवन आवन बारी ।
अति नाभि गंभीर सहित भ्रमरी लखि जापर अनगन वारी ॥९९॥

अरु किंकनि सौ अटकी है मानौं निपट लटी कटि ऐसी ।
सम पुलिन नितम्ब दुरे लहुगा मै उपमा और अनैसी ॥
अरु जुग जंघ प्रतीप कनक के रंभा थंभ समानै ।
पुनि गुलफै गोल गूजरी मुर बनि पायजेव धुनि ठानै ॥१००॥
अति कोमल चरन महावर मडित नूपुर लसत नवीनै ।
अरु समद मतंग मराल चालि सौ कीनै जोति अधीनै ॥
सो नवल मालती उझकि झरोखनि दुरि माधवहि निहारै ।
उर उमग्यौ प्रेम समुद्र लाजतै ताकौ नीठि संभारै ॥१०१॥
रति जैसै नवल काम अभिरामैं मन तैं छिन न विसारै ।
तिहिं विधि मालती के उर अन्तर माधव नित्त विहारै ॥
अरु सिथिल अंग ह्वै जात तनक मै मुख सरसै पियराई ।
पुनि पुलकित अमल कपोल अमोलनि प्रति पल लेत जभाई ॥१०२॥

दोहा

हितकर मेरे भवन में लवगिकाने आय ।
यह सुमालति की दसा मोंसों कही बनाय ॥१०३॥
कामदानि के वचन ए सुनि कै चित्त लगाय ।
पुनि बोली अवलोकिता भली भई मुसकाय ॥१०४॥
कुंवरि मालती ने लख्यौ माधव कौ एक चित्र ।
मन परचांवन के लियैं ढावन विरह चरित्र ॥१०५॥
लवंगिका नैं आजु सो मदारिकै बुलाय ।
सब की दीठि बचाइ कै दियो हियै अतुराय ॥१०६॥

मंदारिका दासी वर्णनम्

हरिगीत छन्द

सब अंग लौने उरज बौनै विरह संकट दारिका ।
हित को वढ़ावति अरु पढ़ावति कोक रस की कारिका ॥
अरु तिक्ष अक्ष कटक्ष आगै तुक्ष किन्नर नारिका ।
जिहि मन्द हांसी मनहु फांसी इमि सुदासी दारिका ॥१०७॥

दोहा

यों सुनि कै कामन्दकी कीनों नेक विचार ।
फिर बोली कि भली करी है यह एक प्रकार ॥१०८॥

माधव कौ सेवक जुहै कलहंसक इह नाम ।
चाहत है मंदारिका लखैं लहतु आराम ।।१०६।।

यह दैहैं कलहंस कौ वह माधव के हाथ ।
देहै चित्र उतावली मन मैं गुनि यह गाथ ।।११०।।

मधुभार छन्द

यह सुनि विलासु । अवलोखि तासु ।
पुनि सहित चैन । उचरीत वैन ।।१११।।

हरिगीत छन्द

मन्मत्थ उपवन ओर माधव आजु मै सुपठाइयौ ।
कहिकै कि उत्तम तहां कौतिक महा मोद बढ़ाइयौ ।।
सुकुमारि सचिव कुमारि सुन्दरि मालती तहां आइ है ।
ह्वै है परस्पर दुहुनि दरसन परमहित सरसाइ है ।।११२।।

अवलोकिता को वचन यह सुन कामदानि सुहावनी ।
स्यावास आछी करी तैंने वात मो मन भावनी ।।
सौदामिनी मो सिष्य पहली सु तैं सुधि दिवाइयौ ।
इहि खेल में वह हुती चौकस तोहि आज सुनाइयौ ।।११३।।

यह बात सुनि अवलोकिता पुनि उच्चरी समुहाय कै ।
हे भगवती ! सौदामिनी सो बड़ी सिद्धहि पायकै ।।
अब श्री परबत पै विराजत वृत कपालहि धारि कै ।
संसार के व्यवहार सुख के दिये सकल विसारिकै ।।११४।।

यह सुनि सुकामद फेरि बोली तैं सुनी कित बात है ?
सब भेद कहि तजि खेद मोंसौं सुनै सुख सरसात है ।
पुनि उच्चरी अवलोकिता इहिं पुरी निकट मसान है ।।
चंडी कराला नाम है तहं थान निपट भयान है ।।११५।।

दोहा

पुनि बोली कामन्दकी मै जानति हौ ठीक ।
पर्व पर्व हौं जाति हौ, पूजा को विधि नीक ।।११६।।

सो चंडो तो लेति है विविध जीव वलिदान ।
महा साहसी रहत हैं तिन यह करचौ बखान ।।११७।।

छप्पै

उचरी अवलोकिता फेरि सिद्धिनि सौ हित भरि ।
बस्यौ एक मज़बूत, तहां अवधूत भेष धरि ।।
श्री पव्वय ते आय नाम अग्घोर घन्ट बर ।
जटा मुकुट उद्दण्ड गरे मै मुन्ड माल धर ।।
कपाल कुंडला सिष्यनि, ताकी तिहि ढिग नित्त ।
आवति है अर्चा करनि, जाति तिहीं नग चित्त ।।११८।।

सोरठा

ताते सब समझाय सौदामिन कौ भेद यह ।
मोंसौ कह्यौ सुनाय, तातैं हौं जानति अजूं ।।११६।।
यह सुनि कैं बतरानि पुनि बोली कामन्दकी ।
सौदामिनि तपखानि, है वासौं सब ही बनैं ।।१२०।।
कामदानि की बात, यह सुनि पुनि अवलोकिता ।
बोली हर्षित गात, याहि इहां पूरन करौ ।।१२१।।
और सुनौं चित्त लाय, तुम सब लायक भगवती ।
माधव कौं सुखदाय, बालमित्त मकरन्द है ।।१२२।।
मदयन्तिका ललाम, तिहि नन्दन की बहनि है ।
होय बडौ यह काम, ए दोऊ जो व्याहियैं ।।१२३।।

दोहा

पुनि बोली कामन्दकी, बुद्धिरक्षिता नाम ।
मैं अपनी प्यारी सखी, राखी प्रथम ललाम ।।१२४।।
मदयन्तिका समीप सो बसति रैन दिन आय ।
निपट निरन्तर प्रीत है होत समान अलाय ।।१२५।।

पावकुलक छन्द

अवलोकिता कही पुनि बानी । भली करी भगवति सुख दानी ।
माधव या मे अति सुख लैहै । मकरन्द जु मदयन्ती पैहै ।।१२६।।
यह सुनि कामदानि पुनि हसि कै । बोली बैनन ऐंन हुलसि कैं ।
बुद्धि रक्षिता सखी पियारी । मैने निजु राखी तहं भारी ।।१२७।।
अवलोकिता सुनि सु पुनि बोली । कामदानि सौ बुद्धि अमोली ।
भगवति प्रथम भली यह कीनी । तुम तै और कौन परबीनी ।।१२८।।

सुनि कं यो सिद्धिनि अतुरा पं । बोली अवलोकितै लुभा पै ।
उठि माधव अरु मालति देखै । यौंकहि उठी दुवौ हित लेखै ॥१२६॥
तहं कामन्दकि लगो विचारन । निपुन मालती कला अपारन ।
अरु है अतिही उच्च सुभावन । इहा प्रगटिवौ बुद्धि प्रभावन ॥१३०॥

सवैया

मालती के नित जाय समीप सुजाहर और तिया गति ताहीं ।
आपुन मंदिर तै पुनि बाहिर आयवे भीतिहि नागति नाहीं ॥
श्री शशिनाथ कथा विनु आनन ई वतराति सौं पागति नाहीं ।
ताकी लुनाई कहा कहिये रति राई समान हूँ लागति नाहीं ॥१३१॥

दोहा

तातैं ह्यां कर्तव्य है, अति दूती कौ काम ।
यों कही पुनि आशिप वचन, उचरी बुद्धि ललाम ॥१३२॥

कवित्त

नृप और नन्दन की बुद्धि छर छन्द भरो,
ताहि अति मन्द करौ धारति जु बीन कौ ।
सोमनाथ वरनै अनन्द रचना का फल,
सुजस समन्द मिल्यौ सुविधि प्रवीन कौ ॥
लह लही वेलि ज्यो तमालहि प्रफुल्लित ह्वै,
ओप अधिकावै लिए पुंजनि के अलीन कौ ।
अरु चैत चन्द्रिका ज्यों सुन्दर सुचन्द्र मुखी,
सरसौ अनन्द माधौ कुमुद नवीन कौ ॥१३३॥

दोहा

कामन्दकी अवलोकिता, इहि विधि सौ वतराय ।
परदा के भीतर गईं, उर में हरष बढ़ाय ॥१३४॥

[पटाक्षेप इति निष्कांत विष्कम्भक]

दोहा

परदा तैं बाहिर तहां आयौ जन कलहंस ।
लिये चित्र कौ हाथ में दूतिन कौ अवतंस ॥१३५॥

सवैया

ऐठवां फैटा सजै सिर पै अरु भालपै वंदन विंदु वनायौ ।
आगिले वदन वागौ बन्यौ ऽरु वड़ौ कटि पै पटका लपटायौ ॥
दच्छिन हत्थ में सोटा लसै शुभ माधो के हित सौ अनुरायौ ।
चित्र सुलच्छन तच्छन ले तह सेवक सौ कलहंसक आयौ ॥१३६॥

संजुता छन्द

कलहंस ने तह आयकै । यह कह्यौ वैन सुनाय कै ।
अब है कहा सुभ लक्षनौं । माधव सुबुद्धि विलक्षनौं ॥१३७॥
कंदर्प दर्पहि वरन जो । मालतिय कैं हिय हरन जो ।
हौं ताहि लखिहौ चाय कै । तव होय बैन सुभाय कैं ॥१३८॥
यां कहि सभा मधि नच्चकै । सुर तालताननि जच्चि कै ।
तिथ भयो आनन्द मच्चिकै । अतिहि सो कौतुकु रच्चिकैं ॥१३९॥
वहि कैं कि इहि उद्यान में । थिर ह्वै छिनकु सुखवान में ।
प्रभु माधवै फिर हेरिहौं । मन ते कलेस निवेरिहौं ॥१४०॥
फिर नाच वहु विधि ऐठिकै । छिन में गयो सुनि वैनि कै ।
तिहि सभा मध्यहि चातुरौ । माधवहि देखिन आतुरौ ॥१४१॥

सोरठा

फेरि रंग-पट्ट टारि, द्विज आयो मकरन्द तहं ।
सब जन रहे निहारि, नैननि पलकि विसारि कै ॥१४२॥

अथ मकरन्द वर्णन

सवैया

पाग सुरग सुगंध सनी दुपटा अति अबर ओप जगावत ।
अंवुज कै निदरै मुख नैननि खंजनहू के गुमान गिरावत ॥
कचन के श्रुति कुण्डल चारु अखडित फूल छटीन्हि फिरावत ।
माधव कौ मकरन्द सखा तह आयौ अनिद अनंद बढ़ावत ॥१४३॥

सोरठा

मोसो हित सरसाय अवै कही अवलोकिता ।
मदन अरण्य सुभाय, कौतिक हित माधव गयो ॥१४४॥
मैहू अव तिहि थान माधव के ढिग जाइ हौ ।
यों कही वुद्धि निधान नच्चौ पुनि तिहि सभा मैं ॥१४५॥
करि सो नृत्य उदार इत उत फेरि निहारिकै ।
यह पुनि कियौ उचार, माधव इतहि आइऔ ॥१४६॥

सवैया

बैननि नैन कछू उचरैं अरु नैननितैं पहचानि भुलाई ।
नीठि परै पग सूकत ओठ उसासन की श्रम भी सरसाई ॥
टूक भई कि सुनैं पिक कूकनि जानि अचूक अनंग दुहाई ।
माधव के मन में रमड़यौ भ्रम के तन मैं उमडी तरुनाई ॥१४७॥

दोहा

लाग्यौ करन विचार यौ निज मन में मकरन्द ।
लख्यौ तिही विधि रूप सब हिये बढ़यो दुखदन्द ॥१४८॥

पट उघारि कै सभा में आयो माधव आप ।
पुनि मनसौ लाग्यो कहन तन में बढ्यो जु ताप ॥१४९॥

सवैया

ध्यान आनि सुचंद्रमुखी निज राखत लाज समाज की ओटैं ।
औ ससिनाथ इतेक दशा पर चूकत नाहि मनम्मथ चोटैं ॥
जो तिहि सग सुधा छिरक्यौ सु भयौ निरवारि निकार के जोटैं ।
सो अब ताहि निहारे विना मन वारहि वार अंगारिन लौटैं ॥१५०॥

दोहा

इहि अवसर मकरन्द निजु बोलि उठ्यौ हित गाउ ।
अति विचित्र यौ मित्र है माधव इत को आउ ॥१५१॥

बचन सुनत मकरन्द कौ माधव इत उत डोलि ।
बोलि उठ्यौ इहि विधि तहां कपट गांठि कौ खोलि ॥१५२॥

सोरठा

हो हितकर मकरन्द तू कित हौ अनन्द निधि ।
यह सुनि तज छर छन्द, माधव सौ बोल्यौ बहुरि ॥१५३॥

निपट चन्द्र करि ज्वाल जगत सीस पर झल झलत ।
इहि उद्यान विसाल, मद्धि एक छन विरमियौ ॥१५४॥

यौ कहि दोऊ मित्र थित भे मन्मथ विपन में ।
कलहंसक सु विचित्र, तानें देखे दूरि तैं ॥१५५॥

प्लवंग छन्द

इही विपिनि के मध्य सु माधव सोभई ।
जाहि देखि नरनारि कौन मन मोहई ।।
मालति के सुख दानि दृगनि दुख टारनौ ।
दरसैं हौं यह चित्र प्रयोजन पारनौ ।।१५६।।
कै जव माधव लहै तनक आराम कौं ।
तव दरसैं हौं जायं छाड़ि सव काम कौ ।।१५७।।

दोहा

माधव सों मकरन्द पुनि वोल्यौ मधुरे बैन ।
प्रफुलित इहि कचनारि तन बैठ्यौ मनसुख दैन ।।१५८।।
यौ कहि वैठ्यौ वृक्ष नर पुनि वोल्यो मकरन्द ।
माधव तू उद्यान ते आयौ कछू सदन्द ।।१५९।।

कवित्त

मुख अरविंद सौ अनिंदै मुरझानौ अरु,
दीर्घ उसासन से ढग अंग लटि गयौ ।
चक्रत से नैन बैन कसि कैं कटै न रैन,
मैनिकी कहा है चैन गैनहू कौ छटि गयौ ।।
सोमनाथ की सौं पुनि औरौ घनी भांतिन सौ,
काम अभिराम के चरित्रन मै जटि गयौ ।
तेरौ मन मित्र आजु काहू मृग अक्षिन के,
मेरे जानि तीछन कटाछनिसौ कटि गयौ ।।१६०।।

सोरठा

यह सुनि वचन लजाय, सिर नवाय माधव रह्यौ ।
पुनि मकरन्द लुभाय, वोल्यौ मृदु मुसकाय कैं ।।१६१।।

कवित्त

परम उदार करतार सव लोकनि कौ,
विधिहू अविधि करि निपत खिसानौ है ।
हरि की कथारु हरि कौ ऊ जग जान तुम्हें,
समै विन जा पै सोमनाथ हू रिसानौ है ।।
और नर किन्नर अमर गुन कौनु गनै,
जाकी ज्वाल झेलि नाहि सकत किसानौ है ।
मेरे वैन मान्यो भेद अपनौ वखानौ मित्र,
कौन रह्यो स्यानौ पंचवान कौ निसानौ है ।।१६२।।

दोहा

इहि सुनि माधव उच्चर्यौ सुनि प्रीतम मकरन्द ।
तो सौं क्यौ नहिं भाषिहौ अपने दुख कै दन्द ॥१६३॥
कही बात अवलोकिता सो मै उर में धारि ।
मन्मथ के उद्यान में गयौ कलेस निवारि ॥१६४॥

अथ मन्मथोद्यान वर्ननं

प्लवंग छन्द

सघन दलनि जह मंडित हरित रसाल है ।
जंबू श्रीफल बेरि फालसे लाल है ॥१६५॥
दाड़िम तूत कपित्थ मधूक विशाल है ।
कटहर बढ़हर हर्र आमलक जाल है ॥१६६॥
खिरनी अरु अजीर बिजौरा सौहनैं ।
गौंदी अरु अंम्बेल महा मन मौहनैं ॥
मिट्ठा नीब और चिरोंजी वृन्द है ।
नरियर अंविली बकुल खजूरि बिलन्द है ॥१६७॥
तैंदू अरु कमरख करौंदा आनि हैं ।
चकोतरा कचनारि लवगि सुखदानि हैं ॥
सीताफल जंबीर करहटो और है ।
गूलरि गत अखरोट ठौर ही ठौर है ॥१६८॥
जाइ जायफल और सुपारी ताल है ।
गजमुख पीपरि पुंज अनेक तमाल है ॥
सीस्यौं सैबरि कैंच असोक अनन्त है ।
सिरस सहजनैं निंब घने विलसन्त हैं ॥१६९॥
चम्पा कहूं सनस्थ कुण्डली रूप हैं ।
तिही भांति सौ कहूं कदम्ब अनूप हैं ॥
रही माधुरी लता लपटि बहु ठाम है ।
जिनकी सोभा चित्त बढ़ावति काम हैं ॥१७०॥
अरु वेदिका विचित्र सवारी पुन्ज हैं ।
तहां मण्डल के रूप बकुल की कुंज है ॥
औरौ बहु विधि वृक्ष जहां फलदानि हैं ।
रिसिल वन्द विधि किये समझि रह ठानि हैं ॥१७१॥

त्रिभंगी छन्द

वदत्री द्रुम डारनि परत्ति सुठारनि विविधि प्रकारन लपटानी ।
वहुरंगै फूलनि सुभर समूलनि करते शूलनि अंगवानी ॥
केकी किलकारैं पिकी पुकारैं भंवर गुंजारैं मद भारे ।
जनु हैं पंवारे प्रकट उदारे मन्मथ वारे मतवारे ॥१७२॥

दोहा

नवल वकुल प्रफुलित निरखि आल वाल पर जाय ।
कौतिक अवलोकन अरथ मैं वैठ्यो सुखपाय ॥१७३॥
विखरे फूल जू हैं तिन्है वीन चैन उपजाय ।
लग्यो बनावन माल में मन हरनी मन लाय ॥१७४॥

पावकुल छन्द

रूपसिंधु मथि काढ़ी जानौं । चलती मदन पतका मानौं ।
वाल वैसि मन भूषन पहिरैं । फहरै तनु सुगन्ध की लहरै ॥१७५॥
अंग अंग अंवर वहु रंगनि । सुन्दरता की खानि सुढंगनि ।
मनु अवतार लियो वरवानी । दरसी ऐसी बुद्धि समानी ॥१७६॥
विमल मुकुर सो आनन राजै । जाकी सोभा लखि शशि लाजै ।
अधरनि सुधा अवनिसी वातनि । भुज मृनालनै मृदु सुभ घातनि ॥१७७॥
कमल दलन से नैन अन्यारे । डोरे अरुन सहज कजरारे ।
तिन मैमिही लगायौ अंजन । ख़ंजन मृग सफरी मृदु भंजन ॥१७८॥
संग सहचरी निपट सयानी । अदब करत आवत अगवानी ।
वीनत फूल लाडली काजैं । हित अनंत उर में उपराजै ॥१७९॥
तिही वकुल तरवर वट सिगरी । आई चली रूप गुन अगरी ।
तिनके मध्य सु वह सुकुमारी । दमकत जनु दामिनि दुति भारी ॥१८०॥
पूरव पुण्यन तैं मैं दरसी । उर अरु हगनि सुधा सी वरसी ।
विनती वहु विधि करैं सहेली । तब कछु काज करैं अलवेली ॥१८१॥
ललिन कपोलनि झलक सिताई । शशि गज रद की दुति निदराई ।
चुम्बक लोह सटाई जैसे । ऐंचत मो हिय खैंच्यौ तैसें ॥१८२॥
विनां हेत मोकौं दुख वाढ़यौ । तो सों सांच वचन मैं काढ्यौ ।
पै शुभ अशुभ दुवौ जग मांहीं । करति भावई कछु वस नाहीं ॥१८३॥

सोरठा

मुनि माधव के भाव, पुनि वोल्यौ मकरन्द यौं ।
चित्त ठिकानै लाव, विन कारन कछु होत नहिं ॥१८४॥

सवैया

अंतर के पुनि कोऊ कहत सुकाज विगारि संवारत केते ।
ऊपर भेदि न जानि परै जिन के अब तोहि वतावतु तेते ॥
फूलत है शशिनाथ रतो पल भांन उदौत प्रभात भए ते ।
चन्द्रमनी अरु चन्द्र उयौ लखि नीर बहै सुख भीर समे ते ॥१८५॥

सोरठा

याते आगै और, कहा भई सो भाषियैं ।
यह सुनि द्विज सिर मौर, माधव वोल्यौ मधुर पुनि ॥१८६॥

हरिगीत छन्द

तिहि सग सखियन हित परखियन भृकुटि कुटिल नचाय कैं ।
मन्मथ कला सनि भरि हुलासनि अमृतमय मुसिक्याय कै ॥
पहिचानि कछु उर आनि अंतर एक नैन नचाय कैं ।
करि डीठि तिरछी मनहु बरछी दियौ मोहि वताय कैं ॥१८७॥

कर कमल नालन दै उतालनि हित विसालनि छाय कैं ।
नच्चिय हरष्षित इत निरख्खत चित करख्खत गाय कैं ॥
भूषन सुढगनि बजत अंगनि दई धूम मचाय कैं ।
परसें कपोलनि परम गोलनि अलक जालनि आय कैं ॥१८८॥

तो कौं बधाई बहु सुहाई कही ताहि सुनाय कैं ।
किहुंकौ पियारो दृगनिवारौ छवि उदारौ काय कैं ॥
संतऽरु असंतै तजि इकेतैं ऋतु वसंत मनाय कैं ।
सजि कैं विवेकैं आपु एकै थित सटैकैं चाय कैं ॥१८९॥

इक अंगुली समुहाय मो तन दाय कैं ललचाय कै ।
मेंरी रुबाकी करि चलाकी दई दीठि मिलाय कै ॥
बरनि माधव मित्र की यह सुनत चित्त थराय कैं ।
मकरन्द तजि छर छन्द समझ्यौ प्रथम लगनि वनाय कैं ॥१९०॥

दोहा

कलहंसक बोल्यो तहां बिनु पूछैं अनुराय ।
कैसी सुन्दर तिय कथा होति श्रवन सुखदाय ॥१९१॥
फिरि बोल्यौ मकरन्द कहि यातैं आगे मित्र ।
लाग्यौ पुनि माधव कहन निरख्यौ जु हौ चरित्र ॥१९२॥

कवित्त

पुलकनि अंग अंग औरै भयो आनन के,
जानि परी दुरी पंचवान की अमितई ।
दरसाने नैन अधखिले अरविंदन से,
पहिलैं हुती सो धुनि वैनन की रितई ॥
"सोमनाथ" मित्र वाकी गति के चरित्रनि कौ,
वरनि सकौं न घरी बरस सी वितई ।
चलत उतै को वह वेर वेर मेरी ओर,
चोर चितै चितई सनेह रीत जितई ॥१९३॥

दोहा

वाने विविधि कटाच्छि करि मनमथ कियौ निहाल ।
अरु कीनौं मेरो हियौ, कैऊ ठौर दुशाल ॥१९४॥
अरु वाही कौ ध्यान करि डिढ अपनौ मन राखि ।
पैं सुमरूं करिकैं रची वकुल माल अभिलाखि ॥१९५॥

सोरठा

खोजनि भीर मझार, इतने में सो ससि मुखी ।
ह्वै सिन्धुर असवार, पन्थहि सोभा देत बहु ॥१९६॥

पावकुल छन्द

हथिनी चढ़ि वह जवै सिधारी । तव मुख मोरि सु फेरि निहारी ।
गोल वक्र पंकज अनुहारी । लस्यौ वदन ताको छवि धारी ॥१९७॥
अमृत और विष सनै कटाछिन । खनि डारौ मेरौ हिय ता छिन ।
ताते और दसा सुनि मेरी । प्राननि परी प्रेम की वेरी ॥१९८॥
कोऊ वढ्यौ विकार उदारौ । मो पै कह्यौ न जात सुभारौ ।
गयो विवेक अपानप सरस्यौ । मैने प्रथम न कवहू परस्यौ ॥१९९॥
जड़ता करैं दाह उपजावै । हिम हिम करतहि ताहि बुझावै ।
धरी रहति वस्तु जु आगैं । पहिचानत न तिन्हैं हित पागैं ॥२००॥

दोहा

अपने मनतैं इते मैं, वोलि उठ्यो कलहंस ।
ऐसौ किन हियरा हरयौ, रसिकनिको अवतंस ॥२०१॥
पै यह ह्वै है मालती, जाके लखत प्रमान ।
याके चूरत चैन कौं, पचवान के वान ॥२०२॥

सोरठा

मकरन्द हु मन मध्य, कहन लग्यौ तक्षन तहां ।
सरसी मदन विरध्य, पाके उर मैं निपट ही ॥२०३॥
मनैं करौं किहि भांति, अपनैं प्यारे मित्र कौं ।
भई और ही कांति, याकी तौ इहि खेल में ॥२०४॥
कै याके मन मोह, जिन उर कैं मैलौ करौ ।
.... ॥२०५॥
पैए दोऊ बात; निहचै याहि विरत्थ है ।
नव जोवन गुन गात, प्रति पल मन्मथ वाढई ॥२०६॥

दोहा

माधवसौ पुनि प्रगट करि, कहन लग्यौ मकरन्द ।
कुल अरु ताकौ नाम तू, जानतु है अनदंद ॥२०७॥
यह सुनि कै मकरन्द सौं, वोल्यो माधव आप ।
अरे मित्त ! सुनि चित्त दै, मैं जो करतु अलाप ॥२०८॥

छप्पै

चलिवे कौं वह वाल जव वै हत्थिन पै चढ्ढिय ।
तव त्रिय पुंजनि छांडि एक उनमें तें कड्ढिय ॥
नवल वकुल के फूल वीनिवे के मिस मड्ढिय ।
मन्द मन्द मो निकटि आनि कै भई सु ठड्ढिय ॥
पुनि मिस लहि कैं मन्मत्थ को मो कौ हर प्रिय मान कर ।
यह वचन अदत्र स्रों उच्चरी अतिहि साहस चित्त धर ॥२०९॥
हे वड़ भागि ! तुमकु फूलमाला सुभ रच्चिय ।
सो मैंने अवदात बात निज उर मै जच्चिय ॥
निपट चतुर है चित्त हमारे प्रभु की वच्चिय ।
कौतिक निरख नचातु नवल वुधि विधि नैं सच्चिय ॥
तुव सव सुधराई सफल अव होतु अनंद वढ़ाइ कैं ।
यह ताके सुन्दर कंठ में सोभा पावै जाइ कैं ॥२१०॥
पुनि वोल्यौ मकरन्द चतुर है अति सो कामिनि ।
उचर्यौ माधव फेरि सुनहु वानैं अभिरामनि ॥
मेरे विनु ही कहैं भेदि उनि और सुनाईये ।
है जु भूरिवसु सचिव तासु नंदिनि छवि छाइये ॥
तिहि नाम मालती जानिये धाय वहिन हो तासुकी ।
मों सों लवंगिका कहति हैं तुम सों कथा प्रकास की ॥२११॥

दोहा

मोंसों नित प्रति मालती करत निपट ही प्रीति ।
मैं हूं अन्तर करत नहीं, यो वढ़ रही प्रतीति ॥२१२॥

प्लवंग छन्द

कलहंसक पुनि वोल्यौ सुख सरसाय कैं ।
लखी मालती ठीक वियोग विहाय कैं ॥
यह मन्मत्थ विलास उदार प्रगट्टियौ ।
जीतैं हम निरधार मरग जस जट्टियौ ॥२१३॥

पुनि वोल्यौ मकरंद........बात है ।
भूरिवित्त की कुंवरि जू वह मृदु गात है ॥
मालति मालति कहति हुती कामंदकी ।
है यह सांची वात परम आनंद की ॥२१४॥

पै नंदन के हित ताहि नृप जाचई ।
निज मंत्री पै नित्त विनोद राचई ॥
यह जग पें हम सुनीं वात परकास है ।
ह्वै है सो विधि रची जु सहित हुलास है ॥२१५॥
माधव वोल्यौ फेरि सुनों मकरंद जू ।
मै लवंगि कैं माल समेति अनंद जू ॥
निजु कंठहि तै छिप्र दई जु कतारि कैं ।
वकुल सुमन की माल सुकर में धारि कैं ॥
अति ही भई प्रसन्न कलेस विसारिकैं ।
.... ॥२१६॥

कौतिक यों दिखराय गईं सब नागरी !
जोवन रूप सुभाय गुनन की आगरी ॥२१७॥

मुक्तदाम छन्द

गयौ पुनि औरहु लौग सुभाय । चल्यौ इतकौं तब हौं अकुलाय ।
चल्यौ कितहूं कितहूं पग जाय । सनेह वढ्यौ सब देहु कम्पाय ॥२१८॥
चहौं कछु और कहौ मुख वैन । कढ़ै कछु और वढ़ाय कुचैन ।
सुनौं समुझौं नहिं और सु वात । समोय रह्यौ विष सौं सब गात ॥२१९॥
सुहाय न कोकिल की किलकार । पलास प्रसून मनौं सु अंगार ॥
सुगन्धित सीतल मंद समीर । करै झझरी सम लागि सरीर ॥२२०॥

नही पुनि नैननि नींद पलाय । न भोजन कौं मन होय अधाय ।
गई पसुरी चढ़ि लेत उसास । प्रिया मुख देखन को हग प्यास ॥२२१॥
रई वर तिक्ख चितौनि बनाय । मथ्यौ मन को मन्मत्थ छुहाय ।
गयो हरि साहस लाज सहित्त । रुचै नहिं भूखन अम्बर चित्त ॥२२२॥
कहा कहियै कहि तू उपचार । मिलैं विनु रंचक नाहि कटार ।
उठ्यौ वहु वारनि खाय पछार । फटै हिरदौ किनि पूरि दरार ॥२२३॥
सदा विहरै सुप्रिया घर मध्य । तऊ भटकै मन मोह विरध्य ।
न जानि पर्यौ यह मोंकहं भेद । इतौ वढ़िहै उर अन्तर खेद ॥२२४॥

काव्य छन्द

सुनि माधव की वात फेरि मकरंद उचार्यौ ।
मालति दरसन तोहि भलौ हुव मैं निरधारयौ ॥
तारैं तैनैं कही कपोलनि मध्य सिताई ।
तातैं वाके चित्त प्रीति निहचैं ठहराई ॥२२५॥
ताकौं देख्यौ कहां मालती नै हौं आगैं ।
लग्यौ और सौ प्रथम किधौं चित हित सौं पागें ॥
यै ऐसी वड़भाग सीलवन्तो सुकुमारी ।
नही लगावै नैन वात हम सत्य विचारी ॥२२५॥
है तोही सौं नेह जु तैं यह कही कहानी ।
करि नैनन की सैंन जु ताकी सखी सिहानी ॥
काहू कौं प्रिय इहां थित्त कहि प्रगट जनाई ।
अरु लवंगिका कही सज्जि कैं पुनि चतुराई ॥२२६॥
इतनै मैं कलहंस सरकि अति ही ढिग आयौ ।
माधव अरु मकरन्द तिनैं सो चित्र दिखायौ ॥
तब वोल्यौ मकरन्द अरे कलहंसक लीनैं ।
माधव को यह चित्र लिख्यौ ज्यौं कौ त्यौं कीनैं ॥२२७॥
पुनि वोल्यौ कलहंस हिय जानैं हरि लीनौं ।
ताही नें यह चित्र लिख्यौ मैं प्रगट सु कीनौ ॥
पुनि उचर्यौ मकरंद कहा मालतीय बनायौ ।
पुनि बोल्यौ कलहंस कहा मैं झूंठ सुनायौ ॥२२८॥
अरु माधव नैं कही मित्र मकरन्द सुहाये !
तेरे सत्य वितर्क आनिवौई ठहराये ॥
पुनि वोल्यौ मकरन्द अरे कलहंसक मेरे ।
सत्य भाखि किहिं भांति हाथ आयौ यह तेरे ॥२२९॥

फेरि कही कलहंस दारिकानैं मोंहि दीनौं ।
लवंगिका ने दियो दारिकैं रंग भीनो ॥
ऐसैं मेरे पास चित्र यह आयौ रूरो ।
मैनें तुमको दियौ सज्जि सेवकपन पूरौ ॥२३०॥

दोहा

पुनि बोल्यौ मकरन्द यहैं, कहि कलहंस उदार ।
कहा कह्यौ मंदारिका चेरी ने तिहि वार ॥२३१॥
माधव के या चित्र के लिखिवे के सुअरत्थ ।
पुनि बोल्या कलहंस यौं लहि कैं बुद्धि समत्थ ॥२३२॥
विनु देखैं न रह्यौ परै, तातैं परम विचित्र ।
कुंवरि मालती नै लिख्यौ माधव कौ यह चित्र ॥२३३॥
पुनि बोल्यौ मकरन्द सुनि माधव मेरे मित्र ।
सुचितौ रहि ह्वै है सफल तेरौ काम चरित्र ॥२३४॥

सोरठा

तिहि हित तू ललचाय, वह तोहि चाहति हियैं ।
विधि अरु मदन सहाय, मिलिवै में संसय नहीं ॥२३५॥
तुव विकार को हेत, लखिवे लायक वाल सौं ।
तू चित में लहि चेत, माधव ढिगलखि मालती ॥२३६॥
अपने मन कौं घेरि, मान कह्यौ मकरन्द कौ ।
माधव वोल्यो फेरि, भली चित्र में लिखहु है ॥२३७॥

कवित

भरि भरि आवत उमाई आंसू नैननि मे
औरई कढ़ै जु कछू वैनंनि कौ उचरौ ।
छिन में निपट जड़ताई परगट होत
जऊ उत्साह न सौ साहस हियमें धरौ ॥
'सोमनाथ' की सौं मित्र परम पवित्र तेरे
वचन विचित्रन तैं मै न कवहूं टरौं ।
मन उर भानौ नेह-नद की तरंगनि में
थरहरैं अंग इनि ढंगनि कहा करौ ॥२३८॥

पद्धरी

मैं तऊ कष्ट करि तोहि मित्र । देहौं दिखाय लखि तोहि चित्र ॥
माधव इतेक कहि चित्र रच्चि । दरसाय दियौ हित सौं परच्चि ॥२३९॥

मकरन्द मालतीय चित्र देखि। माधव सौं बोल्यौ बुधि विसेखि ।
यह प्रथम भयौ तोसौं मिलाय। इक चित्र मद्धि अब तजहु ताय ॥२४०॥
हे माधव ! सुन्दर गुण विशाल। तैं लिख्यौ चित्र अतिहो उताल ।
अरु लिख्यौ कवित्तहि चित्र पास। जिहि पढ़त चित्त सरसै हुलास ॥२४१॥

सवैया

चंदन चंद्रिक चंद अनिन्द बसंत समाजनि की अधिकाई ।
और हजारन सुन्दर वस्तु सु है जग कौं सुखदानि महाई ॥
मोकंह श्री शशिनाथ की सौंह नही इहि मध्य रतीक झुठाई ।
तच्छिन दानि अनिन्द भई मुखचंद की तेरी अमन्द जुन्हाई ॥२४२॥

दोहा

अब आई मंदारिका दासी.पट कौ टारि ।
अरे ! अरे ! कलहंस को ऐसै कह्यौ पुकारि ॥२४३॥
तहं माधव मकरन्द कौं देखत चित्त लजाय ।
मन में चिन्ती ए दुवौ कित ह्यां थित सुखदाय ॥२४४॥
निकट आय पुनि दुहुन कौ कीनौ हरषि प्रनाम ।
तब दोऊ मित्रन कह्यौ आगे आऊ सुभाम ॥२४५॥
सुनि कै यह मन्दारिका वैठी परम विचित्र ।
पुनि बोली कलहंस सौ अरे ! लाऊ वह चित्र ॥२४६॥
सुनिकै यौ कलहंस नै उन पैते लै ताहि ।
दियौ चित्र अतुराय कै सुख समुद्र अवगाहि ॥२४७॥
चित्र निरखि मन्दारिका बोली रे कलहंस ।
किहिं निमित्त कौने लिख्यौ मालति सिवी असंस ॥२४८॥

पद्धरी

उच्चर्‌यौ जु फेरि कलहस दास। दारिका वात यो सुनि प्रकास ।
मालति लिख्यौ हौं जिहि निमित्त। तानै सु लिख्यौ है यह उचित्त ॥२४९॥
यह सुनति दारि ह्वै सचैन। उचरी पीयूष सगवगे वैन ।
दोऊ सरूप गुण हित समान। विधि सफल भयौ लखि जस निधान ॥२५०॥
मकरन्द फेरि बोल्यौ सुभाय। दारिके वात कहि सत्य भाय ।
कलहंस जु तेरो परम मित्र। सो सांच कहत है यह चरित्र ॥२५१॥
यह सुनि सुदारिका सलज हेरि। है सांच वात हंसी कही फेरि ।
मकरन्द वहुरि उचर्‌यौ प्रवीन। मालतीय नै सु माधव नवीन ॥२५२॥

हौ देख्यौ पहलैं कौन ठाम । कहि विधि सौ मंडित चित्त काम ।
फिरि कही दारिका नैं बनाय । मोंसौ लवंगिका दिय जताय ।।२५३।।
मालती झरोखनि ह्व सुनित्त । माधव कौं निरखत है सहित्त ।।२५४।।

सोरठा

मकरन्द सु सउछाह, माधव सौ वोल्यो वहुरि ।
सचिव भवन की राह, निह्चै हम तुम चलहिंगे ।।२५५।।
यों कहि भये तयार, चलिवे कौं दोऊ जने ।
तव दारिका उदार, हाथ जोरि कै उच्चरी ।।२५६।।
अज्ञा दीजै मोहि, यह चरित्र सव जाय कै ।
लवंगिका को टोहि, कहौं प्रगट समझाय कै ।।२५७।।
यह सुनिकैं मकरन्द, वोल्यौ वहुरि उतालयौं ।
अपनौ काजि अदन्द, साधि समझि यै दारिका ।।२५८।।
लै सो चित्र उताल, गई दारिका तहां तैं ।
तब बोल्यौ हित पाल, माधव सौ मकरन्द यौ ।।२५९।।

दोहा

देव चंड कर दिपत है, सज्जै किरन हज़ार ।
भए द्वै पहर मित्र अब, चलिये भवन उदार ।।२६०।।
यौ कहिकै इत उत फिरै, नृत्य समाज मझार ।
पुनि वोल्यौ माधव तहां, मैं यौ मानतु पार ।।२६१।।
स्वेद नीर नव तियनिकै, कुंकम चित्र कपोल ।
अवै विगारत होयगौ, रचे जु अलिनु अमोल ।।२६२।।

सवैया

लै पहिले घनसार के सारहि फेरि हजारनि वेलि चपेटैं ।
ए शशिनाथ औ कुन्दन के अरविन्दन के मकरन्द लपेटैं ।।
चंनन सौं छिरक्यौं तिहि सुन्दर के उर ऊपर लेटैं ।
चाहतु यौं मधुराय समीर सु आय कै मेरे सरीरहि भेटैं ।।२६३।।
ए सुनि कै वतरानि अधीन हियैं मकरन्द विचारन लाग्यौ ।
मोहि बड़ो यह खेद भयौ निरवारि सकै अव मोहित पाग्यौ ।।
माधव के सुकुमार सरीरहि त्रासतु काम जु यौ हित जाग्यौ ।
क्रूर कठोर महावत ज्यौ इभ छौनहि अंकुस लै रिस पाग्यौ ।।२६४।।

दोहा

तातें हमको भगवती कामन्दी शरन्य ।
वही कलेसहि काटिहै वा विन और न धन्य ।।२६५।।

माधव यौ मकरन्द कीं सुनिकैं वात प्रकास ।
मन ही में लाग्यो कहन वढ़ै मदन को त्रास ॥२६६॥

सवैया

नागरि डीढि परी जवतैं सुधि वुधि एक भई तिहिं छांकी ।
वा विन नाहिं दुकूल रचैं शशिनाथ कहा कहौं और तहां की ॥
जानतु मेरो कठोर हियौ जु कियौ सर सालि मनोजर्न भांकी ।
नैननि में घट में अटकी खटकैं वह वांकी विलोकनि वांकी ॥२६७॥

सोरठा

यों मध्य विचारि, माधव पुनि मकरन्द सों ।
वोल्यौ वचन पुकारि, वीततु है जो दुसह दुख ॥२६८॥

कवित्त

भूले भूख प्यास वास भूपन अवास अरु,
लुएं सम दीरघ उसास उमड़ी रहै ।
सोमनाथ कहै और वरनौ कहां लौ मित्र,
चित्र उनहारि चहुँ ओरनि पड़ी रहै ॥
घरी घरी प्रतिपल यही गति मेरी तऊ,
दरस उपायन की चिता घुमड़ी रहै ।
कुन्दन के रंग मृदु अंग तिहि सुन्दरि के,
नैननि के अंदर निकाई रमही रहै ॥२६९॥

दोहा

एक ओर सव सिमटि कै, वैठे सभा मझार ।
और स्वांग की तहं भई, आमदनी निर्धार ॥२७०॥
इतौ प्रथम ही अंक यह वकुल वीथिका नाम ।
दर्शन दुहुंनि दूहूंनि कौं जहां भयौ अभिराम ॥२७१॥

हरिगीत

वदनेस नंद प्रताप जाकौ तेज दिनमनि भूल है ।
अव करन सौ ताकैं वहादुर कुंवर आनंद मूल है ॥
तिहिं हित्त कवि शशिनाथ नैं रच्यौ विनोद निसंक है ।
माधव-विनोद सु ग्रंथ कौ, यह भयो परथम अंक है ॥२७२॥

इति श्री कवि सोमनाथ विरचितें माधव विनोद नाटके वकुल-वीथी नाम प्रथमोङ्कः ।

अथ द्वितियोऽङ्कः

दोहा

पुनि परदा कौं टारिकै तंह आईं चेरी दोय ।
नृत्य कियो तिन कौ निरखि, रहे सवै सुख भोय ॥१॥

पावकुलक

दासी प्रथम सु यो वतरानी । हे सखि तू है निपट सयानी ।
तिहि संगीत भवन के कौनें । अवलोकिता हुती हित लौने ॥२॥
तासौं कहा कहति ही वातनि । मों सौ कहति न सिगरी घातनि ।
इह सुनिकैं सु दूसरी वोली । हे सहचरि ! सुनि वात अमोली ॥३॥
अवलोकिता कही यह मोसौं । सो अव निहचैं भाखौं तोसौं ।
माधव कैं जु मित्र मकरन्द । तानें आप छोड़ि छर छन्द ॥४॥
कामन्दकि सौं मनमथ वन कौ । सव विरतन्त कह्यौ हितपन कौ ।
यह सुनि पहली वहुरि उचारी । आगैं फेरि कहा कहि प्यारी ॥५॥
पुनि दूजी वोली हित भरिकैं । सुनि सखि कामन्दकि नैं अरिकैं ।
ही अव अवलोकिता पठाई । लखन मालती कौ छवि छाई ॥६॥
अवलोकिता कही मो आगैं । लवंगिका जुत हित सौ पागैं ।
है इकन्त सो सचिव कुमारी । नाम मालती अति सुकुमारी ॥७॥
वोली वहुरौं पहली चेरी । दूजी सौं करि भौंह तरेरी ।
वह तो फूल वीनवे काजैं । रही हुती पाछै हित साजैं ॥८॥
लवंगिका सु वहां अव आई । मन्मथ के उपवन तैं धाई ।
यह सुनि दूजी नैं पुनि भाख्यौ । मैंनें कहा झूठ अभिलाख्यौ ॥९॥
माधव के सुचित्र कर लैकैं । मैंनें औ सखियन कौं कैं कैं ।
लवंगिकाहि संग अपना पै । गई अटा ऊपर छवि छापैं ॥१०॥
पुनि पहली वोली हित भीनैं । हे सखि ! सुनि निहवै मन दीनैं ।
लिग्यौ जु कर माधव कैं चित्तैं । सो निजु सुख पावन कै हित्तैं ॥११॥
दुतिय उचारी लै पुनि सासैं । वाकों सुख कहा सु प्रकासैं ।
भलैं आजु माधव जिन देख्यौ । मन्मथ वन में रूप विशेख्यौ ॥१२॥
और वात अव तोहि सुनाऊं । नृप नै नन्दन हित्त अगाऊं ।
मंत्री पै सु मांलती जाची । तव यौं कही सचिव ने सांची ॥१३॥

निज पुत्री के प्रभु नरनायक। याकौं कहा कहत सुखदायक।
तातैं वड़ो साल यह ह्वै है। मालति के जीतव सुख ख्वै है॥१४॥
फिरि वोली पहली हुलसानी। कमन्दकि सिद्धिनि हम जानी।
कछू सिद्धि तासो दरसै है। अपनो भायो सुख सरसै है॥१५॥
पुनि वोली दूजी गहि गव्वै। हमैं कहा इन वातनि अव्वैं।
यौं कहि दोऊ नांचि सभातैं। निकसि गईं परदा में ह्वां तें॥१६॥

प्रवेशक

दोहा

कथा जु पहले अंक की, कहत दूसरे मध्य।
ताहि प्रवेसक कहत है, सुकवि सवै हित लध्य॥१७॥

सोरठा

इतने में पट्ट टारि, मालति और लवंगिका।
आईं औसर धारि, रंग भूमि में चाप कैं॥१८॥

काव्य छंद

नच्ची सभा मंझारि मालती सहित लवंगीय।
मनिगनि भूषन अंग वसन सज्जैं वहु रंगीय॥
लवंगिका सौं फेरि मालती पूछन लागीय।
मन्मथ वन की वात चित्त में प्रेम उमागीय॥१९॥
लवंगिका उच्चरीय फेरि मालति सौं तच्छन।
हौ वाके ढिंग गई हुती वह परम बिच्छन॥
वकुल माल यह मोहि दई हिय हरप वढ़ायैं।
इतनो कहि सो दई मालति कौं हित छायैं॥२०॥

त्रिभंगी छन्द

माधव निज मनकी मन्मथ बनकी, वकुल सुमन की माल रची।
सो प्रगट डिठाई करि अतुराई, सहचरि लाई सोभ सची॥
मालति को दीन्ही ह्वै सुख चीनी, निपट प्रवीनी जनु वानी।
तिहिं लखत सयानी सौरभ सानी, मृदु मुस्क्यानी थहरानी॥२१॥

दोहा

वकुल माल कर मांझ लै, मालति सुख सौं हेरि।
वनी अमिल इक ओर क्यों, ऐसैं उचरी फेरि॥२२॥

वोली वहुरि लवंगिका, मालति सों लहि धीर ।
इस रचना मैं रावरी, है निहचै तकसीर ॥२३॥
यह सुनिकै पुनि मालती, रस मैं अति अन्हाय ।
कैसे मों तकसीर है, सो तू कहि समझाय ॥२४॥

सोरठा

ए मालति के वैन, सुनिकैं हरपि लवगिका ।
कहन लगी सुख दैन, उत्तर ताही वात कौ ॥२५॥

सवैया

अंगनि में थहरानि छई अरु नैनन में प्रगट्यौ रंग लाल है ।
वार अने कसियौ अंगुरीन भयौ तिहि ठौर ही और हवाल है ॥
भावतीं तैंही विगारी इती यह, मौरसिरी के प्रसून की माल है ।
तू चितई तिरछौही चितौनि सु वाकैं भई वरछी सी दुसाल है ॥२६॥

तोमर छन्द

उचरी सु मालति फेरि । उरतैं कलेस निवेरि ।
सखि सांच भापत तोहि । तू निपट प्यारी मोहि ॥२७॥
मन राखि जानत ठीक । सु लंवगिका विधि नीक ।
यह सुनि लवंगिय आप । उचरी सिरावत ताप ॥२८॥
मै कही सांच सुभाय । जानैं कहा समुझाय ।
पै एक निहचै वात । सुनि मालती मृदु गात ॥२९॥

सवैया

मन्द समीर लगै विकसै अरविंदन की दुति छावन वारे ।
खंजन मीन मृगीन नवीन के पुंजन के मद भंजन भारे ॥
ते दृग नैनें विलोकन कौ वकुलावलि के मिस ही उत डारे ।
भौंह नची के कटच्छन तच्छन ताकौ भए जनु वान विसारे ॥३०॥
यौं सुनि मालति वात सवै सु लवंगिय सौ उचरी भरि अंकहि ।
हे सखी ! जाकौ विलोकत आनन कीजिये कैसे समान मयंकहि ॥
जासैं वियोग भयें शशिनाथ सहैं पुनि कौन मनोज अतंकहि ।
गो सुख सोय सकै परजंकहि को करिकैं सुधि वा अकलंकहि ॥३१॥

दोहा

यौं कहिकै वहुर्यौ कह्यौ चलि उत जा इह वैन ।
यह सुनि फेरि लंवगिका, वोली विहसति नैन ॥३२॥

सोरठा

तँहू नाच्यौ नाच, तिहि औसर पै लाडली ।
मैं भाषत हौं सांच, चाहे सो तू किनि कहै ॥३३॥
यह सुनि कै बतरानि, ह्वै सज्ज सो मालती ।
लवंग के ढिग आनि, कहन लगी फिरि और कहि ॥३४॥

लवंगिका हुलसाय, बैन बहुरिय यौं उच्चरीय ।
कौतिक गयौ निराय, हौं ह्वां तैं पुनि आयकैं ॥३५॥
गई दारिका गेह, तापैं तैं लै चित्र वह ।
उर मैं भरे स्नेह, तो पै आई चपल गति ॥३६॥

काव्य छन्द

फिरि बोली मालती दारि कहि क्यौं तैं दीनौ ।
मेरौ लिख्यौ सु चित्र निपट ही रंगनि भीनौं ॥
पुनि लवंगिका कही सुनौ मै दोनीं यातैं ।
माधव कौ कलहंस दास है हितू सिहातैं ॥३७॥

मन्दारिय कै मित्र दारिका ताहि दिखैहै ।
यह अपने उर मद्धि निपट यासौं सुख पैहै ॥
यह सुनिकैं मन मद्धि मालती नैं निरधार्‌यौ ।
अपनैं प्रभु कौं जाय दिखैहै प्रन सो पार्‌यौ ॥३८॥

फिरि बोली मालती प्रगट करि सुन्दर बानी ।
अब तू चाहति कहा सहचरी कहि सुखदानी ॥
लवंगिका यह सुनत चित्र मालतहि दिखायौ ।
नहीं निरखि सुकुमारि उच्चरिय हिय भरि आयौ ॥३९॥

बडौ अचंभो एह हृदय मेरौ नहिं मानैं ।
अजहूं लौ सुनि सखी वचन मैं सांच बखानैं ॥
कछु अक्षरहू लिखै लगी पुनि तिन कौं वांचन ।
पंकज दल से नैन लगै रंगनि मैं राचन ॥४०॥

सवैया

चंदन चंदन चन्द्रि अनिन्द बसन्त समाजनि की अधिकाई ।
और हजारनि सुन्दर वस्तु सुहै जग कौ सुखदानि महाई ॥
मो कहं श्री शशिनाथ की सौह नहीं यह मद्धि रतीक झुठाई ।
तच्छन दानि अनंद भई मुख चन्द की तेरी अमंद जुन्हाई ॥४१॥

सोरठा

परगट वाचि कवित्त, पाय परम आनंद कौ ।
लिख्यौ हाथ में चित्त, तासौ यौं लागी कहन ॥४२॥

सवैया

है लिखिवे की तुम्हैं चतुराई त्यौं वैननि हूं मै भरी मधुराई ।
तच्छनि ही सुख होत तुम्है तकि पाछै मनौं उर ज्वाल जराई ॥
ए शशिनाथ न देख्यौ तुम्है जिनसौ नवला क्यौं यही पर आई ।
जानैं विलोकि लिये कितहूं धिकु ताहि न जो विन मोल विकाई ॥४३॥

दोहा

इतनौ कहि फरके अधर, ढरके अश्रु अपार ।
भीजे आंचल कंचुकी, रंच न रह्यौ करार ॥४४॥
वोली बहुरि लवंगिका, उरमे प्रेम बटोरि ।
धीरज तोहि न मालती, अजहुँ लौं दुख तोरि ॥४५॥
वहुरि उचारी मालती, कैसै धीरज नांहि ।
उचरी फेरि लवंगिका, सुनि समुझौ मन मांहि ॥४६॥
मालति जिहि हित तू लखी, मध्त्री मिडी समान । ?
ताहू कौ जीवौ दुलभ लागे मन्मथ वान ॥४७॥
वोली वहुरि यौं मालती साहस हियैं वढ़ाय ।
अब तों वहु जीवत रहौ संकट दूरि बहाय ॥४८॥

सोरठा

मोकौं तौं पुनि दूरि, समाधान सखि जगत में ।
मैं जु कहत हित पूरि, सुनि ताकौ चित लाय कैं ॥४९॥

सवैया

जुर जीरन ज्यौ पजरावतु अंगनि को इहि पारहि पाय सकै ।
उर में अनुराग हुतासन सौ दहकै सुन मेरु बुझाय सकै ॥
शशिनाथ कहा कहियै वहु वैननि नैननि नींद न आय सकै ।
सजनि सुनि तात न मातनहूं पुनि मोहि न क्योंहूं वचाय सकै ॥५०॥

मोहन मूरति नीरज नैन मनौं फिरि मैन सरीर धरयौ है ।
डीठि परयौ जबतै तब तें सुनु सासन जातु हियौ रगर्‌यौ है ॥
और कहा कहियै शशिनाथ चहै अब प्रेम दुरयौ उघर्‌यौ है ।
कोरि भुंजनि कौं निदरै अंग अंगन यौं विष सौ विगर्‌यौ है ॥५१॥

सोरठा

बहुरि लवगीय वैन, उचरी सचिव कुमारि सों ।
यामे संसय है न, तू जु कहत अकुलाय कै ॥५२॥
सज्जन के जु मिलाप, परगट तौ सुख देत है ।
बिछुरि बढ़ावै ताप, ते जानै अनुभव जिन्है ॥५३॥

सवैया

तुम ओट अटारी झरोखनि ह्वै दुरि कै छिन जाहि निहारतही ।
परिपूरन चंदहि ज्वाल करान सौं मान्यौहि पैं सुधि हारतहीं ॥
ससिनाथ लख्यौ अवतो भरि डीठि मुकाम अरण्य विहारतहीं ।
तिहि पीर गंभीर की बात कहा दिन बीतत क्यौंत विचारतहीं ॥५४॥

पावकुलक छंद

तातै सुनि मालीय पियारी । दुलभ मनोरथ फल है भारी ।
काम निपट साहस की पामैं । कवि पंडित यौं कहत कथा मैं ॥५५॥
निहचै इती बात हम जानै । तेरे आगे सांच बखानै ।
यह सुनि लवंगिका की बानी । बोली सचिव कुमारी हित सानी ॥५६॥
हे सखि मो सुभ चाहन वारी । हिम्मत हिये बढ़ावन वारी ।
जा चलि कछूक तोकौं भावै । ता निहचैं तू समझि उपावैं ॥५७॥
इतनौं कहि अंसुवा भरि नैननि । उचरी यौं मालति पुनि वैननि ।
बेर बेर हौं वाहि निहारी । सो मैने ही बात बिगारी ॥५८॥
नैंकु न धीरज मन में लाई । अरु अपनी कुलकानि विहाई ।
तुच्छ भई हौं अतिही तातैं । उरझि गई दुख मैं हित रातैं ॥५९॥
यै सुनि और सहचरी मेरी । भावति मोहि भलाई तेरी ।
तातैं तोसों कहत अकेली । गुनियौ सांच हिये मैं हेली ॥६०॥

सवैया

बानन वेधि कठोर अंनग सु अंगनि कौं मझरी करि डारी ।
जालिम ज्वाल समान मयूषहि चंद उदौ लहि नित्त पजारी ॥
उत्तम मात पिता कुल प्रीतम क्यौहू नहीं इन सौं निर वारौ ।
मो मरिबोई बनयो सजनी करतार बिना न बचावन हारौ ॥६१॥

तौमर छन्द

इह सुनत वैन मलीन । सु लवंगिका परवीन ।
चिन्ती हिय अकुलाय । या कौ कहाऽब उपाय ॥६२॥

इहि समय मैं प्रतिहारि। नैपथ्य अर्ध उघारि ।
उच्चरिय वचन पुकारि। अपनौ सुकाम विचारि ॥६३॥
कामन्दकी भगवानि । आई इहां सुख मानि ।
यह सुनत श्रवनन वैन। वोली दुवौ लहि चैन ॥
भगवति कहां इहि ठाम। आई विनोदनि धाम ।
प्रतिहारि उचरी फेरि। कर जोरि संक निवेरि ॥
मालतिहि देखन काज। आई सु सिद्धि जहाज ।
इह सुनत दोऊ वाम। बोली समेत अराम ॥६६॥
तौ कहा है अब ढील । आओ चली सुभसील ।
इह वात सुनत रसाल । प्रतिहारि दुरिय उताल ॥६७॥
मालतीय नें सो चित्र। राख्यौ छिपाय विचित्र ।
चित्ती लवंगीय चित्त। तिहि समैं काज निमित्त ॥
यह भई उत्तम वात । जो सिद्धिनी सुभ गात ।
आई अवै इहि ठौर। सव मंगलनि की सिर मौर ॥६९॥

दोहा

इतेन में कामंदकी, अवलोकिता सहित्त ।
पट के वाहर आय, यह वोली वचन उचित्त ॥७०॥
धन्य भूरिवसु कौ जु यह दुदूं लोकनि अविरुद्ध ।
कह्यो वचन छितपाल सौं, ह्वै कै उर मैं सुद्ध ॥
निहचैं हो महाराज प्रभु, निजु कन्या को आप ।
मोसौं ताको कीजियै, इतनौ कहा अलाप ॥७२॥
अरु मन्मथ उद्यान में भयौ जु है विरतन्त ।
वकुल माल अरु च्त्रि कौ, यहू सध्यौ सुभतन्त ॥
अरु जु परस्परि प्रीति अति, नारि पुरुष में होय ।
यहू महामंडल कह्यौ अंगिर नैं मत टोय ॥
मन अरु नैननि मद्ध जो होय उछाह उदार ।
तौ निहचैं वा काज कौं सुगम करै करतार ॥
यह सुनिकैं अवलोकिता, वोली समौं विचारि ।
आगै है यह मालती देखौ जू निर्धारि ॥७६॥

सवैया

कदली नव कोस समान मही सुकुमार सरीरनि डीठि परै ।
मुख चंद कछूक कला घटि सौं अवलोकत ही तन ताप दरै ॥

शशिनाथ कहै सु मनम्मथ दाह सहै न इतै उत कौं विहरै ।
यह मो मन मद्ध विलास भरै वहुर्यों थहरावत त्रास करै ॥७७॥

वड़ी चौपाई

वर कोमल गोल कपोलनि ऊपर दरसत विन्ह सिताई ।
घूमत से लोचन अरु दुख मोचन अंग अंग दुवराई ॥
यह लागत तऊ निपट अव नीकी जऊ सनेह सताई ।
ढिग आनि ध्यान मैं प्रान पियारी सफल करत तरुनाई ॥७८॥

सवैया

ओठ अनूप दुवौ कर कैं उचकै कलिका कुच कोरु सुहेली ।
है पुलकावलि कपोलनि पै अरु देह दवी जनु चम्पक वेली ॥
संग उसास हलै फुहरी मनमत्थ विथा नही जात पछेली ।
घूमत नैननि होत अचेत उठै कवहूं पुनि चेति नवेली ॥७९॥

संजुता छन्द

डगरी निकट काम थकी । सज धीर कौ छरछन्द की ।
उत मालतिय सिखायकैं । लाई लवंगि पचाय कैं ॥८०॥
ठाढ़ी भई कर जोरिकै । दोऊ सनेह वटोरिकै ।
मालतीय उचारी चेतसौं । कामन्दकी सौं हेत सौं ॥
हे भावती ! हित भरति हौ । अव तुम्हैं वन्दनि करति हौं ।
कामन्दको सुनि वात कौ । उचरी लियै निज घात कौं ॥८२॥

सवैया

पूरन चंद समान लसै मुख जाकौ अमंद समेत लुनाई ।
काम कमान बनी भृकुटी गर नैननि में झलकै अरुनाई ॥
चैन वढ़ै सुनि वैनन कौं शशिनाथ सनेह तैं सांच सुनाई ।
तू जिहि लायक ताहि फलौ अब ता मनभावन की तरुनाई ॥८३॥
हे महाभागिन मालती । लहि भावनौ फल मालत ।
वोली लवंगीय तच्छनं । सिद्धिनिहि सौ सुभलच्छनं ॥८४॥
इहि मंजु आसन राजियै । इहि भवन सोभन साजियै ।
थिति भई वाहि निहारिकै । वैठी सवै हित पारि कै ॥८५॥
मालति सु वोली फेरि कैं । सिद्धनि सौं हित घोरि कैं ।
भगवति तुम्हारै कुशल है । सुनि कैं खिलैं हिय कमल है ॥८६॥
सुनि सिद्धिनी सु उचारियौ । लै कैं उसास निहारियौ ।
है कुशल ही यह जानियैं । ताको कहा वखानियै ॥८७॥

दोहा

यह सुनि औह लवगिका मन में कियो विचार ।
कपट नाट कौ प्रगट यह कीनौ इनि व्यौहार ॥
ऐसौ मन में चिंतकैं लवंगिका सु प्रकाश ।
कामदिकि सौ उच्चरी मन में पूरि हुलास ॥
गहभरि आए कंठ सौ क्यौ बोली तुम वैन ।
सो हम सौ कारण कहौ ना तरु बढ्यौ कुचैन ॥९०॥

सोरठा

लवंगिके की वात, सुनिकैं पुनि कामन्दकी ।
उचरी लै निज घात, औसर कौ पहिचानिकै ॥
निहचैं प्रेम विरुद्ध, संसारी अरु जुग्गिनी ।
हिंत गुन बाढ्यौ क्रुद्ध, अन मिलती तुव वात सुनि ॥
यह सुनि वात मलीन, वोली वहुरि लवंगिका ।
हे सिद्धिनि परवीन, कहा कह्यौ तुमने वचन ॥९३॥
यह सुनि सिद्धिनि आप, लवगिका सों उच्चरिय ।
तैं नहिं सुन्यौ प्रलाप, जो जानत सगरो जगत ॥९४॥

सवैया

अस्त्र मन्मंत्थ कौ इह सिद्ध सरीर सवै जगजीतन वारौ ।
और अनेक विलासन कै घर कुंदन की दुति कन्दन हारौ ॥
सो अनलायक नायक जोग को सोच बढ़यौ उर मध्य उन्हारौ ।
मालती सुन्दर के गुन सुन्दर मन्द ह्वै जैहै विलाइ अपारौ ॥९५॥
चारौ कुरंग कुढंग वन्यौ मुख नैन कु चैंन भरे मुडरानैं !
औ ठाने कै पुनि वाहिर लौं चमकैं सित दन्त अनन्त भया नैं ॥
सत्तरि सवत को मतमन्द सभा मधि वात निलज्ज वखानैं ।
रीतहि 'नन्दन' लायक है कहा मालती ? जाहि सवै जग जानै ॥९६॥

पाव कुलक छन्द

कामन्दिकी की वात असेली । य सुनिकैं मालति अलवेली ।
भई चित्त सौ निपट मलीनी । पजरति उच्च उसासै लींनी ॥९७॥

दोहा

सभा मद्धि तिय मालती, नच्चिय निपट दुचित्त ।
अंसुवनि सौं अंखियां भरीं, उर मैं उरझौ मित्त ॥

वोली यों सुलंवगिका, मंत्री नैं सुख छाय।
नन्दन को मालति दई, नृप के हुकमैं पाय॥
भूरिवित्त कौं नगर के निन्दत है जन सव्व।
यह सुनि वोलती मालती, उर तै छाड़ि गरव्व॥

मोकौ मेरे पिता ना लागै लोभ चपेट।
अपनौ भलौ विचारि कैं कीनो नृप की भेट॥
फिरि वोली कामन्दकी अपनें समौ विलोकि।
वड़ौ अचंभा है यही कहियै कासौं टोकि॥

विना विचारैं सचिव नें क्यां कीनो यह काम।
अथवा कित कपटीन कै संचति नेह ललाम॥
नृप को निपट खुसामदी, है नन्दन तिहिं अर्थ।
कन्या दियै सु होयगी मेरो मित्र समर्थ॥१०४॥

तोमर छन्द

सुनि कियौ चित्त विचार। मालतिय नै तिहि वार।
पितु कौ भलौ हुव भूप। नही मालती सु अनूप॥१०५॥

यह सुनि लवंगिय फेरि। उचरी दया द्दग हेरि।
भावतीय नै जो वैन। उच्चर्यौ सत्य सुऐंन॥१०६॥
जानतु न हौ परधान। कै है कुरूप निदान।
अरु वद्ध है मतिहीन। 'नन्दन' सु अंगन छीन॥१०७॥

क्यों ताहि मालति देत। जग मद्धि अपजस लेत।
यह श्रवन सुनत अलाप। मालतीय चिती आप॥१०८॥
मो कोह सौपतु हाय। हुव वज्रपात सु आय।
मै अति अभागिन हाल। विधि क्यों कियौ यह ख्याल॥१०९॥

वहुर्यौ लवंगिय नार। उचरी प्रकास पुकारि।
जु ग्गिनीय सौ कर जोरि। छर छन्द वृन्द वटोरि॥११०॥
है निपट ही सुकुमारि। मेरी महा हितकारि।
मालतीय ताके प्रान। तुम राखि लेउ सुजान॥१११॥

तुव पुत्रिका परमान। है यहू वुद्धि निधान।
यह सुनत सिद्धिन भाम। उच्चरीय वचन उदाम॥११२॥
भग्वती पन अव और। का करिसकैं इहि ठौर।
कन्यान कौ प्रभु वाप। जो चहै करइ सु आप॥११३॥

दोहा

पै सकुन्तला नैं कियो अपनौ आप विवाह ।
धरनीपति दुष्कन्त सौं पंडित हियैं उछाह ॥११४॥
और अनेकनि कियैं यौं अपनैं व्याह विलास ।
है मेरे उपदेस मै साहस को आभास ॥११५॥
दै नन्दन कौ मालती, सुचितै हउ प्रधान ।
धूमकेतु ग्रह वस परे, ज्यौं ससिकला सुठान ॥११६॥

अमृत गीत छन्द

यह सुनि मालति मन में । पुनि इभ सोचिय छिन में ।
अंसुवन अंचल भिजयौ । सुवरन सौत न छिजयौ ॥११७॥

पावकुलक छन्द

नामहि कौं तू पितु कहूवायो । अति तृष्णा के हाथ विकायौ ।
हाय ! हाय ! पव्वय तै पटकी । तै जु करी यह वात कपट की ॥११८॥
अवलोकिता उच्चरी तच्छिन । भगवति भई अवार विलच्छिन ।
वह ह्वां ह्वै है अति अकुलानौ । वाकौ दुख निहचैं तुम जानौ ॥११९॥
कामदानि यह सुनिकै वोली । तंह उताल तू जा अनमोली ।
है मेरो यह निपट पियारो । नहि एकौ छिन करत निनारौ ॥१२०॥
सुनि दुहुनि की यह वतरावनि । लवंगिका भरिकै चित चावनि ।
सरकि मालती के लगि काननि । वोली वचन सनेह उठावनि ॥१२१॥
भग्वति सौ वाकी सव रीतें । सुनि लीजै अव सहित प्रतीतें ।
यह सुनि पुनि मालति नैं भाख्यौ । भली वात मो हिय अभिलाख्यौ ॥१२२॥
यौ वतराय लंवगिय जाहर । सिद्धिनि सौं वोली तिहि ठाहर ।
को है सो माधव तुम जाकौ । ऐसौ चाहत प्रगट प्रभा कौ ॥१२३॥
यह सुनि कामन्दकिय उचारी । है यह कथा निपट ही भारी ।
यौ सुनि लवंगिका पुनि भाषी । मै सुनिवे कौ अति अभिलाषी ॥१२४॥
ऐ सुनि वैन सिद्धिनि वोली । दूती कर्म मद्धि अनमोली ।
है लवंगिके सुनि मन दीनै । मै भापति हौं तेरे लीनैं ॥१२५॥
विदरभ देस नृपति को मंत्री । विद्यावन्त सुसील सुतन्त्री ।
जाको सुजस दिगन्तन छायौ । उज्जल मनौ वितान तनायौ ॥१२६॥
धीरजवन्त जुद्ध जितवैया । जाचक्र कौ सन्मान करैया ।
महासुधी है वंह जैसो । जगत मद्धि दुर्लभ नर तैसो ॥१२७॥

देवराति है नाम सुहायौ । विप्र वर्ण उत्तम पद पायौ ।
अपने सम तेरौ पितु जानें । जाके गुन सब जगत बखानें ॥१२८॥
यों सुनिकै मालति सुकवारी । लवंगिका सौ कह्यौ सुखारी ।
हे सखि ! नाम जो भग्वति लीन्हौं । सुमिरै मो पितु ताहि प्रवीनौं ॥१२९॥

दोहा

यह सुनि वहुरि लवगिका, वोली हित सरसाय ।
संग पढ़े विद्या दुवौ, यौं सब कहत सुभाय ॥
पुनि बोली कामन्दकी, सिद्धिनि बुद्धि वढ़ाय ।
लवंगिके अरु मालतिहि, आछी भांति सुनाय ॥१३१॥

सवैया

बाल कु चंद उदै गिरितैं प्रगटौ जनताप अतूल दरैया ।
सुन्दर मन्दिर है जस कौ शशिनाथ समूह कलानि भरैया ॥
तासम और वियौ जगमैं न कियौ विधिने हित फंद परैया ।
वैन बनाय कहा कहियै अतहि नित नैननि चैन करैया ॥१३२॥

तोमर छन्द

यह सुनि लवंगीय फेरि । मालतीय कौ मुख हेरि ।
लगो कान उच्चरी वैन । ह्वै है सुमाधव ऐन ॥
पुनि कही सिद्धिनि वात । औरौ सुनौं हुलसात ।
विद्या पठन इहि ठाम । आयौ सु है तज धाम ॥१३४॥

सवैया

अब स्याम नवीन पयोधर सौ अभिराम जिहीं मग आवतु है ।
शशिनाथ तितै तित आननचंद प्रकास अनंद बढ़ावतु है ॥
पुर की झंझरीन झरौंखनि कौ कमलाकर की छवि छावतु है ।
अति शील सनै तिय नैननि कौं कुवलैनि के तूल खिलावतु है ॥

सोरठा

वाल मित्र मकरन्द नित प्रति तकि संग ही ।
विद्या तर्क अमन्द, पढ़न जातु इहि नगर में ॥
है माधव तिहि नाम, यह कहि जुग्गिन चुप भई ।
तब मालती ललाम, अति आनंद मान्यौं हियैं ॥१३७॥
लवंगिका के कान, लगिकैं यह उचरी वचन ।
तैं सखि ! सुन्यौ वखान, जो भग्वति नैं प्रगट किय ॥१३८॥

दोहा

यह सुनि वहुरि लवंगिका वोली सुनि सखि वैन ।
बिनु समुद्र कहूं होत है कल्पवृक्ष सुखदैन ॥
इह औसर नैपथ्य मैं भई संख धुनि धीर ।
वोलि उठी कामन्दकी तच्छिन बुद्धि गंभीर ॥१४०॥

सोरठा

वड़ौ आचिरज एह, वातनमैं टरिगौ समय ।
करनौ जप जुत नेह, आंवदनी निसी की भई ॥१४१॥

सवैया

अस्त दिनेस भयौ अव लौं किनही पति संग विहंगनि छडित ।
संपुट वांधि रहैं अरविन्द घटा सम आवत रैनि घमंडित ॥
रंचक जो नछित्रन की दरसांति विचित्र कलेश निखंडित ।
संख प्रतिध्वनि उच्च अवासनि पूरि उमंडि अकासहि मंडित ॥१४२॥

दोहा

सो अव अपने धाम कौं चलिये यौं वतराय ।
कामन्दकी अवलोकिता, ठाढ़ी हुव अंगराय ॥
वोल्यौ वहुरी मालती, सव की डीढि बचाय ।
मै भूपति कौं वलि दई, पितु नैं मोह भुलाय ॥
पितु कौं नृप प्यारौ भयौ, नहीं मालती रच ।
यौं कहि असुवनि नैंन भरि फिरि उचरीय प्रपंच ॥
हाय ! हाय !! पितु विकि गयौ, तू तृष्णा के हाथ ।
मानि लई अब अन्ति पैं, यही चलैगी साथ ॥१४६॥

पावकुलक छन्द

यह कहि पुनि उर आंनद मान्यौ । प्रथम जु सखि ने वचन वखान्यौ ।
उत्तम कुल उत्पत्ति वताई । वाकी सो यह सुभ वनि आई ॥१४७॥
कलपवृक्ष विनि समद न प्रगटै । नहिं क्यौंहूं मेरो पन पलटै ।
फिरि वह कहूं दीठि में आवै । तो नैननि कौ सुख सरसावै ॥१४८॥

दोहा

कामन्दकी अवलोकिता, जव उठि चलीं उताल ।
तब वोली सु लवंगिका, अतिही बुद्धि विसाल ॥

तोमर छन्द

अवलोकितैं इत आय। इहि सीढ़ि धारहु पाय।
यह निपट उत्तम राह। यौं कहि भई स उच्छाह ॥१५०॥
अवलोकिता सौं फेरि। कामन्दकी हित हेरि।
उच्चरिय औसर पाय। ए कन्त ह्वै मुसकाय ॥१५१॥
अति चतुर दूती कर्म। मैने कियो अब धर्म।
अरु रही न्यारी आप। लघु कियौ काज अनाप ॥१५२॥
वर और सौं हति प्रीति। पितु वचन कीय प्रतीति।
पहिलौ कह्यो विरतन्त। अरु काज ह्वै वौ तन्त ॥१५३॥
हम तैं महातम तासु। इनि सुन्यौं मंडि हुलासु।
करनौं हमै हो काज। सो कियो हित सौं आज ॥१५४॥

दोहा

जौ विधि को कर्तव्य है, सो करिहै निर्धार।
या में कछु संशय नहीं, वही जगत आधार ॥१५५॥

मधुभार छन्द

कहि यौं सुवात। अतिही सिहात।
पट मद्धि सव्व। डगरी अगव्व ॥१५६॥

दोहा

लवंगिका कौ संग लै, मालति सचिव कुमारि।
धवल अटा पैं जायकैं, लसी विरह उर धारि ॥१५७॥

हरिगीत छन्द

वदनेसनंद प्रताप जाकौ तेज दिनमनि तूल है।
अव करण सौ ताकैं वहादुर कुंवर आनंद मूल है॥
तिहि हित्त कवि शशिनाथ नैं रच्यौ विचार निसंक है।
माधव विनोद सु ग्रन्थ कौ यह भयौ दूजौ अंक है॥

इति श्री माथुर चतुर्वेदी मिश्र सोमनाथ कवि विरचिते माधव-विनोद नाटके धव-गृह नाम द्वितीयोऽङ्कः।

अथ तृतीयोङ्कः

दोहा

इतने में बुधिरक्षिता आई अम्बर टारि।
सकल सभा के जनन नैं, दीनें पलक बिसारि ॥१॥

हरिगीत छन्द

तन वसन कंचन हृदय वंचन कला सकल निवान है।
जिहि उरज उन्नत विरह धुन्नत वदन चंद समान है॥
मदयंतिके की गुरु सुन्दर समद सिन्धुर गच्छनी।
सुभलच्छनी जक जच्छिनी मृग अच्छिनी बुधि रच्छिनी ॥२॥

दोहा

पुनि समाज में नाचि कैं, बुद्धिरक्षिता आप।
बिनु देखेंई उच्चरी, तजि कैं उर को ताप ॥३॥

तोमर छंद

अवलोकित अभिराम। कित भगवती सुललाम।
इतनो कहत सुख पाय। अवलोकिता गई आय ॥४॥
बुधिरक्षिता सौं वैन। उचरी सु यौं बुधि ऐन।
सठ है कहा तू बाल। उचरै जु है यौं हाल ॥५॥
भगवती कौ अविकार। डगरै भई सु अवार।
मालतीय के घर जाय। बैठी सनेह बढ़ाय ॥६॥
बुधिरक्षिता इह बात। सुनिकैं हरप्पत गात।
बोली बहुरि अतुराय। अवलोकिताहि सुनाय ॥७॥
अब तू चली किहि द्वार। सो भापि भेद उदार।
यह वैन सुनत प्रमान। अवलोकिता गुनवान ॥८॥
उचरी सन्मुख हेरि। बुधिरक्षिता सौं टेरि।
भग्वती नैं जहं मोहि। पठयौ सुभाय तिहुं तोहि ॥९॥
मोंसों कही तुव जाह। ह्यांतैं समेत उछाह।
अरु माधवैं समझाय। कहियौ सु यह लहिचाय ॥१०॥
वन कुसुम निधि मैं जाय। बैठे सु आप छिपाय॥
शशिनाथ मंदिर पास। है दिव्य थल परकास ॥११॥

तहं घन अशोकन मध्य । उर निपट आनंद लध्य ॥
माधव गयौ अतुराय । सत्र ओर काज लुभाय ॥१२॥
सुनि कै इही विधि वैन । वुधरक्षिता सुख दैन ॥
उचरी कहा तिहि ठौर । माधव गये सिरमौर ॥१३॥
ह्वै है वखानि सुवात । उर सुनन कों अकुलात ॥
अवलोकिता सुनि फेरि । उचरी हिये हित घेरि ॥१४॥
ह्वै ...चोंदसि आज । भग्वती सिद्धि जहाज ॥
मालतीय कौ लै संग । जहै तहां सु उमंग ॥१५॥
इहि विधि वढ़य सुहाग । तो सौ कही वड भाग ॥
निजु हत्थ ही समरत्थ । शशिनाथ पूजन अत्थ ॥१६॥
वर वीनिहै नव फूल । मंडित सु गन्ध समूल ॥
मालती अति सुकुमार । संग लवंगीय प्रनपारि ॥१७॥
अरु भग्वती हू आप । चुनिहै सुफूल अताप ॥
निधि कुसुम विपिन मझार । पग धारिहै अविकार ॥१८॥
ह्वै है दृगनि सी दौर । दोऊनि मैं तिहि ओर ॥
अरु तू चली किही ठार । सो सज्जि प्रगट उचार ॥१९॥
यह सुनि चली विधि भेद । वुधिरक्षिता तज खेद ॥
उचरी समेत सयान । छरछन्द छोड़ि निदान ॥२०॥

दोहा

कुसमाकर वन चलन कौ संकर दरसन काज ।
मोहि वुलायो संगकौं, मदयतिका सलाज ॥२१॥
सु मैं भग्वती कैं अवै, वन्दन करि सिर नाय ।
फिरि उताल तहं जाय हौ, तो सौं कही सुनाय ॥२२॥
यह सुनि कैं अवलोकिता पुनि उचरी गरि चाय ।
भग्वति नैं जिहि अत्थ कह, राखी सो कहि दाय ॥२३॥
पुनि वोली वुधिरक्षिता सुनि यह वचन-रसाल ।
जिहि हित राखी काजसौ करि राख्यौं प्रतिपाल ॥२४॥
चतुराई मकरन्द की वात वात में भाषि ।
मदयंतीके उर महल मधि दियौ है राखि ॥२५॥
मदयंती अब दृगनि सौ लख्यौ चहै मकरन्द ।
अरु मै न्यारी सी रहति छिप्यौ प्रगट छर छन्द ॥२६॥

सोरठा

इतनो कहि कैं वैन, मौन भई वुधिरक्षिता ।
अवलोकिता सचैन, तासों वोली धन्य तू ।।
पुनि पुनि वुधिरक्षित आप वोली तासों तुरत ही ।
आउ चलैं अनताप, यौ कहि नांचि सु दुरि गई ।।२८।।

प्रवेशक दोहा

फिरि समाज में सिद्धिनी, आई पटहि उधारि ।
निजु चैली सौं वचन यौं, कहन लगी हित धारि ।।

सवैया

लाज लपेटी हुती तव सौं अव केऊ उपायन ठीक वरी है ।
मों सौं सखी सम ह्वै वतराति नहीं विछुरयौ चहै एक घरी है ।।
फूल दुकूलनि भेट करै नित मालति कौं यह वानि परी है ।
सौह दिवावति आवन कौ फिरि लागि कै कंठ सनेह भरी है ।।३०।।

सोरठा

यहू भली विधि एक, आसा पूरन हौन की ।
देव राखि है टेक, अवलोकितेन झूंठ गुनि ।।३१।।
सकुन्तला की वात, सुनत अंक सौं लेटि कैं ।
ह्वै कैं पुलकित गात, वैन मूंदि चुप ह्वै रहति ।।
सु अब और वतरानि, माधव के परतच्छ ही ।
ह्वै है तंह सुखदानि, तू सुनिलैहै चैन सौं ।।
इहि विधि सौं वतराय, नपथ्यहि अवलोकि कें
कामन्दकि लहि पाय, वोली वत्से ! आउ इत ।।
तछन पट कौं टारि, मालति और लवंगिका ।
कढ़ि आई पुन धारि, जिमि घन मै तैं दामिनी ।।३५।।

दोहा

तहं वोली पुनि मालती, मन्द मन्द सिरु नाय ।
हौं भूपति कौं वलि दई, पितु नैं मोहि भुलाय ।।३६।।
पितु कौं नृप प्यारौ भयौ, नहीं मालती रंच ।
यौ कहि असुवन नैन भरि, फिरि उचरी अप्रपंच ।।३७।।
हाय ! हाय !! पितु !!! विकि गयौ तू तृष्णा के हाथ ।
मानि लई अव अंत्य पै, यही चलेगी साथ ।।३८।।

पाद्रकुलक छंद

यह कहि पुनि उर आनंद मान्यौ । प्रथम जु सखि नवचन वखान्यौ ॥
उत्तम कुल उत्पत्ति वताई । वाको सो यह सुभ वनि आई ॥३६॥
कल्प वृक्ष विनु सिंधु न प्रगटै । नहि क्योहू मेरौ मन पलटै ॥
फिरि वह कहूं दीठि मैं आवैं । तौ नैननि कों सुख सरसावै ॥४०॥

दोहा

कामन्दकी अरु मालती, अरु लवंगिका संग ।
कुसुमाकर वन के निकट, पहुंची सहित उमंग ॥४१॥

अथ वन वर्णन

प्लवंग छन्द

रुचिर वनायौ थान चहूंवा चायकै ।
वहु चौपरि उनहारि सौंध सरसाय कैं ॥
जहुं केतक केतकी गुलाव चवेलि हैं ।
गुल खैरू करवीर जुही अरु वेलि है ॥४२॥

करनां गुडहर और हारसिंगार हैं ।
सुगंध गुलवांस विधूप वहार हैं ॥
नाफर्मा सतवर्ग गुलाला सो भई ।
वावूना सितरंग लखै मनमोला भई ॥४३॥

सदा सुहागिल और सुदरसन कुंद है ।
चैती गुलचंद्रिका और मुचकुंद है ॥
रूपमंजरी सोसनि और अगस्ति हैं ।
दाऊदी सुभ ढंग मनौ निज हस्ति है ॥४४॥

गुलाचीन, अरु नरगस द्वै विधि राजई ।
अरु गुल वगुला इस्कपेंच छवि छाजई ॥
अरु रसाल मंजरिन गुंजरत भौर है ।
लाल अशोक अनंदित तिन की भौर हैं ॥
उन्नत सूधे घनैं सरू के वृच्छ है ।
अरु पुनि फूले फले कदल परतच्छ हैं ॥
घनैं औरहू वृक्ष कहा लो भाखियै ।
जाहि देखि सुर विपिन दूर ही नांखियै ॥४३॥

दोहा

सोमनाथ की कृपा तें, सुवन छहूं ऋतु मांझ ।
फूल्यौ और फलयौ रहै, निसिदिन प्रात अरु सांझ ।।४७।।

हरिगीत छंद

तन वसन जेवर हैं सजे वर वजें नेवर सौहनैं ।
मुख चंद पूरन तिमिर चूरन गर्वहूरन कौ हनैं ।।
सरतूल तीछन त्रिविधि ईछन प्रनति ही छिन पालती ।
जहं वृक्षवदित्रय खिली......तहां च......मालती ।।४८।।

सोरठा

वन में करति प्रवेस मालति सौ सुलवंगिका ।
वोली वचन सुदेस, अपनौं हित सरसाय कैं ।।

सवैया

मोरे रसालनि छोड़ि उड़े अलि ज्यौ पिक पुंजनि सोर मचायौ ।
सो अरु वौरसिरी करि आदि महौप्पनि के मकरन्द मिलायौ ।
मैंटन कौ अब तोहि मनों अव आयौ है आगे समीर सुहायौ ।
श्री शशिनाथ कृपा पर भावतें मालती पें यह भेद सु पायौ ।।५०।।
चंपक वेलि चमेलि गुलाव रसालनि कौ अति संग हलावनौं ।
रंभनिकौ परिरंभनि दै घनसार के सार अपारनि लावनौं ।
मालती श्री शशिनाथ दया विनु कौन सुनैं यह कोकिल गावनौ ।
तेरे सवै श्रम कौ निरवारन आयो है आगैं समीर सुहावनौं ।।५१।।

कवित

मीजि मीजि मंजुल रसालनि की मंजरीनि,
पुंज रंभा थंभनि के चन्द्रकनि झारनौं ।।
विकभत वेली चारू चंपक चवेली चूमि,
झूमि झूमि नवल गुलावनि विहारनौ ।।
सोमनाथ सुन्दर अलिदनि की सेनी संग,
गुंजन के मिस प्यारी मंगल उचारनौं ।।
धारनौ अनिंद मकरंद अरविंदन सौ,
आयो तोहि भैटनि समीर श्रम टारनौ ।।५२।।

दोहा

यों कहि पैठी वन विषैं, नृत्य कियौ चहु ओर ।
कंचन मनि भूषनिन कौ मजु मधुर हुव सोर ।।५३।।
आयो माधव इते पैं, परदा विमल उघारि ।
एक ओर थित कहत हुव, यौ मन मै सुखधारि ।।५४।।

पावकुलक छंद

भली भई भग्वति अब आई। यह मौको हुव यौ सुखदाई ।।
विरह सनैं विरहीं कौ जैसै। वरसाऊ नीरद सुभ वैसैं ।।५५।।
वाह वा सु मालतिहू प्यारी। अरु लवंगि के लियैं सुखारी ।।
मालति के मुख चंदहि देखै। मो दृग कमल भए जड लेखै ।।५६।।
अरु ज्यौं मेरू चन्द्रमनि वारौ। चंदहि निरखि श्रवै जल धारौ ।।
तैसै भयौ श्रवै हिय मेरौ। हुतौ जऊ वह भांति करेरौ ।।५७।।
यह मालति चंपक से अंगनि। हिये वढावति मोद तरंगनि ।।
अरु मन्मथ की अगनि जगावति। दृगनि करत कृत कृत्य प्रभावति ।५८।

सोरठा

मालति सचिव कुंवरि, लवंगिका सौं उच्चरी ।
इही कुंज मंझारि, आवौ बीनैं फूल हम ।।५९।।

मधुभार छन्द

माधव उदार। तिहि छिन मझार् ।।
यह किय विचार। सहि मदन भार ।।६०।।

दोहा

प्रथम प्रिया के वैन सुनि, यों हुव मोंतन सूल ।
नव नीरद जल परसतें, ज्यों कदम्व के फूल ।।
वोली वहुरि लवंगिका मालति सौ सुख छाय ।
यौं ही करिहै भाषियौ, नृत्य कियौ वहु भाय ।।६२।।

मधुभार छन्द

माधव अगव्व। चित्यौ सु तव्व ।।
भग्वति दयाल। अति वुधि विसाल ।।६३।।

दोहा

फिर लवगिका सौ कह्यौ, मालति ने यह वैन ।
आव और अव कुंज में वीनै सुमन सचैन ।।६४।।

बड़ी चौपाई

हंसि भरि कैं अंक मालती सौ तव कामन्दकि यों बोली ।
तू दरसत निपट थकी सी मों कौं त्रिभुवन रूप अमोली ॥
अब मेरौ कह्यौ मानि लै रंचक विरमि चित्त लहि चैनैं ।
तुव वचन और ही भांति, कढ़त वहु वीने फूल सु तैनैं ॥६५॥
जनु चपी चंप की माल मालती अंग अंग अरसानैं ।
अरु पूरन चंद वदन सुंदर पै स्वेद विंदु सरसानैं ॥
अध खिले कमल से नैन गैन गुन डगमग तापर सानैं ।
यौं लखियै तेरौ रूप होत ज्यौं प्रीतम के दरसानैं ॥६६॥
यह सुन्दर वचन सिद्धिनि कौ सुनि मालति हियै लजानी ।
तहं औसर जानि लवंगिय मधुरैं बोलि उठी यह वानी ॥
है सुभ अति ही भग्वति नै अब जो परगट बात वखानी ।
तू समझ देखि उर अन्तर इतनै है को और सयानी ॥६७॥

मंथान छन्द

माधौ हिये मद्धि । आनन्द कौ लद्धि ।
छन्डै सबै त्रास । सज्यौ हरै हास ॥६८॥
औ कामदानी । बोली सु वानी ।
राजै इही ठौर । भाष्यौ चहौ और ॥६९॥
ऐसे सुनै वैन । ताकौं भरै चैन ।
वैठी सबै घेरि । आछौ समै हेरि ॥७०॥

सोरठा

कामंदकि पुनि आप, चिवुक मालती की उचै ।
बोली सुनि सु अलाप, जु मै कहति समझाय ॥७१॥
यह सुनि मालति वाल, कामंदकि सौ उच्चरी ।
कहिये हरपि दयाल, सावधान मै निपट हौं ॥७२॥

छप्पै

इक दिन पाय प्रसंग कह्यौ माधव के नामहिं ।
जिहि विधि चाहों तोहि तिही विधि वा गुर्नधामहि ॥
यौं सिद्धिनि कै वैन सुनै बोली सु लवंगीय ।
यह हम कौं मुधि वात कही हो तुमनि सुढंगीय ॥
यौं सुनिकैं कामन्दकी बोली समय विचारिकै ।
सो मन्मथ वन में आयकैं परयौ विरह दुख धारिकै ॥७३॥

सवैया

चन्द लखै न अनन्द लहै अति ही अपनेन सौं प्रीति घटी है ।
है पुनि साहसवान तऊ उफनाय वियोग विथा प्रगटी है ॥
और कहा कहौं माधव की गति देह सबै पियराय लटी है ।
सायक पंच के झेलैं प्रपंच पै रचक नाहिं निकाई घटी है ॥७४॥

दोहा

तक्षन वहुरि लवंगिका वोलि उठो सुख पाय ।
भग्वति सौ अवलोकिता, कही हुती अकुलाय ॥७५॥
चलिये भग्वति वह उहां, ह्वै है निपट विहाल ।
यह सुनिकैं अवलोकिता पठई हुती उत्ताल ॥७६॥

सोरठा

सिद्धनि कामद नाम वोलि उठी मधुराय कैं ।
मैं तवही अभिराम, समझी हेतु सुमालती ॥७७॥
जलनिधि जल के तूल, हौ माधव कौ अचल मन ।
भयौ सु चपल समूल, मालति मुख शसि ध्यान तैं ॥७८॥

पावकुलक छन्द

माधव पुनि मन मध्यविचारयौ । कामन्दकि ने अति प्रन पार्‌यौ ।
नई नई विधि कै कहि वैननि । साधन मेरी वात स चैननि ॥७९॥
कै यह सांची है कह नावति । सवै प्रवीननि के मन भावति ।
सासतर की परतीति सुहाई । अरु जो सहज ज्ञान सुखदाई ॥८०॥
दृढता अरु अभ्यस्त सुवानी । समय जानिवौ वुद्धि सयानी ।
जापै ए गुण विलसैं सूरे । ताके काज हौय सब पूरे ॥८१॥
फेरि सिद्धिनि वोली ऐसैं । मालति सौं वन मध्य सुवैसै ।
विरही को दुखदायक वातैं । ते माधव झेलत अकुलातैं ॥८२॥

सवैया

पिक गुंजन सौं नव नूतकी मंजरी और सूं डीठि लगाय रहै ।
अरु मौरसिरी के सुगन्ध समीर की छां अतिही समुझाय रहै ॥
तन के तजिवै के लियें उरपै जल जात के पातन छाय रहै ।
चितवै पुनि चंद ना चंदहि लाइ, मसूसन सौं मुरझाय रहै ॥८३॥

सारवती छंद

माधव फेरि कह्यौ मन मै । कामद जोर पगी पन मै ।
औरहि और वखानति है । नेह निवाहि सु जानति है ॥८४॥

सोरठा

मालति मन के मध्य, यौं विचार लागी करन ।
ता दुख कीन अवध्य, वा पै वीततु है जु अब ॥८५॥
पुनि सिद्धिनि बुधवान, कहन लगी समयौ निरखि ।
माधव रूप निधान, दुख ही दुख मरिजाय जिनि ॥८६॥
यह सुनिकै दुख मानि, लवंगिका सों कान में ।
मालति परम सुजान, कहन लगी अतुराय कै ॥८७॥
हे सखि ! अपनै काज सो प्रीतम त्रिभुवन मुकुट ।
मति न सिजाय सलाज, भग्वति भय सौ हौ डरी ॥८८॥
तातैं कहा उपाय, अलि हम कौं कर्तव्य है ।
सो तू कहि समझाय, मन मेरो थिर नहिं रहै ॥८९॥

मधुभार छन्द

माधव उदार । सुनि किय विचार ॥
मो पै दयाल । है श्री गुपाल ॥९०॥

पादकुलक छन्द

पुनि लवगिका वोली तक्षन । कामन्दकी सों निपट विचक्षन ॥
तुमनै कही सु हमने जानी । अव मालति की सुनौ कहानी ॥९१॥
घर के निकट गली मधि ठाढ़ौ । निरख्यौ छिनकु सुहित पन गाढ़ौ ॥
तवतं ज्यौ रवि किरन तचाई । कुमदनि मूल तूल मुरझाई ॥९२॥
निपट सुखिन कौं दुख में रेलै । नही और कछु खेल न खेलै ॥
एक कमल कर धारि कपोलै । वैठी रहति न मुख सौ वोलैं ॥९३॥
और कुंद अरविंद खिलै कौ । पवन मंद मकरन्द मिलै कौं ॥
भवन वाग कौं तन में लागैं । मन में निपट ज्वाल सी जागैं ॥९४॥
अरु अपनै उद्यान मझारै । जनु मन्मथ है अंग सिगारै ॥
रूप और जोवन करि रूरौ । सोभत औरों गुननि समूरौ ॥९५॥
तहां परस्पर दरसंन पायौ । दुहुंनि दुहूं कौ चित्त चुरायौ ॥
पुलकनि कप थंभ हुव रंगनि । हरषी सखी निरखि इन ढंगनि ॥९६॥
तव तैं यौं हित पैं अनुकूली । खान पान की चरचा भूली ॥
भूपन गिरै न ताप उठावै । कछु सखीन सों नाहिं जतावै ॥९७॥

तरफरात ज्यौ जल विन सफरी। कहि नहि सकै जानि अति अफरी॥
चन्दक चूरनि चंदन लावै। चद किरनि सौं अंग दुरावैं॥९८॥
हतौ डहडह्यौ कमल समानौं। लखियै सुमुख महा मुरझानौं।
सिख नख लौ पियराई छाई। पै न रचहू घटी निकाई॥९९॥
असुंवनिसौ भरि आवति अंखियां। उकसी जात उसासन वखियां॥
दावि दसन तर अधर विसूरै। प्रीतम विरह हियौ चक चूरै॥१००॥
नैको नींद न आवै नैननि। वोलि सकै नहीं मुख तैं वैननि॥
अन्तर ही अन्तर हित जितवै। कितहूं चलै कहूं कौं चितवै॥१०१॥
कवहूं चकित मृगी अनुहारी। ठाढ़ी होतु परम सुकुमारी॥
छिन मै पुनि अगराय किसोरी। असमै कहै कौन सौ चोरी॥१०२॥

सवैया

तन औचक ही थहराय उठै अध मुद्रित नैन निहारति है।
छिन में पलटै मुख रगनि कौ पुनि ह्वै जड़ सी सुधि टारति है॥
ससिनाथ सनेह अति रंगनि पूर वढ़्यौ उर में प्रन पारति है।
नहि रंचक ताहि विसारति है मन में पिय संग विहारति है॥१०३॥

कवित्त

ओठ फरकनि में दसन चमकत कहूं,
लागत पलक जों पलक परजंक मैं।
सोमनाथ सरसै पुलक प्रति अंगनि में,
झलमलै स्वेद विन्दु वदन मयंक मैं॥
धरकत छाती नीवी विचरै उसासिन सौ,
थरहरै जंघ जहं लहकनि लंक मैं।
औदकिति कवहूं निसकति मनोज भय,
चोजनि सौ राखति उरोजनि भरि अंक मैं॥१०४॥
उघरत नैन रवतोपल से प्रकासैं लखि,
सूने परजंकहि उसासैं लेति गहरी।
फेरि मूंद लेति फेरि खुलत अनंग वस,
वाढ़ै नेह नवल तरंगन की लहरी॥
सोमनाथ चंदन चरिच कदली के पत्र,
भीजति पवन ज्यौं छवीली जाति छहरी।
उचरै विथा न कछू अकथै कथा है याहि,
सीत रिति रैन होति जेठन की दुपहरी॥१०५॥

प्रगटि पसेऊ अंग अग छिनु सीरे होत,
उड़ी जात सासन व काई वखियान की ।
चन्द्रमनि हार पहरावत उदोत सशि,
निघटै तऊ अरुनाई अंखियान की ॥
सोमनाथ की सौ अव आवत वसंत ऋतु,
या की गति ह्वै है जलहीन झखियान की ।
ऐसैं भरि दैव हिइ को शतिइ कोसै फेरि,
दौरी फिरै व्याकुल वहीर सखियान की ॥१०६॥

सवैया

पाय महावर कौ निचुरै रंग यौ अंग अंगनि स्वेद कढ़े रहै ।
सीरी ह्वै जात छरी भर मांझ घरीक मै ताप समुद्र वढ़े रहै ॥
प्रौढ़नि के से विलास करै दृग मूदत ही सु विनोद मढ़े रहै ।
वैस कुमार विलोकि अपक्क सहेलनि के चि..........चढ़े रहै ॥१०७॥

दोहा

लवंगिका कै वैन सुनि कामन्दकी प्रवीन ।
वोली छर छन्दन भरी, प्रगट मोद में लीन ॥१०८॥
माधव सौं अनुराग जौ, है याको निर्धार ।
तो जग में गुन ज्ञान कौ पैहै फल अविकार ॥१०९॥
उर मै सुख अतिही भयौ, तऊ दसा सुनि एह ।
मेरो हिय दरकन लग्यौ, जऊ लगाई खेह ॥११०॥

सोरठा

माधव चितयौ फेरि, तिही अशोकनि में दुर्यौ ।
लई जु दुख ने घेरि, कमन्दकि सो ठीक पै ॥१११॥

दोहा

पुनि वोली कामन्दकी, लवंगि कै समुझाय ।
निपट अटपटौ खेद अव उर में प्रगटयो आय ॥११२॥

सवैया

वैस कुमार महा सुकुमार सरीर हौ याको लहै हित संसहि ।
श्री शशिनाथ की सौंह मन्मथ है निरदै अतिहो गहि गंसहि ॥
सीतलमंद समीर इते पै वहै लपटाइ रसाल के वंसहि ।
दासन है विरहीन समौं यह चंद कौ सीस संजै अवतंसहि ॥११३॥

बड़ी चौपाई

ए कामंदकि के वचन सुनत ही लवंगिका सु उचारी ।
तुम देखो और भगवती है यह माधव चित्र सुखारी ॥
यौ कहि लवंगिका नैं मालति के उरतं अंचल टार्‌यौ ।
मृदु हिय पै लग्यौ चित्र कंचुकि पै तिहि सिद्धिनी निहार्‌यौ ॥
अरु देख्यो बौरसिरी पुहुपन की माला तिहि जु बनाई ।
सो याके कंठ माँझि है यातैं जीवति सखी सुहाई ॥
यह सुनि बतरानि दुरे माधव नें उर में अति सुख पायौ ।
पुनि लग्यौ बड़ाई करन माल की रंचक विरह विलायौ ॥११५॥

सवैया

बकुलावली जीति तुही जगमें सखि तेरी बराबरि कौन करै ।
ससिनाथ की सौंह सुहाग सनी नहि तोहि घरी भरहू बिसरै ॥
अति चोजसौ बौने उरोजनि मे जु लखै अंखियान को खेद हरै ।
दिन रैनि विनोदनि सों गहरै मन भांवतीके हिय पैं विहरै ॥११६॥

दोहा

इहि औसर नैपथ्य में कल कल भई अपार ।
सवन लगाए कान उत, सुनिवे कों सविकार ॥
पुनि नैपथ्य मझार तै यह विधि भई पुकार ।
संकर घटवासी मनुज हढ हूजो इहि वार ॥

भुजंग प्रिया

महादेव के मट्ठके पिट्ठि पाछ, करालौ महाकाल सौ सिंह आयौ ।
कढ्यौ लौह कौ पंजरा तोरिवै कौ बड़े जुव्वना रंभ के गव्व छायौ ॥
बिजै का धुजा तूल लंगूल तुंगी उचक्कैं चहूं ओर तक्कें कुहायौ ।
झलक्कैं दुवौ नैंन कुच्चै न पंडे मनो मुख्य है भार ज्वाला जगायौ ॥११६॥
जय झाढ़ सी डिट्ठ डाढै कडक्कैं घनें जन्तु पत्ते परे रत्त रत्ते ।
बरच्छीन से नख्य तिख्य उदारे पटत्तारिते काम सज्जें कुपत्ते ॥
उत्तकट्ट नट्टैं प्रगट्टैं न हट्टैं भजे जेहुते और कौत्तिक्क मत्ते ।
चरव्वार श्रोनित्त की कीच मच्ची ठरे मांस के ठौर ही ठौर लत्ते ॥१२०॥

दोहा

यथासक्ति अब आपनें रक्षि सको जो प्रान ।
सावधान हूजो सनर, समयौ समझि मयान ॥१२१॥

इहि औसर पट टारिकै, बुधिरक्षिता उताल ।
थरहरात यों उच्चरी, रक्षा करौ दयाल ॥१२२॥

त्रिभंगी

तन पीरे कारे चित्र अपार नैन डरारे चमकाएँ ।
कुद्‌धन सौं पट्‌टैं डाठै कहै गुंजत गट्‌ठै मुह वाऐं ॥
निज पुच्छ उठाये केस फुलाये सिह लुमाये दरसायौ ।
करि दपट तुरती जानि इकत्ती त्रिय मदयंती पर धायौ ॥१२३॥

दोहा

नंदन की भगनी चतुर मदयंतिका ललाम ।
मेरी प्यारी सखी सो घेरी सिंह उदाम ॥
यह सुनि वोली मालती, लवगिका सौ वैन ।
वड़ौ अचंभौ यहि समै वाढ़यौ निपट कुचैन ॥१२५॥

मुक्तादाम

कढ्यौ द्रुम ओटनि तैं अतुराय । सुमाधव यौ उचरयौ सतराय ॥
वताय अवै वुधरक्षनि आप । कितै वह नाहर है जुत ताप ॥
अचानक माधव मित्र निहारि । विनोद सती डरपी सुकुमारि ॥
कह्यौ पुनि मालति नैं मन मद्धि । ह्यंई प्रगट्यौ यह और लद्धि ॥१२७॥
कर्‌यौ तिहि माधव चित्र विचारि । रच्यौ विधि धन्य सुहौ इहि ढार ।
लख्यौ अव मोंहि प्रिया हित नधि । लियौ जनु अंवुज माल निवंध ॥
दियौ सुख सौ जसु छीर न्हवाय । कि नैन पसारि लियौ ग्रसि हाय ॥
सुधा वर्षा रुचि सौ वरसाय । सिराय दियौ हिय दुख नसाय ॥१२९॥

सवैया

वांधि लियौ अरविंद की मालनि जो यह मौहि तकी तिरछाय कै ।
छीर सौ दीनौ न्हवाय मनौ शशिनाथ अनंत विनोद वढ़ाय कैं ॥
औ अनिमेष विलोकनि सौ सविशेष लियौ गहि सौ ढहराय कै ।
नेह चितौनि चितै रुचि सौ पुनि सीच्यौ सुभाय सुधा वरसाय कैं ॥१३०॥

सोरठा

वुधिरक्षिता पुकारि, माधौ सों वोली वहुरि ।
वन वाहिर डर डारि, गुजतु है मृगराज शठ ॥१३१॥
माधव मंडित ऐंड इतै उतै लाग्यौ फिरन ।
कामंदकि लहि मैड, वासौ वोली समय लखि ॥१३२॥

सावधान ह्वै तात प्रगटि पराक्रम आपनौ ।
है न बड़ो उत्पात, झूंठन हौं तोसौं कहत ॥१३३॥
लवंगिका के कान, लगि पुनि बोली मालती ।
है धिक हमैं निदान, कौन आनि संशय पर्यौ ॥१३४॥
सबही निपट उताल, उठि इत उत लागी भ्रमन ।
दरस्यौ समौ कराल, रंग सभा के मध्य ही ॥१३५॥

मधुभार छन्द

माधव उताल । क्रुद्धत विसाल ॥
चल्यौ अवग्र । लख्यौ सु अग्र ॥१३६॥
पथ अति कराल । जुत अंत्र जाल ॥
कहं परे मुंड । अरु मनुज रुंड ॥१३७॥
अनगन तुरंग । कहुँ परे भंग ॥
कहुं खण्ड खण्ड । है भुज उदण्ड ॥१३८॥
गुल्फैं प्रमान । चहनौं निदान ॥
मिलि मांस रत्त । है जत्तरत्त ॥१३९॥
मृगराज मग्ग । लखियौ अभग्ग ॥
मन मे विचार । इयि किय उदार ॥१४०॥

दोहा

नंदन विप्र प्रधान की, वहनि कन्यका वाल ।
है नजीक मृगराज त्वैं, मोतें दूरि सुहाल ॥१४१॥
हाय ! हाय !! मदयन्तिके, यों सब वोली वैन ।
सभा मद्ध की त्रियन के, मुख पै लस्यौ अचैन ॥१४२॥

पद्धरी

कामन्दकि माधव उर मझार । हुव हर्ष अचम्भौ तिही वार ॥
हरिनैं हते जु हे नर घमंड । तिनके हथ्यार लैं हत्थ चण्ड ॥१४३॥
मदयंतिऽरु नाहर के सुमध्य । मकरद पहुंच्यौ समय लध्य ॥
हो कहां ह्यै ईं मोमर्त्त मित्र । मृगराज विहरन के निमित्त ॥१४४॥
है धन्य धन्नि मकरन्द वीर । यौ औरौं भाषी धुनि गंभीर ॥
क़ामंदकि माधवहि पै आनि । भय भई सिंहतैं हतयो जानि ॥१४५॥
फिरि भयो हर्ष उरमें अपार । तिहि समै दुहुनि कौ निर्विकार ॥
अरु मार्यौ नाहर हू भयान । धुनि परी आनिकैं यहू कान ॥१४६॥

औरनि विलोकि बाढ़यौ अनंद । फैली कराल आंतैं सदंद ।।
सिद्धिनी फेरि उच्चरिय आप । मकरंद हित्त उर मडिताप ।।१४७।।

त्रिभंगी छन्द

हौं धायौ नाहर जनु जम जाहर पंजे वाहर नख कड्ढैं ।
तब तजि छरछन्दा वदन अमन्दा यह मकरन्दा रिस वड्ढैं ।।
सन्मुख ह्वै डटयौ ताहि न हटयौ असि सौं कटयौ छल पग्गै ।
अव रंग्यौ अंगनि श्रोनित रंगनि नख रद गंजनि छत लग्गै ।।१४८।।

दोहा

मदयन्ती कौ करगहे, करसौं टेकतु खग्ग ।
मकरंदा मो पुत्र यह आवत अमित सुअग्ग ।।१४९।।
हाय ! हाय ! धिक और यौ कहन लगी दुख पाय ।
अति प्रहार अंगनि लगै, रह्यौ रुधिर सों न्हाय ।।१५०।।

सोरठा

काम·दकि सौ वैन, वोल्यो माधव तच्छनैं ।
उरमें वढ़यौ अचैन, भग्वति मोको रक्षिये ।।१५१।।
यह सुनि वोली फेरि माधव सों सो सिद्धिनी ।
मनतैं दुख निवेरि, आउ चलैं देखें प्रथम ।।१५२।।

दोहा

यो कहि सिगरी नंच्चिकै, सभा मध्य सुख पाय ।
पट के मधि के पथ्य मै, जाति रही अतुराय ।।१५३।।
अव या तीजे अंक में भई दुख की वात ।
सभा मद्धि नट वानि के थहरानै सव गात ।।१५४।।

हरिगीत छन्द

वदनेस नंद प्रताप जाकौ तेज दिन मनि तूल है ।
अव कर्ण सो ताकै वहादुर कुवर आनन्द मूल है ।।
तिहिं हित्त कवि शशिनाथ नै रच्यो विचार निसंक है ।
माधव विनोद सुग्रंथ कौ यह भयो तीजो अंक है ।।१५५।।

इति श्री। माथुर चतुर्वेद मिश्र सोमनाथ कवि विरचिते माधव विनोद नाटके शोक गृहं नाम तृतीयोङ्कः ।।

अथ चतुर्थोऽङ्कः

वसन्ततिलका छन्द

कामन्दकी पट उघारि फिरि यों सुश्राई ।
घुम्मति माधव गहैं अति मोह छाई ॥
मदयन्तिका मकरन्द लियैं सुहाई ।
औ मालती वृद्धि सुरक्षिनि निकाई ॥१॥

मधुभार

मदयति आप । उर भरे ताप ॥
उचरीय वैन । भरि नीर नैन ॥२॥
भग्वति विसाल । हूजै दयाल ॥
यापैं सरीत्ति । उर सज्जि प्रीति ॥३॥
इनि मो निमित्त । निजु प्रान भित्त ॥
तजिवौ विचारि । लिय सिंह मारि ॥४॥
अरु मोहि रक्षि । लीनौ प्रतक्षि ॥
नख दन्त घात । लगि रहे गात ॥५॥

सवैया

इमि देखि दशा निज रक्षक की किहि भांति सुधीरज कौ धरियै ।
प्रन पारि महा मनुहारिन सौं निरधारि विचारि तिही धरियै ॥
मदयन्तिका कामद जुग्गनि सौं उचरी हिनडारन कौ ठरियै ।
विनती सुनियै तुम सिद्धिनि हो इन पै सुख वृद्धि कृपा करियै ॥६॥

दोहा

बोली आरौ तछनै धिक जीवन है हाय ।
हम पै बनि आवतु नहीं अव ह्यां कछू उपाय ॥७॥
कामन्दकि नै दुखसनी इह सुनि कै वतरानि ।
दुवौ कमंडल नीरसौं, छिरकै सुत सम जानि ॥८॥

सोरठा

मदयन्तिकै निहारि, अरु पुनि यह वानी कही ।
निजु अंचल सौं प्यारि, तुम आतुर अवही करौ ॥९॥

यह सिद्धिनि की वात, सुनि माधव मकरन्द की ।
कीनी पवन सिहात, मालति अरु मदयन्ति नें ॥

पाकुलक

मकरन्द सुहृगके पलक उघारे । सावधान ह्वै चित्त मझारे ॥
माधव सों वोल्यो सुनि प्यारे । मै नीको हौ खेद विसारे ॥११॥
ह्वै हर्षित मदयन्ति विचारी । शशि पूरन मकरन्द सुखारी ॥
उदित भयौ तिमिर दुख डगरयौ । उर अंखियान उजेरो वगरयौ ॥
वहुरि मालती माधव औरें । कहिकैं हाथ सनेह वटौरें ॥
लवंगिका सों वोली वानी । तोहि वधाई है मनमानी ॥१३॥
महाभाग सों चेतहि पायो । भलो भयौ तेरौ मन भायौ ॥
मालति की यह वात प्रवीनी । माधव नैं उर मैं लखि लीनी ॥
माधव सो अचरज में सान्यौ । यौं मकरन्दहि वचन वखान्यौ ॥
मित्र साहसी आव पियारे । यौं कहि मिल्यौ कलेस विडारे ॥१५॥
कामन्दकि दुहुनि के सीसनि । सूंघि उचारी वहुत असीसनि ॥
धनि हौं जिये जु मेरे वेटा । दोऊ तजिकैं कष्ट चपेटा ॥१६॥
भली भई यौ और उचारी । कामन्दकि की ओर निहारी ॥
सभा मद्धि पुनि मिलिकैं नच्ची । अम्वर मनि भूषन तन सच्ची ॥१७॥
ताल मृदंग वीन मुंह चंङ्गनि । रह्यौ रंग भरि प्रेम सुढंगनि ॥
सव समाजकनि पलक विसारे । मानहु सुर भूलोक पधारे ॥१८॥

सोरठा

मदयन्ति के कान, लगी वोली वुधिरक्षिता ।
है यह वही सुजान, मैं तोसों जाकी कही ॥१९॥
यह सुनिकै सुख पाय, निजु वोली मदयन्तिका ।
मैं जानी तिहिं हाय माधव सम ह्वै है वहू ॥२०॥

चउरस छन्द

पुनि वुद्धि रक्षी । उच्चरीय अक्षी ॥
हमहू सच्ची । अव हित रच्ची ॥२१॥
तव मयन्ति । वरनी य सन्ती ॥
तुम सव नारी । अति हितकारी ॥२२॥
अनृत्त न भाखै । धन महि राखै ॥
.... । हम तुम एकै ॥२३॥

समानिका

माधवै निहारिकै । चित्त मोद धारि कै ॥
यों कह्यो पुकारिकै । लाज कों निवारि कै ॥
या महा प्रभाव सों । मालती जु चाव सौं ॥
नेह रीति पारियौ । भली सो विचारियौ ॥२५॥

दोहा

यौं कहिकै मदयन्तिका, अन्तर विरह विसारि ।
पुनि प्रीतम मकरन्द की ओर लखी सुकुमारि ॥२६॥

छन्द धारी

कामदानि, चित आनि । यौं विचार, कीन सार ॥२७॥

सोरठा

मदयन्ती मकरन्द, मिलै परस्पर दृगनि सौं ।
यह हुव वात अदन्द, दैव कृपा तैं आजुही ॥२८॥

छप्पै

कामद जुग्गनि फेरि प्रगट यौं वुद्धिय वैननि ।
एरे ! सुत मकरन्द ! सांचु महि मंडित चैननि ॥
कैसैं लायौ तोहि इहां शशिनाथ सुहावन ।
मदयन्ती के प्रान रक्षिवै कौं चित चावन ॥
यह सुनि वोल्यौ मकरन्द पुनि सुनी नगर में वात इक ।
सो माधव दुचितौ होयगौ तातें धायौ ठांनि ठिक ॥२९॥
मोंसौ अवलोकिता कह्यौ सुख पाय अतंतहि ।
कुसुमाकर के आजु आयवे को विरतंतहि ॥
आवत मै अवलोकि सिह नै घेरी कन्या ।
अति सुकुमार सरीर रूप गुनि करिकैं धन्या ॥
मै निरखि ताहि अतुराय कैं, दौर्‌यौ कर में खग्ग गहि ।
यह देव जोग तें बच गई, तुम सव जानत ज्ञान लहि ॥३०॥

सोरठा

सुनि कैं यह वतरानि माधव और सुमालती ।
चिंता उर में आनि, लगे विचारन तच्छनै ॥
सिद्धिनि कामदि नाम, तिनि यह कियौ विचार मन ।
मालतीय अभिराम, तिही देव की होयगी ॥३१॥

तोमर

वोली वहुरि परकास । उर मद्धि मंडि हुलास ॥
हे पुत्र माधव आज । तोकों वधाई साज ॥३३॥
मालती कौं बुधिवान । है दान समय सुजान ॥
यह तौ वधाई तोहि । इन दई है हित रोहि ॥३४॥
उचर्यौ सुमाधव फेरि । सिद्धिनि सौहित हेरि ॥
अरु मो हृदय भो प्रान । तुम भेट है हित वान ॥३५॥
यह सुनि लवंगिय वाल । उचरी वखान रसाल ॥
मो सखी मालति आप । चाहत यही अनताप ॥३६॥
मदयन्ति ने निज चित्त । किय यौं विचार उचित्त ॥
है उत्तमन की रीति । वर्णत जु संजुत नीति ॥३७॥

दोहा

मन में चिन्ती मालती, कहा सुन्यौ मकरन्द ।
जातें माधव के हियैं सरसैगों दुख दंद ॥३८॥
माधव पुनि मकरं सों वोल्यौ कहि मो मित्र ।
कहा सुनो उद्वेग की तैंनें वात विचित्र ॥३९॥

सोरठा

इहि औसर अतुराय, एक पुरुष आयौ चल्यौ ।
पथ नैपथ्य डुलाय, मदयन्ती सौं उच्चर्यौ ॥४०॥
हे मदयनती तोहि, नन्दन जेठै भ्रात नैं ।
कह्यौ संदेसो मोहि, सो तू सुनि मन लाय कैं ॥४१॥

छप्पै

आजु हमारे धाम आपु आए छित नाइक ।
भूरिवित्त के चित्त कियौ विश्वासुभाइक ॥
अरु हम ऊपर कृपा आपकी जगत प्रकासीय ।
दई मालती मोहि भूप नै दुख विनासीय ॥
री ! सुनु आय कै छिपु ह्यां मंगल चारनि सज्जि अव ॥
जो जाकौं दैनौं होय सो तू जानति है भेद सब ॥४२॥

मधुभार

यह सुनि अलाप । मकरन्द आप ॥
वोल्यौ विचित्र । सुनि महामित्र ॥४३॥
है यह सुवात । दुख हानि गात ॥
कहि सकौ नांहिं । चापि हृदय मांहि ॥४४॥

सवैया

कान परी दुख दाइन बात सयांन समूह निदानपरैं दर्यौ ।
ए शशिनाथ मनमथ्थ नैं उरकौं परिवार हरैंई हर्यौ ॥
चित्र लिखी सी रही टक बांधि विचित्र सु मालती हाय गरैं कर्यौ ।
भूलि गई सुधि गेह की देहकी तेह विसारि सनेह गरैं पर्यौ ॥४५॥

वड़ी चौपाई

जब कह्यौ वचन प्रतिहार जानिकैं अपनौं जानि रसालैं ।
सो भयो मालती कै उर अन्तर वरछी तूल दुसालैं ॥
यह विधिनैं कहा वनाई अन विधि यौं मन मध्य विचारैं ।
पुनि भई चौकरी चूक मृगी सी कासौं दरद उचारैं ॥४६॥

त्रियंगी

कासैं सु उचारै दरद पहारै, को निरवाहे हितकारी ।
दोऊ कर भींजें पितु सों खीजैं मन में सीजैं नव नारी ॥
नीरजसे लोचन ह्वै रंग रोचन लागे मोचन जल भारी ।
भीजी रतनारी सहित किनारी अंगिया सारी जरतारी ॥४७॥
जरतारी सारी हुव दुख कारी भूपन भारी को झेलें ।
मालति कहलानी कान्ति विलानी भंभरि गुलानी तिहि खेले ॥
तिरछौ ही चितवे माधव मितवैं जुग से वितवै पलक लगे ।
कछू भई उदासी उसकी हांसी कुल की फांसी कंठ खगे ॥४८॥

दोहा

इह सुनि माधव मालती विवरनता छवि छाय ।
नाचै दुवौ समाज में व्याकुलता दरसाय ॥४९॥
मदयन्ती पुनि हरषि कैं मालति कौ भरि अंक ।
वोली अति मधुराय कै ह्वै कै निपट निसंक ॥५०॥

सवैया

हम सौं तुम सौं हितु है पहलै न दुभांति कछू दरसाति सखी !
अब तो यह नातौ नयो प्रगटयौ उर आनंद की वरखा वरखी ॥
नित ही मिलि संग विहारहिगी सब आवन जान उपाधि नखी ।
विधि ने रचि राखी हुती पहलैं वह रीति सुनैननि आजु लखी ॥५१॥

छप्पय

हम तुम खेली संग मालती तव रज खेलनि ।
अब मो घर की भई सिरोमनि आनंद मेलनि ॥

यह सुनि कामंदकी कह्यौ मदयन्ती सौ हसि ।
तोहु ववाई होहु कहत हौं संकट कौ नसि ॥
तुव भ्रात नंदनहि मिलो जो कुंवरि मालती गुण भरीय ।
पुनि सुनि उचरी मदयन्तिका तुव प्रसाद तें दुख टरीय ॥५२॥

दोहा

लवंगिके तुव लाभ ते मेरे मन के अर्थ ।
पूरे कीनें प्रेम सौ है विधि परम समर्थ ॥५३॥
वोली वहुरि लवंगिका मदयन्ती सौं आय ।
सखी हमारे किये को निहचै निवर्‌यौ नाय ॥५४॥

तिलका छंद

मदयन्तीय नैं, गुन्वन्तीय नै ।
वुध रक्षीय सौं, उचर्‌यौ जीय सौ ॥५५॥

विजोहा छन्द

व्याह के काजते । सज्जने आजते ।
वेगिही चहत्रीयै । मोद में रक्षियै ॥५६॥

संजुता छंद

वुधिरक्षिनी इहि वैन कों । सुनिकै लहे चित चैन कों ।
उचरी सभौं लखि पायकें । मदयन्ति के समझायकें ॥५७॥
चलिये सखी अतुराय कें । अव और ख्याल भुलाय कें ।
इहि विधि भाखि दुवौ जनी । उठि कैं लसीं छवि सोंजनी ॥५८॥

सोरठा

कामन्दकि के कान लगि उचरीय लवंगिका ।
भग्वति सिद्धि निधान, निरख्यौ कौतुक होत जो ॥५९॥

सवैया

सुख के वरसाय के मेहन कों उर में शशिनाथ दया परखै ।
अंगराय के फेरि लुभाय कछू सकुचाय के भौंहनि में विलखै ॥
मदयन्तिय औ मकरन्द दुवौ मन्मत्थ कठोर अतंक नखै ।
तिरछे अध मुद्रित नैननिसों अरविन्द से मुख मंजु लखै ॥६०॥

दोहा

इहिं औसर नृप को मनुज वोल्यौ अब इत आउ ।
मयन्ती क्यौ रति है तू अवेर कौ दाउ ॥६१॥

तोमर छंद

बुधिरक्षिता अतुराय । उचरी फिर्‌यौ समुहाय ॥
प्रभु होयगो अनुकूल । मिटिहै तवै हग सूल ॥
नृप के मनुज के संग । मयन्तिका मुदमंग ॥
बुधिरक्षिनी की बांह । गहि दुरी पट के मांह ॥
पुनि तच्छनै थहराय । सुधि और सकल भुलाय ॥
माधौ हियै भरि ताप । लाग्यौ विचारन आप ॥६४॥

सवैया

आस की डोरि रही वढ़िकें जु गु-अौचक आज तड़ाक दै टूट्यौ ।
आधि औ व्याधि अगाध महा अग अंगनि में दुखदायक जूट्यौ ॥
हाउ अनंग हियै कृत कृत्य रह्यौ नुचि तौ विधि सोचन छूट्यौ ।
हा इति मेरी वसाय कछू ऋतुराज हुलास समाजनि लूट्यौ ॥६५॥

दोहा

जग में दुर्लभ है सजन, जाके प्रेम समान ।
उलटि गयौ विधि तौव ए, है गति उचित निदान ॥६६॥

सवैया

जद्यपि सौहै विराजति पै न ठिकानें तऊ अजहूंचित आवतु ।
नन्दन कौ नृपनें दिय मालती वैन सुन्यो हिय चैन घटावतु ॥
और भयो रुख तच्छन ही पर पक्षन के मनमोद वढ़ावतु ।
सो वह भोर के चंद समान प्रिया मुख मेरो हियो पजरावतु ॥६७॥

कामद सिद्धिनि ने उर अन्तर कीनौं विचार नु यौं हितकारी ।
मालती माधव के मन मद्धि कलेस भर्‌यौ इहि औसर भारी ॥
आस विनास भई निहचै दुहुं प्रान जनन अचकां दुख हारी ।
खैंचि के कान प्रमान कमानहि मारिकें वान मनोज खिलारी ॥६८॥

दोहा

परगट वोलो वहुरि यौं, सिद्धिनि कामद नाम ।
माधव सौं परिहास करि, मंडित प्रेम ललाम ॥६९॥

सोरठा

माधव पूछो तोहि, तें जानी ही चित्त मैं ।
मालति दैहै मोहि, भूरिवित्त सुख पाय कें ॥७०॥

माधव हिये लजाय, तव सिद्धिनि सौं उच्चर्यौं ।
नहि नहि पैउ आय, खटकति हीं वातैं प्रथम ।।७१।।
इहि औसर मकरंद, सिद्धिनि सों वोल्यो प्रगट ।
यह संसय अनदंद, प्रथम दई ही माधवै ।।७२।।

कामंदकि तजि खेद, सुनि वोली मकरन्द सौं ।
मै जानति यह भेद, जग में सो परकास है ।।७३।।

दोहा

भूरिवित्त पै मालती, मांगी जवै नरेस ।
नंदन काजै तब्व ही, तानै कही सुदेस ।।७४।।
निजु कन्था के आपु हौ, निहचै प्रभु महाराज ।
ताकौं पूछतु हौ कहा, वली गरीव निवाज ।।७५।।

यह सुनि कैं मकरन्द पुनि, बौल्यौ समय निहारि ।
ऐसैं ही है वात इह, देखौ चित्त विचारि ।।७६।।
पुनि उचरी कामन्दकी, राजपुरुष नैं आय ।
कही आज हूं वात यह, नृपनै दई सुभाय ।।७७।।

है सुत बानी तंत्र सों, वंध्यौ सवै संसार ।
ताते वानी मुख्य है, पुन्यापुन्य विचार ।।७८।।
भूरिवित्त ने प्रथम जो, कह्यौ वचन लहि रीति ।
है वह झूंठोई कहा, समझै या सव नीति ।।७९।।

सोरठा

निहचै मालति नाहि, निजु कन्या महाराज की ।
कन्यादानहि मांहि, नहि नरपति सु प्रधान है ।।८०।।

तातै सुत निर्धार, समझौ चित्त विचार यह ।
अरु तो मोहि असार, मानतु है उर में कहा ।।८१।।
तातै जतन अपार, मै निहचैं कै करौगी ।
जैसे माधव भार, तासौं मिलै सुमालती ।।८२।।

मधुभार

मकरंद फेरि । उचर्यो सु हेरि ।।
तुम कहति वैन । भग्वति सचैन ।।८३।।
नहि झूंठ रंच । सो विन प्रपंच ।।
मैं कहतु ताहि । सुनियें उछाहि ।।८४।।

छप्पै

दया करति के नेह तुम्हारी इहि वालक पर।
जो विरक्त ह्वै चित्त द्रवै भगवति अब अरवर ॥
और तुम्हारो जतन सफल जग मे सव लायक ।
अरु पुनि कहियै कहा प्रवल है त्रिभुन नायक ॥
वह चाहेगो सो करहिगो अन्तरजामी निडर ।
नहि काहू की तासों चलै वाही के वस चर अचर ॥८५॥

मधुभार

इहि समय आय । पट में सुभाय ॥
धुनि भई एह । मंडित सनेह ॥८६॥

दोहा

हे भगवति ! यह कही है, भूरिवित्त को भाम ।
लै मालति को वेगि तुम, घर आओ अभिराम ॥८७॥
यह सुनिके कामन्दकी, वोली अति अतुराय ।
उठि वत्से ! यह सुनि सवै, ठाढ़ी भई सुभाय ॥८८॥

सोरठा

मालति माधव तव्व, हित करुणा भरि दृगन में ।
निरखन लगे अगव्व, छिन इकु विरह विसारि कैं ॥८९॥

पावकुलक छन्द

माधव मन में चितन लाग्यौ । सगरी सुक्ख तनक में भाग्यौ ॥
मालति संग माधवै एती । भई जात्रा दुख निकेती ॥९०॥
कै यह मोहि अचंभो भारौ । देवमित्र ह्वै कै अविकारौ ॥
प्रथमहि एकरूप सुख दैकैं । अव दुख देत सक्र सम ह्वै कैं ॥९१॥
मालति हू मन माई विचारी । इतनौं ही प्रीतमें निहारी ॥
अरु मौकौ यानें ह्यां देख्यौ । इतनों ही विधि नैं अवरेख्यौ ॥९२॥

मधुभार छन्द

सुलवंगिका । सुभ दृगिका ॥
तिहि पै कह्यौ । दुख कौं लह्यौ ॥९३॥

पावकुलक छन्द

हाय ! हाय !! मालति सुकुमारी । सोच सिंधु में पितु ने डारी ॥
नन्दन कों जुमालती दीवौ । जानि पर्‌यौ दुर्लभ इहिं जीवौ ॥९४॥

मालती सोचन लागी मन में । ज्वाल विरह की जागी तन में ॥
इतनौं ही सुख विधि ने दीनौ । जीव जायगौ दुख अधीनौं ॥६५॥
और तातहू निहचै मेरो । ह्वै है सो अवधूत करेरो ॥
औरौं घनें दुख फल पैहै । सुख समूल उरतैं उड़िजैहै ॥६६॥
देहि उलंभौ काहि अभागी । काके सरन जाऊं दुख पागी ॥
को ऐसौ मेरो हितकारी । जो यह विथा वटावै भारी ॥६७॥

दोहा

इतनें में सुलंवगिका, वोलि उठी अतुराय ।
लाउ आउ इन मालती, निजु घर चलैं सुभाय ॥६८॥
यों कहि कामन्दकि सहित, भई सु पट की ओट ।
उर के मधि लागी रही, दुसह मदन की चोट ॥६९॥

काव्य छन्द

माधव मन के मध्य विचारन लाग्यौ तच्छन ।
समाधान मो करति भग्वती परम विच्छन ॥
सोच-सिंधु में मगन रहेगो मेरो जीवन ।
सु अव कहा कर्तव्य लगो हितु लाहू पीवन ॥१००॥
विना मंत्र की सिद्धि जतन कछू सूझत नाहीं ।
ताते चलि मरघट्ट काज कीजे तिहि ठाहीं ॥
परगट वोल्यौ फेरि अरे मो प्रिय मकरन्दा ।
मदयन्ती को तोहि कछु खटकतु मुख चन्दा ॥१०१॥
यह सुनिकैं मकरन्द मित्र माधव की वानी ।
आपु उच्चरयौ फेरि डीठि करि नेहु विकानी ॥
कहा कहौं निज विथा जु मेरे उर में व्यापै ।
पै मै तोसों कहत चित्त दैकैं सुनि आपै ॥१०२॥
तिरछैं चित्तई चलत सरस सिर सारी सरकी ।
ताहि न सकी संभारि विथा विछुरन के भरकी ॥
त्रस्त वाल मृग दृगन पुनि चंचल करिकैं ।
सुधा सनी करि डीठि मनौ भेंटी हित भरिकैं ॥१०३॥

सवैया

पाय दियौ चलिवे कौ उते सिर तें इकलाई गिरी रंग सानी ।
ताहि न थावि सभी कर सों शशिनाथ मनोज विथा सरसानी ॥
तच्छन औरहि ढग भयौ अग अंगनि कौ जड़ता परसानी ।
सो वह छाय रही उर जो तिरछाय विलोकनि सौ लपटानी ॥१०४॥

मुक्तादाम छन्द

कह्यौ यह वैन जवै मकरन्द । तवै सुनि माधव वुद्धि विलंद ॥
कियौ पुनि आपुन यौं सुअलाप । जऊ उर हौं अति मडित ताप ॥१०५॥
सखी वुद्धिरक्षिनि होहि सुलम्भ । न ता हित तैं तुव काज दुलम्भ ॥
हियै वह चाहत तोहि निदान । प्रिया लखिहै फिरिहू छवि वान ॥
गिर्यौ असु रक्षिय नाहर तन्त । मिल्यौ तन सौं तन और इकन्त ॥
छिनौ छिन तोहि लखी तिरछाय । भुलाय न मेप सनेह वढ़ाय ॥
तो विनु और ते आपु मिलै न । दिनेस विना जिमिकंज खिलै न ॥
इती सुनि कै उचर्यौ पुनि वैन । हितू मकरंद रतोपल नैन ॥
चलौ उठि कै सरिता अवगाहि । चलै अपने पुर में चित चाहि ॥
इतौ कहि नांचि सभा तिहि मद्धि । चली विधि सौं उर आनंद वद्धि ॥१०६॥

दोहा

है यह संगम नदिन कों, मैं जु कह्यौ हो मित्र ।
सव दिसि के आवतु यहां, तीरथ जानि पवित्र ॥११०॥

सवैया

जाति अनेक उमंगनि सौं कढ़ि आवति केति तरंगनि न्हाय कैं ।
अंगनि पै लपटाय रहै पट भीजि लटैं लटकैं छवि छाय कैं ॥
रंचक है न छिपाव कछू शशिनाथ चितै चित लैतु चुराय कैं ।
कंचन वेलि सी वांहनि में तिय चोजनि सौं सउरोज दुराय कैं ॥१११॥

दोहा

इतनो कहि पट में दुरै, माधव अरु मकरन्द ।
सवै समाजिक लखिरहै, आगम और अदन्द ॥
नाहर तैं मकरन्द ने लीय मदयन्ती रक्षिय ।
याही चौथे अंक में कीनौ प्रेम प्रत्यक्षि ॥११३॥

हरिगीत

वदनेस नंद प्रताप जाको तेज दिनमनि तूल है ।
अब करन सौ ताकैं वहादुर कुंवर आनंद मूल है ॥
तिहिं हित्त कवि शशिनाथ ने रच्यौ विचार निसंक है ।
माधव बिनोद सुग्रन्थ कौ यह भयो चौथो अंक है ॥११४॥

इति श्री माथुर चतुर्वेद मिश्र सोमनाथ शर्मा कवि विरचिते माधव-विनोद नाटके सार्दूल संभ्रमो नाम चतुर्थोंकः ।

अथ पंचमोऽङ्कः

दोहा

पट उघारिकै सभा में, आई विकट सरूप ।
क्रूर कपाल सु कुंडला, नभ के गभन अनूप ॥१॥

नाराच

रटैं जु नित्य नाम और चरच्चई पिछानि कैं ।
तिन्हें प्रसिद्धि सोमनाथ अस्ट सिद्धि दानि कैं ॥
अनेक शक्ति संग ही रहैं लगी घमंड सौं ।
स्वतंत्र ब्रह्म रूप जे अखण्ड तेज चंड सौं ॥२॥

दोहा

यौं महेस को वर्नि कै नभ में हियैं उताल ।
अपनी गति लागी कहन सो कुडला कपाल ॥३॥

सवैया

जांनत जोग की रीति सु हौ हिय अंबुज मद्धि समाधि लगाय कै ।
देखति हौं शशिनाथ समान ही आपुन पौ जगदुख भुलाय कैं ॥
नाहिनहूं के उदै पहचान तैं अंबर के पथ मैं अतुराय कैं ।
घोर घटानि की है लपटानि सो काटति जाति चली छवि छाय कैं ॥४॥

नाराच

जरैं मसाल से विसाल नैन नील वर्ण में ।
कराल अन्त्र जाल में कपाल कंठ कर्ण में ॥
हलै धुजा सुरंग छोरि व्यारि जोरि खग्ग कैं ।
खडक्कई सु मुण्डमालहूं उरोज लग्गि कैं ॥५॥

जऊ घटानि सौ जटानि कौं सु जूट जट्टियौं ।
तऊ कहूं कहूंक छुट्टि अंग में लपट्टियौ ॥
वजत्ति वार वार चारु खुद्र घंटिका चली ।
लसत्ति यौं उदण्ट हौ कपाल कुंडला भली ॥६॥

जरत्ति ही चिता अनेक तासु वास पाय कैं ।
धुवनि तैं लखो धरन्नि ओर डीठि लाय कैं ॥

मसान के नजीक थान चंडिका करान को ।
निहारि कै कियो विचार ग्वाल अरु कान को ॥७॥
अघोरघंट सो गुरू गनो इतौं कुमार कै ।
जप्यो जु मंत्र हौं नु याहु सुन्यो सुभाय कै ॥
कराल चंडिका निमित्त नारि एक नागरी ।
चुराय लाइ भेंट सो करन कुंडला धरी ॥८॥

दोहा

सो जाहर या नगर में मदु मालती नाम ।
अब ताही को ढूँढिहौ कर्नो गुरु को काम ॥९॥
इत उत को निरखत लगी, लसतै मधुर प्रकास ।
दीठि पर्यौं माधव तहाँ, आवत निपट उदास ॥१०॥

सोरठा

मधि मसान में ताहि, देखि निसा ठगि निरखिकौ ।
को साहस अवगाहि मोहन मूरति जातु है ॥११॥
कुवलय दल सो स्याम, अंग मनोहर तन जगमगैं ।
चंद वदन अभिराम, मंद मंद डग देतु है ॥१२॥
वाम हस्त नर मांस, नख सैं सोनित सो स्त्रवो ।
याकैं निपट प्रकास, साहस जान्यो जात है ॥१३॥
यों विचार करि आप, क्रूर कपाल कुंडला ।
पुनि उर हरषि अगन्य, मन में निज लागी कहन ॥१४॥

दोहा

कामन्दकि के मित्र को है यह पुत्र प्रचंड ।
हमें कहा तजि आपुनो, कीजै काज अखण्ड ॥१५॥
इतने में संध्या भई ताहि निहारि उदार ।
लागी यों वर्नन करन, छावत जानि अंध्यार ॥१६॥

हरिगीत

लगि विपन सोकनि अति अरोकनि धूम ज्यों मढ़ि जाति है ।
ज्यों वृच्छ वेलिन सघन केलनि तिमिरि मंडिय आति है ॥
जनु नवल नीरनि बहु गभीरनि मगन छितिन लखाय है ।
आरंभ ही तजि दम्म रजनी दियो आपु जताय है ॥१७॥

विष्कंभक

यौं कहि कपालसुकुण्डला पट में दुरी अतुराय कैं ।
पुनि तच्छनै पट टारि माधव परगट्यौ तिहिं आय कैं ॥
यों कहतु निज उर मद्धि प्रतिपल निपट ही ललचाय कैं ।
कब भेंटिहै वह मोहि प्यारी नेह कों सरसाय कैं ॥
लखि जाहि नैन अचैन सिगरे एक वेर भुलाय है ।
नहि और काज समाज कोऊ चित्त में लहराय है ॥
खुलि केश मंडित वदन मोरे हियें उरज अराय कैं ।
मो अंक में विन संक लसिहै प्रिया कवहूं दाय कैं ॥
अथवा कलंक विहीन सुन्दर चंद केहर सार कौं ।
विधि ने रच्यौ मुख सुविधि जाकौं सज्जि वुद्धि अपारकौ ॥
जुत्त मत्त मधु कर कमल दल से नैन विरह विडारनै ।
इक वेरहू लखि वहुत मानौ किये तन मन वारनै ॥२०॥

सवैया

है प्रतिविंवित चित्रनि कैं निज वाननि सौं जड़ि काम दई है ।
सोच निरंतर तंत के जालनि सींखै अति ही ठीक ठई है ॥
कै शशिनाथ की सौंह विरंचि ने भग्वति वीज समान वई है ।
नैंक इते उत होत नहीं सु किधौं उर अन्तर लीन भई है ॥२१॥

दोहा

इहि औसर नेपथ्य में, कलकल भयो अखंड ।
माधव ने मन में कह्यो, है मसान परचंड ॥२२॥

मंथान छन्द

दिख्यो मरघट्ट । तिट्टां निघट घट्ट ॥
खिदन्ती करैं भूत । ठठ्ठे मजवूत ॥२३॥
कित्तै करैं तत्त । दै ताल उन्मत्त ॥
कोऊ किलकन्त । कट्ठैं सित्त दन्त ॥२४॥
कित्ते भखैं अन्त । ज्वालें उच्छरन्त ॥
कोऊ करैं गान । लै तांडवी तान ॥२५॥
कित्ते जुटें जंग । मैंढानि कें ढंग ॥
कित्ते जुठैं दोय । भैंसानि से भोय ॥२६॥
कित्ते करैं नद्द । ह्वै कछु वेहद्द ॥
गज्जैं मनो मेह । सज्जैं प्रलै तेह ॥२७॥

कित्ते पिये रत्त । ल आपनी नत्त ॥
कित्ते लियें नाग । कुद्दें चहुं भाग ॥२८॥
चब्बैं घने हाड । कै चित्त की चाड ॥
नैना मनौं ज्वाल । वेताल के वाल ॥२९॥
लै हत्थ हड्डीन । खेलैं कवड्डी न ॥
चाटें चरब्बीन । मानों परब्बीन ॥३०॥
चूसे घनैं आंत । कंपाय कै गात ॥
दन्तावली भार । सजौ हिय हार ॥३१॥
आनन्द सौ मट्ठि । जिहवा किते कट्ठि ॥
उच्छारईं भुंड । यौं रच्चि के झुण्ड ॥३२॥
औ अंत्र के जाल । कै जुग्गिनी माल ॥
हत्थौ धरा देत । नट्टी कला लेत ॥३३॥

दोहा

रे ! रे !! भूत विताल जै, सदा वसत परघट्ट ।
खेउ सुवेचत मांस कौं नर कौ सस्त्र अकट्ट ॥
पुनि कलकल नेपथ्य मैं, भई सुनत यह कैन ।
माधव पुनि चित्यौ हियै, है मसान भय दैन ॥३५॥

त्रिभंगी

वेताल उचक्कै कहूं मचक्कैं आनंद छक्कै छल धारैं ।
भूतन के छौना कहूं डरौ ना मुण्ड खिलौ ना उच्छारैं ॥
मुख पावक झारैं अम्बर जारैं अंग उघारैं डर डारैं ।
प्रेतनि की नारी अरु तन कारी दै दै तारी किलकारैं ॥३६॥

दोहा

दै परिकम्मा सभा में, नांच्यौ माधव आप ।
इत उत निरख्यौ चित्त में, लहि निर्वेद अनाय ॥३७॥
है मसान के कूल यह, कैसी नदी भयान ।
सघन वृक्ष वल्ली तिमिर छायौ जहां अमान ॥३८॥

नाराच

उलूक के घमंड ते घरघघरे प्रचंड है ।
शृगाल के समूह और किक्करै उदंड हैं ॥
सरित वीच हाडपुंज नीर वेग मंडि कै ।
विहद्द सद्द सज्जई भद्द ठौर छंडि कै ॥३९॥

मधुभार छन्द

नेपथ्य मद्धि । पुनि खेद वद्धि ॥
यह धुमिल सोक । प्रगटी अरोक ॥४०॥
हे हाय तात । मालतीय गात ॥
अब नास होत । हुव दुख उदोत ॥४१॥
सुनि यह उचार । माधव उदार ॥
चिंत्यौ सु एह । मंडित सनेह ॥४२॥

छप्पै

दुखित कुररी कूक तुल्य यह सद्य सुहावन ।
परचित सौ मन हरै श्रवण कौ मोद वढ़ावन ॥
अरु भ्रमाय कै हियौ करै विहवल अंगनि ।
कम्प डगमगै पाय भई गति निपट कुढंगनि ॥
यह कहा वात मरघट्ट में, रंचक नहिं समझत परति ।
कराला चंडी निकट तें हतैं धुनि प्रगटीय अति ॥४३॥

सोरठा

इहां होत वलिदान, नर पशु पुन्जन के सदा ।
तातैं चलि तित थान, देखो अब ह्वां है कहा ॥४४॥

दोहा

पट उछारि कै सभा में आए निठुर निदान ।
दुचित कपाल सु कुंडला घंट अघोर भयान ॥४५॥
अरु वलि देवैं के लिए करि मालती तयार ।
चंदन ललित लगाय कैं, पहिरायौ हिय हार ॥४६॥

मधुभार

मालतीय वाल । पुनि तिहिं काल ॥
इमि रटीय वैन । जल पूरि नैन ॥४७॥

पावकुलक

हाय तात ! अरु मात ! अयानें । अब मो प्रान करत पयानें ॥
हाय लवंगिय सखी सहेली । अब तू रहि है दुखित अकेली ॥४८॥
हाय ! हाय !! कामद मो प्यारी । सुधि करिहै' तू मोहि दुख्यारी ॥
मोसौ करि हित तुम दुख पायौ । मेरे हू न भयो मन भायौ ॥४९॥
माधव ने सौ आप निहारी । पहचानी कव ही यह नारी ॥
मृग के दृग सम नैन निवारी । जो कुसुमाकर मद्धि विहारी ॥५०॥

याकौं यह अव मारव चाहैं । पाप रीति उर में अवगाहैं ॥
क्यों हूं याको जीव वचैयै । अति उताल विक्रम दरसैयै ॥५१॥

सोरठा

तछन सौ अवधूत, नाम अघोरा घंट है ।
देवी कौं मजबूत, स्तुति करिवे कौ सुरुख हुव ॥५२॥

काव्य

चंचल कुंजर चर्म तासु नख लाय उचंदहि ।
चंडमाल के मुंद सुधा छवै पाय अनंदहि ॥
खिलखिलाय कै हंसे भूतगन तिन कौं डट्टत ।
त्रस्त हत्थ जुग जोरि चहुं दिस विनय उघट्टत ॥५३॥
तृतीय नैन की ज्वाल भ्रुमन में इहि विधि राजय ।
मनहु उल्ल अल्लात चक्र मंडल में छवि छाजय ॥
दव्वि भुजन भुजंग फुंकरै गरल उगल्लित ।
नर पंजर ध्वज नौक उरझि तारागान छित्रित ॥५४॥
करगति सों उक्खारि तुंग उच्छारति पव्वय ।
धरनि पग्ग उद्दंड कोल अहि कच्छप दव्वय ॥
दत ताल उत्ताल वीर वेताल किलक्कत ।
जिनके उद्भट रंग अंग सित दन्त चिलक्कत ॥५५॥
होत शब्द अनहद्द गौरि उर में लहि संकै ।
सोमनाथ के कंठ लिपटि कैं विलसी अंकै ॥
यह जु तुम्हारौ नृत्य अम्ब उत्तम छलवारौ ।
ह्वै सहाय अतुराय हमारौ काज सुधारौ ॥५६॥

मधुभार

माधव दयाल । सो लखि हवाल ॥
चित्त में विचार । यौ किय उदार ॥५७॥

छप्पै

दै पापिनि के मध्य भूरिवसु की यह कन्या ।
ठाढ़ी है इहि विद्धि शील गुन करिकैं धन्या ॥
जुग तयारीन के वीच मृगी ज्यौं दुख सभोई ।
तिहि ठां लखियै नाहि सहायक दूजौ कोई ॥
है धिक्क धिक्क अनइष्ट अति समयौ आवत डीठि अव ।
विधि ! तुव गति जानी जाति नहिं दूरि करत सब के गरव ॥५८॥

बड़ी चौपई

तहं बोली बहुरि कपालकुण्डला मालति सौं रसभीनैं ।
है प्यारो तोहि ताहि सुधि करिलै वचन सत्य कहि दीनै ॥
सुनि निपट कठोर काल अव तोकौं चाहत है अतुरानें ।
नहिं नैको दया हमारे मन मैं हम निजु काज लुभानै ॥५९॥

तोमर छन्द

सुनि मालती यह बैन । उर मद्धि चूरि च चैन ॥
सरसाइयौ हित मैन । उचरी सलज करि नैन ॥६०॥

बड़ी चौपई

अब हाय ! हाय ! हे प्यारे माधव !! हौ परलोक पधारति ।
तू निहचैं मेरी सुद्धि कीजियौ पूजि हिय में आरति ॥
जग जाकौ प्रीतम जन सुधि करही सो तो अमर सदाई ।
अरु जाहि न सुमिरै कोऊ ताकौ जीवन मरन वृथाई ॥

प्रभातिका छंद

सुनै सुवैन यौं जवै । कपालकुण्डला तवै ।
गरव्व चित्त धारिकै । कह्यौ सु यौं पुकारिकै ॥

दोहा

माधव सौं अनुरक्त ह्वै यह रंकिनी निदान ।
वडी खेद यह छायकैं, विकल करै मो प्रान ॥

मधुभार

उर में अभग्ग । कर लै खरग्ग ।
अग्घोरघंट । उचरयौ सुरट ॥६४॥
जय सिद्धि हेत । वलि तोहि देत ॥
तू सहित फूल । यह करि कवूल ॥६५॥

अथ अघोरघंट वर्णनम्

हरिगीत छन्द

सिर केस ठढ्ढे अद्धि लवढ्ढे अंग कज्जल रंग है ।
जनु ज्वाल जग्गौ लोम पग्गौ नैन निपट कुढंग है ॥
अरु दन्त कढ्ढै पाय गढ्ढै हत्थ में करवाल है ।
मालतिहि उढ्ढै नहिं अहट्टै मनहु क्षुधित काल है ॥

जिय तोहि प्यारो है उदारी ताहि वेगि पुकारि लै ।
हित स्वाद चक्खै तोहि रक्खै जाय जो घर नारिलै ॥
तुव सीस खंडित मोद मंडित चंडिके बलदान है ।
नहिं जानि कच्चिय बात सच्चिय उच्चर्‌यौ सिव आनि है ॥६७॥

सवैया

घंट अघोर कौ घोर सरूप निहारिकैं सागर अक समोई ।
बेरी अहेरी नै बाल मृगी सम ए कही बार सबै सुधि खोई ॥
कम्पित गात न बात कढ़ै न परयौ तिहिं डीठि सहाय न कोई ।
माधव नाम उचारि तबै तहं मालती हारि पुकारि कै रोई ॥६८॥

हरिगीत

अपनें सुनामै सुनि ललामैं तजि विरामैं नेह सौं ।
धरि चपल डग्गैं चल्यो अग्गै निपट पग्गै नेहसौं ॥
तहं धूत दिख्यौ रिसि विसिख्यौ मूढ़ लिख्यौ तब्बई ।
माधव सरक्कस गहि बरक्कस भरि करघ्घुस गब्बई ॥६९॥
सिर मसक पग्गई काढ़ि खग्गई उच्चरयो ललकारिकैं ।
रे छंडि याकौ मंडि मोसौं जुद्ध क्रुद्धहि धारि कैं ॥
मालति सुलच्छन नारि कौं गहि हत्थ माधव दच्छनैं ।
अघ्घोर घंटैं समर ठठैं कह्यौ न्यारी तच्छनै ॥७०॥

सवैया

हालै हियौ हिलकीन के संग भई अंग अंगनि में निबलाई ।
ऊची उसासनियां सू चयै अंखियानि तैं आंसू को धार बहाई ॥
खूंटि कैं बेनी गए खुलि कुंतल आनन पै अलकावलि छाई ।
दुज्जन कौ घर घालति या विधि मालती माधव के ढिग आई ॥७१॥

आभीर

मालती अति सुकुमारि । माधव ओर निहारि ॥
यौं उचरी अकुलाय । तच्छन औसर पाय ॥७२॥
अब तू मोकूं रक्षि । माधव पिय परतक्षि ॥
यौं कहि कैं अनुराय । लिपटी विरह नसाय ॥७३॥
माधव बोल्यौ फेरि । तासौं दुख निवेरि ॥
प्यारी ! मति भय मानि । मो ढिग पहुँची आनि ॥

संका मरन मिटाय। तोकौं लियो छुटाय ॥
मै तेरो अति मित्र। आगें हो सु विचित्र ॥
इहि पापी निर्धार। निज करनी कौ पार ॥
पावेगौ इहि ठार। अवहो कछू न अवार ॥७६॥

मधुभार

यह वचन कान। सुनिकैं मयान ॥
अग्घोर घंट। उचरयौ सुरंट ॥७६॥
यह कौन आय। उर छोह छाय ॥
मेरौ विगार। कीनौं अपार ॥७८॥

प्रमनिका

सुनैं सु वैन यौं जवै। कपाल कुंडला तवै ॥
कह्यो अघोरघंट सौं। प्रचंड वुद्धि रंट सौं ॥७९॥

दोहा

हे प्रभु! याको मित्र है, यह माधव वलधाम।
कामन्दिकि के सुहृद कौ, पुत्र महा अभिराम ॥८०॥
इहि उद्भट मरघट्ट मै, पल को वेचन हार।
जाको विक्रम आपहू, लखि लीनौं इहि ठार ॥८१॥

पावकुलक छन्द

माधव अंसुआ पूरित नैनन। मालति सों यौ उचरयौ वैनन ॥
सावधान ह्वै कहि निजु वातनि। प्यारी कौऽव कंपावत गातनि ॥८२॥
यह सुनि वचन मालती वोली। प्रेम पंथ तें नेकु न डोली ॥
इतनौ तौ प्यारे हों जानति। सो अव सांची वखानति ॥८३॥
मैं अपनी सु अटारी सोई। जागी यहां दुख में भोई ॥
जानति नाहिं कौन लै आयो। तुम सौ सिगरो भेद जतायौ ॥८४॥
तुम ह्यौ कहौ कौन विधि आये। अंग अंग दुख सों अधिकाये ॥
यह सुनिकैं मालति की वानी। पुनि वोल्यौ लज्जित सुखदानी ॥८५॥
तो सौं व्याह हौंन के काजे। मांस लियें साहस कौं साजें ॥
वेचत हौ प्रेतन के हत्थे। मरघट में नहि कोऊ सत्थैं ॥८६॥
तेरा टेरि रुदन की सुनिकैं। आयौं हौं आतुर सिर धुनि कें ॥
यह सुनि कै मालति हित गरुवें। लागी कहन फेरि सुख हसवै ॥८७॥
मेरे लिये अकरने कामहिं। करत फिरै यह निपट उदामहि ॥
रचक नहीं मरन में मानैं। निहचें प्रान सनेह विकानैं ॥८८॥

सोरठा

माधव बोल्यो फेरि, न्याय काक तालीय हुव ।
याकौ लायो घेरि, कोऊ हनै आयो यहां ॥८९॥

दोहा

दुष्ट चोर कै खग्ग तें यों उर्वरि सुकुमारि ।
चंद कला ज्यौ देव वस, राहु वदन कौ फारि ॥९०॥

सवैया

इह मैं इत आय वचाय लई जु मुनीसनि के मन कौ करखै ।
इहि और मेरी भई गति यौ ससिनाथ विना तिहि को परखै ॥
कहलाय अतंक वढ़ाय छुहाय अचंभित ह्वै करुणा वरखै ।
कवहूं रिस पावक सौ पजरै कवहूं सुख पाय हियौ हरखै ॥९१॥

मल्लिका छन्द

उचर्‌यौ अघोरघंट । पाप कर्म काज रंट ॥
माधवै सक्रुद्ध हेरि । चित्त दै दया निवेरि ॥९२॥

दोहा

रे डिम्भी द्विज ! मरन ह्या क्यौ आयौ इहि भाय ।
नाहर घेरी मृगी पै ज्यों मृग नेह वढ़ाय ॥९३॥
अव तेरो सिर खंडि हौ गहि कर खग्ग उदंड ।
रुधिर पियेगी प्रेतनी, फरकेगे धर चंड ॥९४॥

अमृतगति

यह सुनि माधव उचर्‌यौ । हित गति मैं नहिं विचरयौ ॥
सठ मति रट अधरमी । तनक न तो उर नरमी ॥९५॥

कवित्त

चारु त्रिभुवन कौ चुराय कै रतन अरे,
सार विन जगत कौ करिवो विचारयौ है ।
रहतौ कछू न पुनि लोकनि कै लखिवे कौं,
याके वन्धवन कौ मरन विस्तारयौ है ॥
दृगन वनायवै कौ विधि परिश्रम यौं,
सो विफल कह्यौई हुतौ खग्ग पट तारयौ है ।
जीरन अरन्य के से वृक्ष रहि जाते नर,
अंदर्प तैने कंदर्प करि डार्‌यौ है ॥९६॥

बड़ी चौपई

अरु अति हित करनी सखी खेल मैं प्रगट तरस परिहासैं ।
नव सिरसि कुसुम की देती उर में मन में पूरि हुलासैं ।।
तव लटपटाय अरसाती अंगनि चंद वदन पियराती ।
तू ताहि खग्ग हति रचौ चहतु हौ जगत मद्धि उमदाती ।।९७।।

सोरठा

तातें मों भुजदंड, यह उद्धत जमदंड सौ ।
अब ही परयो अखंड, पापी तेरे मुंड पर ।।

मल्लिका

तच्छनैं अघोरघंट । उच्चरयौ निराट रंट ।।
मारि मारि दुख दानि । रंचहू दया निठानि ।।९९।।
मालती हियैं सिराय । कोटि दुख कौ वहाय ।।
उच्चरी समौं विचारि । मित्त माधवै निहारि ।।१००।।
साहसीक नाह मोर । हो प्रसन्न चित्त चोर ।।
रक्षि मोहि सुक्ख दीन । दुष्ट तैं वचाय लीन ।।१०१।।

प्रमानिका छन्द

फिरौ अघोरघंट सौं । महा अकर्म रंट सौ ।।
कपालकुंडला रटी । नहीं सयान में घटी ।।

मल्लिका

ईस सावधान चित्त । हत्थ लै कृपान थित्त ।।
या दुरज्जनैं विनास । आप नैन कौ हुलास ।।१०३

अथ माधव को वचन माल्ती सौं—
और
अघोरघंट कौ वचन कपाल कुंडला सौं—

सवैया

डरपैं मनि धीरज राखि हियैं दर्सावतु विक्रम तोहि नयौ ।
जिमि कुंजर कुम्भनि कौ मृगराज विहंडित चंड छुधित्त भयौ ।।
अरु पव्वय कूट निखंडतु ज्यौं गहि वज्र पुरन्दर रोस नयौ ।
अव सौ निर्वारतया अनभ ग्राहि खग्ग प्रहार न छोभ छयौ ।।१०४।।

दोहा

भई भूरवसु कै खवरि, गई मालती खोय ।
सुनत वात तन मन गयौ कहर जहर सौ भोय ॥१०५॥
हुकम कियौ तव फौज सौं मंत्री नै अकुलाय ।
चहूं ओर तें घेरि सव यह वन ढूंढौ जाय ॥१०६॥

भुजंगी

चले वीर वके तुरंगानि चड्ढे । पगे स्वामि के काम आनंद मड्ढे ॥
इराकी अरव्वी तुरक्की सुरंगे । कुरंगानि की चालवारे उत्तगे ॥१०७॥
वलक्खी अवल्लाव्य लक्खी कुमेता । वड़े लोल कल्लोल साजि समेता ॥
हरे और नीले सुनीले सराजी । वड़े अश्व के रंचक्षकक्षीस ताजी ॥१०८॥
घनैं विप्र छत्री परत्रीन जानै । सजैं सेल समसेर ढालै अमानैं ॥
दुहूं ओर तूनीर हत्थैं कमानैं । उदारे कटारे कसैं वुद्धि ठानैं ॥१०९॥
दवट्टे दई मत्थ पै हत्थ दिन्नौ । अरन्नैं चहुँ ओर ते घेरि लिन्नौ ॥
विहद्दे भए नद्द तें त्रास पग्गौ । विमुग्घे भजे जंगली जंतु जग्गौ ॥११०॥

दोहा

इहि औसर नेपथ्य में कलकल भई अखण्ड ।
सुनन लगै सव कान दै, कैसौ शब्द घमंड ॥१११॥
फेरि शब्द नेपथ्य में, या विधि भयो विशाल ।
सो अव आगै कहतु हौ, दूर होय नटसाल ॥११२॥

पावकुलक छन्द

अरे मालती ढूंढन वारे । सुनियौ मनुज सवै हित भारे ॥
भूरिवित्त कौ अति सुखदानी । तुम सौ कामन्दकि नै वानी ॥११३॥
इहि विधि कही कराला धामैं । घेरौ जाय करौ न विरामै ॥
विना अघोरघंट इहि काजैं । और न कोऊ करै अलाजैं ॥११४॥

भुजंगी

सुनें वैन यों तव्व सव्वै छुहांनै । लियौ घेरि कै चंडिका के सुथानै ॥
प्रवीनी वहां मालती दिख्य पाई । नवेली मनौ हेम वेली सुहाई ॥११५॥
जलजात से नैन भारे अन्यारे । जिनप्पै मृगम्मीन मम्मोल वारे ॥
मनम्मत्थ के वान की सांन ढारें । मनी हेम के अंग के साज धारें ॥११६॥
रक्त चंदना खौरि लग्गी लिलाटे । करव्वीर के कंठ में हार डारे ॥
लसै अंग में वास सौगंध पूरे । झलक्कैं पहच्चैन में चारु चूरे ॥११७॥

प्रमानिका छन्द

कपाल कुण्डला रटी। नहीं समांन मै घटी ॥
समौ हियैं विचारि कै। उछाह उग्गधारि कैं ॥११८॥

पावकुलक

हे प्रभु साहस उर मे धारौ। सावधान विक्रम पट तारौ ॥
चिता सवै दूरि करि डारौ। करिहै ईस सहाय तुम्हारौ ॥११६॥

मल्लिका

वैन एसु कान धारि। आपनों समौ निहारि ॥
फेरियौ अलाज रंट। उच्चर्‌यौ अघोरघंट ॥१२०॥

सोरठा

है विक्रम कौ काल, अव तो यह संसय नही।
सुनि कुण्डला कपाल, सावधान मै निपट हौ ॥१२१॥

प्रिया

उच्चरी मालती। प्रेम कौं पालती ॥१२२॥

मल्लिका

हाय तात लोभवन्त। हाय कामदानि सन्त ॥
कौन सौं सु कहौं भेद। जो हियै अनन्त खेद ॥१२३॥

दोहा

नृप के नर आए निरखि, माधव कियौ विचार।
इनि सौं मिलिकै मालती, सुचिती होय अपार ॥१२४॥
विनवौ घोर अघंट कौं, इनके देखत आज।
खण्ड खण्ड करि डारिहौं, गहि करवाल दराज ॥१२५॥

बड़ी चौपई

तिय मालति और कपाल कुण्डला दोऊ दुहुनि उसारी।
पुनि कीनौं नृत्य समाज मद्धि लैगति उद्दण्ड अपारी ॥
द्विज माधव और अघोरघंट पुनि जुद्ध अरथ समुहानै।
अव सावधान हो अरे अधर्मी। ऐसैं वचन वखानैं ॥१२६॥

त्रिभंगी

जिमि सक्र अलग्गौ प्रहरें नग्गौ त्यों अव खग्गौ पटतारौ।
रे पाप घमंडे! तुव अंग चंडे खंड विहंडे करि डारौं ॥

ते जल विन रोहू फरके लोहू सम भरि छोहू लपटानैं ।
भाखे स्यार सिहानैं तिन्है अघानें फिरें अमानैं दवटानैं ॥१२७॥

दोहा

इतने कहिकै ह्वै गये, सिगरे पट की ओट ।
कौतिक निरखन की रही समाजिकनि कै चोट ॥१२८॥
आए जे जन सचिव के, ते लहि मालति संग ।
गए आपनो काज करि, उर में सज्जि उमंग ॥१२९॥

सोरठा

मालति कौ लै साथ, चले सुजव परधान जन ।
तव तीय उचरी गाथ, मन ही मे मुरझाय कैं ॥१३०॥

सवैया

सव कोउ इतै उत डीठि परै जिन की गति हेरि हियै डरियै ।
ससिनाथ कहै विनु मित्र विचित्र अनूठी उसासनि कौं भरियै ॥
उपचार विचारतु हौ मु फुरै न रही अव तो गिनती धरियै ।
नव साय कछू गुरु लोगन सौं कहि रे मन ! हाय कहा करियै ॥१३१॥

दोहा

है या मे मरघट्ट कौ वर्नन यहा भयान ।
अरु अघोराघंट कौ खंडन क्रूर, निदान ॥१३२॥

हरिगीत छंद

वदनेस नंद प्रताप जाकौ तेज दिनमनि तूल है ।
अव करणसौ ताकै वहादुर कुवर आनंद मूल है ॥
तिहि हित कवि शशिनाथ नै रच्यौ विचार निसंक है ।
माधव विनोद सुग्रन्थ कौ यह भयौ पंचम अंक है ॥१३३॥

इति श्री माथुर चतुर्वेदी मिश्र सोमनाथ शर्मा कवि विरचिते माधव-विनोद नाटके मसानवर्णनं नाम पंचमोङ्कः ॥५॥

अथ षष्ठमोऽङ्कः

दोहा

फिर कपालकुण्डला पट उघारि कै आय ।
बोली ऐसैं रंग मैं लोचन क्रुद्ध रचाय ॥१॥
रे पापी ! तैंने हत्यो मेरो गुरू दयाल ।
यही मालती के लियै करिकै क्रुद्ध कराल ॥२॥

पद्धरी छन्द

तू मोहू हन्तौ तव समत्थ । पै तजिय जानि तिय धरम अत्थ ॥
सो मेरौ क्रुद्धहि कौ विरत्थ । जिनि जानैं माधव मूढ़ मत्थ ॥३॥
विषधर भुजंगनि के समान । हौ बची जगत मै सावधान ।
फल याकौं तोको होनहार । निजु नैननि लखिहै अघ उदार ॥४॥

दोहा

इहि औसर नैपथ्य मै, प्रगट भयौ यह सब्द ।
सुनन लगै सब श्रवन दै, कौतिक चारु अहद्द ॥५॥
या मालति के व्याह के प्रगटौ मंगल चार ।
विप्र वेद मंत्रन पढ़यो नैंकु न करो अवार ॥६॥

सोरठा

और सचिव की नारि, देवि नगर की पूजिवे ।
यह मालति सुकुमारि, ताहि संग लैजाउ अब ॥७॥

प्रमाणिका छन्द

हियै समौ विचारि कै । कराल क्रुद्ध धारि कै ।
नहीं समान मै घटी । कपाल कुण्डला रटी ॥८॥

दोहा

भलौ मालती व्याह के, होउ सु मंगल चार ।
समझि लैहैंगी समै पै, याकौ प्रगटि प्रकार ॥९॥
इतनौ कहि पट मै दुरी, सो कुण्डला कपाल ।
तब ही आयौ टारि पट, कलहंसक उत्ताल ॥१०॥

मधुभार छन्द

पुनि सभा मद्धि । हित हियै सद्धि ।।
यौं कह्यौ वैन । अति सुक्ख दैन ।।११।।
मकरन्द मोहि । पढ़यो अछोहि ।।
यह कही वात । हुलसात गात ।।१२।।
मालतीय जव्व । आवै सु तव्व ।।
हम सौ सुभाय । कहियौ सु आय ।।१३।।
मेरौ सु मित्र । माधव विचित्र ।।
ताके नजीक । मै जातु ठीक ।।१४।।

दोहा

नगर देवि के भवन मै, माधव अरु मकरन्द ।
दुरे जाय के प्रथम ही, सज्जि हियै छर छन्द ।।१५।।

सोरठा

माधव अरु मकरन्द, पट उघारि आये तहां ।
पंडित दुखऽरु अनन्द, माधव यौं बौल्यो वहुरि ।।१६।।

बड़ी चौपई

जव प्रथमहि दिना निहारी नैननि मालति प्रान पियारी ।
उर तब तैं प्रगट भई है अतिही ज्वाल मन्मत्थ वारी ।।
अब कामन्दकि की नीति होयगी भली कि अनरथकारी ।
यह जानि मित्त ! मो चित्त सोच कै चढ्यौ हिडोरै भारी ।।१७।।

तोमर छंद

यह बात सुनि मकरन्द । उचर्यौ सु आनंद कन्द ।।
जो कही भगवति नीति । सो नाहिनै विपरीति ।।१८।।
वुधिवान है निर्धार । कामन्दकी सुनि यार ! ।।
वतरात है जुग मित्र । इहि भांति परम विचित्र ।।१९।।
ताही समय कलहंस । आयो चतुर अवतंस ।।
ढिग आप बोल्यो बैन । तहं दुहुंनि कौ सुख दैन ।।२०।।
तुम कौ बधाईय नाह । चित मद्धि चहउ उछाह ।
मालति सु आवत अव्व । संजुत समाज सरब्ब ।।२१।।
यह सुनत उचर्यौ फेरि । माधव कलेस निवेरि ।।
कलहंस सौ मुसिक्याय । रे कहु तू सांच सुभाय ।।२२।।

मकरन्द नें अनखात । माधवहि उचरी बात ॥
क्यूं झूंठ जानत चित्त । आई नजीक सु मित्त ॥२३॥
दुदंभी नछति नद्द । गरजंत मनहु जलद्द ॥
गंभीर भेरि मृदंग । बज्जै सहस्त्र निसंग ॥२४॥
धुनि पूरि श्रवननि मांहि । कछु और सुनियै नांहि ॥
इत आउ मोखन देख । माधव सु बुद्धि विशेख ॥२५॥

दोहा

माधव सुनि धुनि दुन्दुभी, उर मै वढ़यौ अचैन ।
तत्छन हिय धरक्यौ भरकि, फरक्यौ दच्छिन नैन ॥२६॥
कछु औचट सी टरि गई, निपट सगुन पहचानि ।
तव द्विज नैं विधि सौं कही, तुव गति परै न जांनि ॥२७॥

सोरठा

नगर देवि की फेरि, लग्यौ वड़ाई करन सो ।
तिय की हिय औदेरि, ताहि न वानी कहि सकै ॥२८॥

छप्पै

सुन्दर कुन्दन रंग अंग उतमंग कला सशि ।
लोचन लाल विसाल माल उर सोभित ही लसि ॥
अम्बर मुकुट असंद कनक भूपन मनि मंडित ।
सिहांसन पर थित्त कित्त व्रह्मण्ड अखंडित ॥
सुर किन्नर मुनि कर जोरि कर, वरनैं संजुत वेद विधि ।
जय त्रिभुवन की रानी, सुखद सर्वानी आनन्द निधि ॥२९॥

तोमर छन्द

करिचौ वड़ाईय चाहि । पुनि लगे देखन ताहि ॥
कलहंस तिहि छन आय । यह कह्यौ वैन सुनाय ॥३०॥

दोहा

हे प्रभु माधव मह लखौ, शोभा परम विशाल ।
सेत छत्र जनु कमल है, फूले अम्बर ताल ॥३१॥
हलत चौर तिनके निकट, मनु फरकत है हंस ।
उडिवे के हित अनगनैं विहंगन के अवतंस ॥३२॥

वड़ी चौपाई

वह हथनी चढ़ी नर्तकी नच्चति अति अनंद सरसानी ।
अरु वरन वरन के अंवर तन में सुभग सुगंध परसानी ॥

मनि कंचन जटित जगमगं भूपन दिशिनि किरन वरसानी ।
कटि किंकिनि की झंकार होति है मो नैंनन दरसानी ॥३३॥
यह सुनि कलहंसक की बानी माधव अरु मकरन्द ।
पुनि देखन लगे तमासौ दोऊ परे प्रेम के फन्द ॥
पुनि वोलि उठ्यौ मकरन्द ता समै भूरिवित्त वड भागी ।
है जाकी यह सम्पत्ति सहेली जगा जौति सौं जागी ॥३४॥

दोहा

पुनि बोल्यौ कलहंस सौ कौतिक निरुयौं ग्रोर ।
ग्रोर पास जाके लसै, महा छविन की भौर ॥३५॥

नाराच छन्द

घटा समान ग्रंग गोल कुम्भ तै सुढंग है ।
भसुड गुंडि यै विचित्र चित्र पांच रंग हैं ॥
शिरी विशाल भाल पें सुवर्न तार संगिनी ।
सफूल कर्णमूल चोर दै मनौं तरंगिनी ॥३६॥

वनात की लालत्त झूल है य फूल वेत्ति है ।
ग्रनेक घंट की घनंक खेद कौ दरेत्ति है ॥
कनक्क की जंजीर पाय मद्धि ते झनक्क नैं ।
बन्यौ नवीन ग्रासनौ जडाव जैव सौ सनैं ॥३७॥

उदित्त मेरु पै मनौं प्रकासवान भानं है ।
तिहीं सुमद्ध मालती त्रिया विराजमान है ॥
लवंगिका सुहाविनी सखी सुचौर ढारती ।
महा प्रवीन ग्रौतरी मनौ दुतीय भारती ॥३८॥
मनीनि के ग्रनंत साज ग्रंग मै लसन्त है ।
विलोकि ताहि देवता विमान में हंसंत है ॥
करै विचार चित्त यौं सुरी सवै निहारिकैं ।
न ग्रौर या समान त्री लखी सुभूमि भारिकें ॥३९॥

सु सिंधुरी सवारि कै प्रधान भूरिवित्त ही ।
दई पढाय मालती समौ विचारि हित्त ही ॥
ग्ररच्चिवे निमित्त ग्राम देवि की उमंडि कै ।
उचित साज संग दै महा विनोद मंडि कै ॥४०॥

ग्रनेक रंग ग्रंवरै सजे सु पत्ति कोर है ।
ग्रमित्त रक्षिवे ग्ररत्थ भीरि चारि ग्रोर है ॥

पुकारि चौवदार नैं दई सु कोरि वंधि कैं ।
रहे सवै सलूक सौं अचूक वुद्धि नद्धि कैं ॥४१॥

सवैया

चहुं ओर सो कौतुक होत इतौ न कहूं मनकी गति घेरी घिरै ।
मुक्ता मनि भूषन अंवर हूं तन दूपन जानि वनी विखरै ॥
ससिनाथ मनोहर माधव की रसना मै वसी रट एक थिरै ।
परि सोच समुद्रन पार लखै तिय कै हिय मांझ रई सी फिरै ॥४२॥

नव फूलन ओर नहीं निरखै अनखै जसुगंध लग्यौ लट मैं ।
सुनिकैं धुनि आवज साजनि की उरझी रतिराज के संकट मैं ॥
विधि नैं अव भांवरि भेद रच्यौ पजर्‌यौ तन नात जरीपट मै ।
इक प्रीतम नाम लग्यौ रट में अरु मूरति आनि वसी घट मै ॥४३॥

वड़ी चौपाई

मृदु अमल कपोलन लसत सिताई दरसत अंग लटाई ।
नहि इत उत डिगत कमल सी अंखियां कौतिक वुद्धि हटाई ॥
इहि विधि भावति ने निजु मन की प्रथम लगनि प्रगटाई ।
अव मेरे जांनि नांहिनें याकैं रंचक हू कपटाई ॥४४॥

सुगति छन्द

पुनि मकरन्द । विनु छर छन्द ॥
उच्चरीय वैन । सगि वग्गि चैन ॥४५॥
प्रीतम देखि । वुद्धि विशेखि ॥
तिय के अंग । है इमि ढंग ॥४६॥
भूषन मद्धि । परवस लद्धि ॥
फूलन झेलि । ज्यौं दाख वेलि ॥४७॥
अरु दूभ नारि । दिय वैठारि ॥
यह सुनि वात । हरपित गात ॥४८॥
माधव फेरि । उचर्‌यौ हेरि ॥
उत्तरीय अव्व । इभि तैं सरव्व ॥४९॥

दोहा

सिद्धिनि और लवंगिका, लियै मालतिहिं संग ।
आवति हैं इत कौ चली, छुटत सुगंध तरंग ॥५०॥

सोरठा

आई मद्धि समाज, पट उघारि कामन्दकी ।
अरु मालती सलाज, आई और लवंगिका ॥५१॥

धारी छन्द

उच्चरी सो कामदानि । यौं हियें सु बुद्धि खानि ॥५२॥

दोहा

सफल होउ मेरौऽब श्रम, अरु विधि होउ सहाय ।
मदन होउ कृतकृत्य अब, ए जुग मिल्यौ सुभाय ॥५३॥

प्रिया छन्द

उचरी चित्त में । मालती हित्त में ॥५४॥
प्रान कों तज्जियै । रीति सों सज्जियै ॥५५॥
पै न यो कालहू । लेयगौ हालहू ॥५६॥

सुगति छन्द

सुलवगिका । सुभढंगिका ।
चित्त यौं कह्यौ । दुख कौ लह्यौ ॥५७॥
यह मालती । प्रन पालती ।
विरहै भरै । उर मै जरै ॥५८॥

दोहा

लियें पिटारी हाथ मै, पट उघारि प्रतिहारि ।
आई रंग-समाज में, यौं पुनि कह्यौ पुकारि ॥५९॥
सचिव भूरिवसु नै कही, सुनौ भागवति ताहि ।
गहनैं पठये भूपनै लैकै तिन्है उछाहि ॥६०॥
देवी के पग छ्वाय कै, मालति के प्रति अंग ।
पहिरैं यौं अब व्याह कौ, है मंगलस उमंग ॥६१॥

धारी छन्द

यौं सुनि वैन कामदानि । उच्चरी सु बुद्धि खानि ॥६२॥

पादाकुलक

नृप नै उचित काम यह कीनौ । भूषन पुन्ज पठाय सु दीनौं ॥
है मंगल कौ समय उदारौ । प्रतिहारी दरसाय सवारौ ॥६३॥

दरसावन लगीय सुख कारी। सुनि प्रतिहारी खोल पिटारी ॥
यह सित चीर सुगन्धनि सान्यौ। अरु यह उत्तरीय मन मान्यौ ॥६४॥
अरु ए प्रति अंगनि के भूषन। यह मुक्तन को हार अदूषन ॥
अरु अवतंस कुसुम कौ रूरौ। अरु यह चंदन सौरभ पूरो ॥६५॥
कामन्दकि मन वुद्धि विचारी। ए भूषन मनिमय दुति भारी ॥
मदयन्तिके दिखिहैं नीकैं। मकरंदा मेरौ हित हीय कैं ॥६६॥
यौ मन में कहि प्रगट उचारी। सो कामन्दिकि गुन उजियारी ॥
यौंही करिहौ सुचित्तै रहियौ। ऐसेईं जाय सचिव सौ कहियौ ॥६७॥
इतनी सुनि प्रतिहारि सिधारी। दुरी जाय पट में दुति वारी ॥
तव कामन्दकि सिद्धिनि वोली। लवंगिका सों वुद्धि अमोली ॥६८॥

दोहा

लवगिके तू मालतिहि, लै पठ भीतर जाह।
भूषन ए प्रति अंग मे, सजियो सहित उछाह ॥६९॥

सुगति छन्द

सुलबंगिका । सुढंगिका ।
तिनि यौ कह्यो। सुख सौ वह्यौ ॥७०॥

सोरठा

भगवति तुम कित जात, सो मोंसौंऽब जताई पै।
विन जाने अकुलात, मेरी वुद्धि समौन रखि ॥७१॥

धारी छन्द

यौ सुनि कामदानी। उच्चरी सु सिद्धि खानि ॥७२॥

दोहा

हौंइ न भूषन वसन की, करति परीक्षा आय।
ग्रन्थ रीति परमान सौं, ए वढि मोल सुभाय ॥७३॥
इतनो कहि कामन्दकी, दुरी वसन में जाय।
कौतिक वारे लखि रहे, उर अंतर ललचाय ॥७४॥

प्रिया छन्द

उच्चरी मालती। प्रेम कों पालती ॥७५॥

दोहा

लवंगिका अब एक तू, है मेरौ परिवार।
और न कोऊ तीसरौ, दुख निवारन हार ॥७६॥

सुगति छन्द

सुलवंगिका । सुभ ढंगिका ॥
पुनि उच्चरी । हित सच्चरी ॥७७॥

संजुता छन्द

यह देवि मन्दिर देखियै । पंडित प्रकाश विसेखियै ॥
चाल पै तहां अतुराय कैं । यौ कहि गई जुग चाय कैं ॥७८॥
मकरन्द हौ तिहि धाम में । माधव समेत अराम में ॥
सो माधवै समझाय कैं । उच्चरो औसर पाय कैं ॥७९॥
अब दुवौ ओट सुथंभ की । वैठे सुमति तजि दंभ की ॥
यौ भाखि आपस में तवै । छिपि गये पुनि लहि कै ठवै ॥८०॥

सुगति छन्द

सुलंविगका । सुभ ढंगिका ॥
पुनि उच्चरी । हित रुच्चरी ॥८१॥

मधुभार

हे सखि ! सभाग । यह अंगराग ॥
अरु फूलमाल । सौरभ विसाल ॥८२॥

संजुता छन्द

यह वात सुनिके मालती । हित कौ हियै प्रतिपालती ॥
उचरी कहा इन कौ करौं । कहि वेगि औसर कौ भरौं ॥८३॥
पुनि उच्चरी सुलवंगिका । मालतीय सौ सुभ ढंगिका ॥
तुव मात नैं अव जानि कैं । पठई इहां सुख मानि कै ॥८४॥
करि देवि पूजन चाय कैं । मंगल सभौ ठहराय कैं ॥
सुनि मालती इमि वैन कौं । उचरी बढ़ाय सुचैन कौं ॥८५॥
दुख देत मोंकौ क्यों अरी । कही वात संकट सों भरी ॥
सखि तोहि रंच दया नहीं । अरु करति मोहि मया नहीं ॥८६॥
सुनि कैं लवंगीय फेरि कैं । उचरी मन्म्मुख हेरि कै ॥
कछु कह्यौ चाहति वात कौ । तोसों लिये निज घात कौ ॥८७॥
पुनि मालती उचरी तवै । लहि कै सयानप के ढवै ॥
मो मन्दभागिन सौ सखी । कहि जो कहन कौ तैं लखी ॥८८॥

दोहा

माधव सों मकरन्द नैं, कह्यौ तहां यह वैन ।
अरे मित्र ! तैंने कछू, सुन्यौ विचारि अचैन ॥८९॥

पुनि वोल्यो मकरन्द सौं माधव यौ अकुलाय ।
याके उर संतोष नहिं लई विरह नै छाय ॥९०॥

सोरठा

तजि कैं संक अतंक, देवि भवन के मध्य ही ।
लवंगिकै भरि अंक, पुनि यों उचरी मालती ॥९१॥

सवैया

वालपने तैं सखी सुनि भावती मो अरु तोहि सनेह महा रह्यौ ।
आपस में करूई वतरानि भई कवहूं न विनोद सदा लह्यौ ॥
मैं अव सो मरिवे के समै यह मांगत तोपै छिपाव कहा रह्यौ ।
माधव को मुख चंद मनोहर मो मयंक लखि यौं सुख सौ गह्यौ ॥९२॥

सोरठा

यों करिकै वतरानि, सचिव दुलारी मालती ।
रोई हिलकी ठानि, और वात विसराइ कैं ॥९३॥

दोहा

ए वातें सुनि कैं तहां, माधव परम प्रवीन ।
मकरन्दा निज मित्र सौं, वोल्यौ प्रेम अधीन ॥९४॥

तोमर छन्द

दुति हीन फूल समान प्रान खिलावनै ।
अरु और इन्द्रिन कौ जु मोह वढ़ावनैं ॥
मन कौं सकेलि सुभाय एक तलाव नै ।
विधि नैं दिये सु सुनाय वैन सुहावनै ॥९५॥

प्रिया छन्द

उच्चरी मालती । प्रेम पालती ॥९६॥

प्लवंग छन्द

परलोक मैं सुनि मोहि सो परवीन है ।
जिहिं विद्धि खेद लहै नहीं अति छीन है ॥
विधि सो प तू अति प्रीति सौ निजु लीजियौ ।
निहचै यही उपकार मो पर कीजियौ ॥९७॥
अरु और हू जग काज नांहि भुलावई ।
पुनि प्रेम तैं मन कौं रतीन डुलावई ॥
करियौ सु ज्यौं विचरैं न मित्त निकेत नैं ।
कृत्कृत्य यौं सखि होउगीं तुव हेत नैं ॥९८॥

मालती छन्द

फिर यौ मकरन्द । सनैं उर दंद ॥
कह्यौ यह वैन । रतोपल नैंन ॥९९॥
बडौ उर धारि । सहै दुख नारि ॥
कछू न सुहाय । सनेह विकाय ॥१००॥
सु माधव आप । सनैं उरताप ॥
कह्यौ हरुवाइ । हितूहि सुनाइ ॥१०१॥

सवैया

उर मांझ निरास भई मुरझाय चलै न कछू जिहि कौ वस है ।
सुनि ता मृगलोचन की बतरानि भयौ इमि प्रानन में रस है ॥
सरसाय दया कवहूं अनुराय वढ़ै दुख ताहि हियौ न सहै ।
कबहूं बरसै सुख मेह अरे दरसै रति वालम कौ जस है ॥१०२॥

मालती छन्द

लवंगिय फेरि । कही सुख हेरि ॥
हियैं निरधारि । समौं सु विचारि ॥१०३॥

दोहा

अब या मंगल में कहा, कहति अमंगल वात ।
फिरि न सुनैंगी मालती, यह तेरो उत्पात ॥१०४॥

प्रिया छन्द

उच्चरी मालती । प्रेम कौं पालती ॥१०५॥

दोहा

निहचैं तोकों प्रिय भयौ मालति जीवौ आलि ।
प्यारी भई न मालती, कहा कहति घर घालि ॥१०६॥
लवंगिका उचरी बहुरि, सगि वगि हियैं सनेह ।
कछु तोसौ चाहति कह्यौ, मति सरसावै तेह ॥१०७॥
सुनि पुनि उचरी मालती, उर तैं अंचल टारि ।
नैंक आपने दृगनि सौं, मेरी दशा निहारि ॥१०८॥

सवैया

औरन ही पै हजारनि वार अरी सुनि मेरी दसा निजु काननि ।
जीतवे कौं विसराय कै लोभ सहै अजहुं जु मनोज के बाननि ॥
सो विधि और कैं ओरें रचि विधि तू बरजै मति साजि सयाननि ।
ता मन भावन की गुन की रति गावति ही निरवारि हौं प्राननि ॥१०९॥

सोरठा

यों कहि कै अतुराय, सचिव दुलारी मालती।
लवंगिका के पाय, सीस लगाय सु रहि गई ॥११०॥

मुक्तादाम छन्द

निहारि सु मालति की यह रीति। कही तव माधव नैं गहि नीति॥
भर्‌यौ तिय के हिय प्रेम अपार। वखानि सकै रसनानि अपार ॥१११॥
तिहिं छिनि माधव सौ करि सैन। कही सु लवंगिय नै हसि नैन॥
यहां अव आवहु रे! धरि पाय। रच्यौ विधि नैं यह औसर आय ॥११२॥
कियौ मकरंद हितू समझाय। लसौ तिहि ठौर सु माधव जाय॥
कह्यौ तव माधव नै सुख छाय। भली करिहौ तु कह्यौ यहि दाय ॥११३॥
इतनि सुनिकैं उचर्‌यौ मकरन्द। नजीक अरे यह आनंद कंद॥
हियैं धरि माधव वैन रसाल। भयौ तिहि ठा थिति वुद्धि विसाल ॥११४॥

सोरठा

वहुरि मालती भाम, लवंगिका सौं उच्चरी।
हो प्रसन्न अभिराम, मेरी सखि मन भावती ॥११५॥

सवैया

कहिरी तजि संक कलंकन तोहि न मैं यह वात सु मै डरिहौं।
निजु कुंकुम मंडित सीसहि खंडि सु देवीय के पग पै धरिहौं॥
ससिनाथ मनोज विहाल करै यह औज करालहि कौं भरिहौं।
पनतैं अव नीके नहिं टरिहौ विनु प्रीतम जी कै कहा करिहौं ॥११६॥

मधुभार छन्द

यह दसा देखि। वुद्धि कौ विसेखि॥
माधव अगव्व। उचर्‌यौ सु तव्व ॥११७॥

कलहंस छन्द

अव छोड़ि साहस वांन कौ नव कामिनि।
अरु छोह को विसराय दै आरामिनी॥
तुव वात ए रसहीन जो विरहै भरी।
दुख देति मोहि अनंत फांसीय सी परी ॥११८॥
वहुर्‌यौ लवंगिय सौ उचारी मालती।
उर मद्धि चंद चकोर ज्यौं प्रन पालती॥
गहि पाय जो अव तोहि भाषत वात कौं।
महि ताहि तू उलंघि री सजि घात कौं ॥११९॥

दोहा

मालति की वतरान सुनि, माधव हर्षित अंग ।
बोलि उठ्यौ हहराय ज्यौं, पूरित विरह तरंग ॥१२०॥
कहा कहौं मैं जो रहे, तुव हित मदन अतंक ।
हे सुन्दरि यह काम करि, मोहि भेटि भरि अंक ॥१२१॥

प्रिया छन्द

उचरी मालती । प्रेम कौं पाचती ॥१२२॥

बड़ी चौपाई

तैंनें दया करि मोसौं कहौ अब मेरे यहै मनमानी ।
सो कहि कै उठि सहसा अलबेली तासु कंठ लपटानी ॥
फिरि बोली वरी पश्चिम दरसन होत न मोहि सयानी ।
सखि मो तुव कंठ कंठ मिलिवै तैं मैं यह सत्य वखानी ॥१२३॥
उर हर्षित ह्वै पुनि कुंवरी मालती बोली नेह विकानी ।
सखि तेरे अङ्ग और से मोकौं आजु लगे सुखदानी ॥
है कछु कठोर कछु कोमल कोस सम कौन लता परसानी ।
अति पजरति हीजु विरह की ज्वालनि सौ अब नैकु सिरानी ॥१२४॥

दोहा

सखी जानि कै मिलि रही, माधव सौं नव-नारि ।
लगी संदेसौ कहा न पुनि, नैननि तैं जल ढारि ॥१२५॥

सवैया

तू अपनें कर जोरि दुवौ सिर पै धरि नेह अनंत बढ़ायै ।
ता मन रंजन सौं कहानवति मेरी इति कहियौ अकुलायै ॥
पंकज पुंजन को निकटैं दृग औ मुख चंद जु तो छवि छायै ।
सो न विलोकि लियौ अरि दीठि रही मन की मन मै ललचायै ॥१२६॥
चारु अनेक मनोरथ ही रथ में पथ में दिन रैनि विताए ।
और कछू चरचा न रुची सखियां निजऊ अति कान लुभाए ॥
चंदन चंद्रक चूर मिलै दुखदाय कहूं अंग अंग लगाए ।
एती उपाधि सही न तऊ अब मो दुखिया के भए मन भाए ॥१२७॥

दोहा

तातैं सखि नित मोहि तू करियौ सुधि वहु वार ।
अव मो पापिन कौहि सौं, किए निरास करतार ॥१२८॥

सवैया

यह माधव हाथ रची वकुलावली सुगन्ध छटा छहराय गई ।
उचरी रुचि सौं उनि मोहि दई तव मोहित सौ गहराय लई ॥
सुनि मो सम जानियौ याहि सखी जव चाह हिय लहराय नई ।
इतनो कहि कंठ सौ माल उतारि सु माधव कौं पहराय दई ॥१२६॥

दोहा

माधव कौ मुख लखि सरकि, लज्जा संक समेत ।
नच्ची रुचि सों मालती, जनु चपला गति लेत ॥१३०॥
माधव ने अनुराय तव, कही ओट सौ आप ।
वड़ो हर्ष सरस्यौ हियौ, घट्यौ मदन कौ ताप ॥१३१॥

सवैया

वौनें उरोज कठोरनि सौ मसकी छतियां भुज में भरि लैकै ।
कंठ सों कंठ लगाय रही ससिनाथ कहे अति जो हित कैं ॥
चंदन औ हरिचंदन चंद्रक चारु सिवाल मृनाल मिलै कैं ।
मो प्रति अंगनि की इन मानहु सींचि दई है तुचा सुख दैकैं ॥१३२॥

प्रिया छन्द

उच्चरी मालती । प्रेम कौ पालती ॥१३३॥

दोहा

वड़ौ अचम्भो यह भयौ, कासौं कहौ सुनाय ।
लवंगिका नै मालती, छली वुद्धि भरसाय ॥१३४॥

मधुभार

यह सुनत वात । माधव सिहात ॥
उचरीय वैन । सरसाय चैन ॥१३५॥

सवैया

भावती तू अपनी यै विथा ससिनाथ भली विधि सौ कहि जानति ।
और की पीर गंभीर सरीर की ताहि नहीं तनको पहिचानति ॥
देत उराहनौ मेरे निमित्त सखी कौ इते पर लाज वितानति ।
मो जिय तेरे सनेह की आस रह्यौ अवलौ थिर क्यौंहहि ठानति ॥१३६॥
दाह उद्दंड मनम्मथ कौ तन पै दिन रैनि अखंडित मेल्यौ ।
तो मिलिवे के विचारनि में अरु मैं मन वार हजारन पेल्यौ ॥
जीव रह्यौ तुव नेह की आस उसासनि सौं हिय मांस उचेल्यौ ।
ए ! अव क्यौं न चितोति इतै तिय ज्यौं पहिलैं हित खेल सु खेल्यौ ॥१३७॥

सुगति

सुभ ढंगिका । सुलवंगिका ॥
तब उच्चरी । हित सच्चरी ॥१३८॥

दोहा

है उराहनै जोग तू, हे सखि सचिव कुमारि ।
तातै तोहि उराहनौ, दीनौं विरह विसारि ॥१३९॥

तोमर छन्द

सुनि उच्चर्‌यौ कलहंस । तव पाय कै हित गंस ॥
रंमनीय संगम वैन । अत्र होत आनंद दैन ॥१४०॥

सोरठा

लवंगिका सौ वैन, वोल्यौ फिर मकरन्द तंह ।
वड़ भागनि सुख दैन, है यों ज्यौ माधव कहतु ॥
निपट दुखित दिन रात, यानैं वितए विरह मैं ।
तू दयाल दरसात, और कहा कहियै वहुत ॥१४२॥
कंकन वंधन पानि, सफल होउ या वाम को ।
अरु सुख की सरसानि, विविध भांति यौ देहु विधि ॥१४३॥

सुगति

सु लवंगिका । सुख रंगिका ॥
तिनि यों कह्यौ । दुख कौं दह्यौ ॥१४४॥

दोहा

कंकन वंधन कौ कहा, मन मैं गहत विकार ।
प्रन पूरी यह मालती, टरै न कोटि प्रकार ॥
अपनै कीने नेह कौ, सज्जैगी निर्वाह ।
याकी मति चिन्ता करौ, उर में गहौ उछाह ॥१४६॥

सुगति

पुनि मालती । जसु पालती ॥
मन में वकी । छित कौ तकी ॥
अब मै मरी । हा ! दुख भरी ॥
वच अटपट्यौ । इहिनै भरयौ ॥
नहि कन्यका । जसु धन्य का ॥
इमि सज्जई । कुल लज्जई ॥१४९॥

दोहा

इतने में कामन्दकी पट उघारि कैं आय ।
मालति सों यौं उच्चरी, अपनौ औसर पाय ॥
ऐसी डरपति क्यों हिये, हे मालति नव वाल ।
इहि औसर नहि चाहियै, तोकों संक विसाल ॥१५१॥
यह सुनि कैं सो मालती, कामन्दकि सौं आप ।
सुन्दर कुन्दन वेलि सी, लिपटि गई भरि ताप ॥
जुग्गिनि नैं मालतीय की, कर सौ चिवुक उठाय ।
कही वात यह प्रेम सौं, पहिली सब समुझाय ॥१५३॥

सवैया

पहिले अनुराग भयौ अंखियानि विलोकि विनोद महा सरस्यौ ।
फिरि प्राननि सौं मिलि प्रान रहे परि अंगनि अंगनि सौ परस्यौं ॥
दुवरानिहुं तेरे समान भई दिन रैन मनोरथ कैं तरस्यौ ।
यह माधव सों नव जोवन वंत मनम्मथ वाननि कौ अरस्यौ ॥१५४॥
पिय रानि लसी अंग अंगनि में उर अन्तर प्रेम अछोह छयौ ।
जिहिं काज तजे सुख साज सवै जग मैं उपहास कठौर ठयौ ॥
ससिनाथ मनोहर मूरति माधव देखि वही यह चोर नयौ ।
छरछन्द विना तुव आनंद चंदहि ठाढ़ौ चितौ जु चकोर भयौ ॥१५५॥

दोहा

जड़ता कौं तन मालती, मन्मथ होय सकाम ।
अरु विधिहू की चतरई, सफल होय अभिराम ॥१५६॥

आभीर छन्द

मालति सौ यह वैन । सिद्धिनि कह्यौ स चैन ॥
तव सुलवंगिय आप । उचरी चतुर अलाप ॥१५७॥

छप्पै

कृष्ण चतुर्दश रैन विच्च उद्धत मरघट्टै ।
दुग्गथान के अग्ग तोलि भुजदंड अहट्टै ॥
खंड्यौ सो परचंड, घंटअग्घोर अधर्मी ।
भए ज्वाल के तूल लाल लोचन गहि गर्मी ॥
हे भगवति ! सो सुधि सज्जि उर कम्पिय है अब नागरी ।
कछु और न मन में आनिये तुमतैं को गुन आगरी ॥१५८॥

आभीर छन्द

पुनि मन में मकरन्द । उच्चर्यौ आनंद कंद ॥
धन्य लवंगिय धन्य । तो सम तीय न अन्य ॥१५९॥
औसर पै बतराय । जानति नेह बढ़ाय ॥
क्यों नहिं सुधरैं काम । जंह तोसी गुनधाम ॥१६०॥

प्रिया छन्द

उच्चरी मालती । धर्म कौ पालती ॥१६१॥

धारी छन्द

हाय तात ! हाय मात ! । कौन ख्याल भौ दयाल ॥१६२॥
कामदानि, बुद्धि खानि । उच्चरी सुधा सयानि ॥१६३॥

आभीर छन्द

सुत माधव परवीन । सुनि मो वचन कुलीन ॥
यह सुनि माधव फेरि । उचर्‌यौ सन्मुख हेरि ॥१६४॥
अज्ञा करिये अब्ब । सो मे करहुँ सरब्ब ॥
यह सुनि सिद्धिनि आप । लागी करन अलाप ॥१६५॥

दोहा

सचिव भूरिवसु की जु यह कन्या रत्न उदार ।
विधि मन्मथ अरु मे दई, तोकौ सो इहि वार ॥१६६॥
यौं कहि के अंखियान तैं दीने अंसुवा ढारि ।
तब बोल्यौ मकरन्द तंह, और हियैं विचारि ॥
भग्वति तुव परसाद तै, भौ हमरे सब अर्थ ।
सफल भये निहचै सु अब, सटके विरह अनर्थ ॥
हे भग्वति ! अब दृगनि तैं, क्यों छोड़ति जलधार ।
यह सुनि अंसुवां पोंछियौं, सुनि बोली सविकार ॥१६९॥

सवैया

नेह भयौ तुम सौं इनि सौं कुलसील समान फल्यौ जग मांही ।
जानियौं मोहि दुवौ बहु भांतनि जानि समौ छरछंद विनाहीं ॥
नीरस होय न आपुस में करियौ कबहून अनीति वृथाहीं ।
दम्पति के सुख कौ लहियौ परजंकन मैं गहि कैं गलबांहीं ॥१७०॥

दोहा

यह कहि पायन परन को, जुग्गनि इच्छा कीन ।
कहा करति हौ यौ कह्यौ, तब माधव परवीन ॥१७१॥

सवैया

उत्तमता कुल की अरु सम्पति सुन्दरता गुन की अधिकाई ।
सील प्रसिद्धि और सिद्धि वड़ी अरु वुद्धि औ विद्यति मद्धि डिठाई ॥
ए जग मोहन हैं इनि मैं वकसै जो विरंचिय कौ चतुराई ।
सो तुम तौ सव की सिरमौर कहा करियै पुनि और वड़ाई ॥१७२॥

धारी छन्द

फेरि वैन कामदानि । उच्चरी सु वुद्धि खानि ॥१७३॥

दोहा

हे सुत माधव ! मालती !! लवंगिके !!! अभिराम ।
यह सुनि तीनों उच्चरे, अज्ञा करहु ललाम ॥१७४॥
इनकी निरखि सुसीलता, महामोह दरसाय ।
फिरि वोली कामन्दकी, नीति-रीति समझाय ॥१७५॥
तिय कौं पति पति कौं तिया, है तन धन अरु प्रान ।
तातैं आपस में सदा, रहियौ प्रेम निधान ॥१७६॥

आभीर छन्द

यह सुनि कैं मकरन्द । वोल्यौ वुद्धि विलंद ।
भगवति तुमनें सत्य । वात कही हित रत्थ ॥१७७॥
तहां लवंगिय फेरि । उचरी हित सौं हेरि ।
अज्ञा करियै आप । करिहौ सो अनताप ॥१७८॥

प्रिया छन्द

कामदा फेरि कै । उच्चरी हेरि कै ॥१७९॥

आभीर छन्द

ए रे सुत मकरन्द । सुनियै आनंद कन्द ॥
मालति व्याहि निमित्त । भूषन जे वहु वित्त ॥१८०॥
आए तिन कौं अंग । तू सजि सहित उमंग ॥
यह कहि कै सु उदार । दीनौ ताहि पिटार ॥१८१॥
मकरन्द सु कर जोरि । वोल्यौ वुद्धि बटोरि ॥
आप कह्यौ जिहि विद्धि । सो करिहौं सुख निद्धि ॥१८२॥

दोहा

जौलौं तुम यहां थित्त हौ, तौलौं हौं पट मद्धि ।
सजि आऊँ भूषन सवै, उर में आनन्द लद्धि ॥१८३॥

इतनौ कहि मकरन्द पुनि दुर्‌यौ वसन में जाय ।
कंचन मनि आभरन सव, सजे अंग हुलसाय ॥१८४॥

हंस छन्द

माधव बोल्यौ । प्रेम अडोल्यौ ॥
हे गुणपूरी । कामद रूरी ॥१८५॥

पावकुलक छन्द

सुगम भयौ मालति को छलिवौ । पै अलभ्य मज्जन मन रलिवौ ॥
संकट वड़ौ मित्र मकरन्दै । यह चिंता मो मन को फंदै ॥१८६॥

धारी छन्द

फेरि वैन कामदानि । उच्चरी सु वुद्धि ठानि ॥१८७॥
क्यों करत्त चित्त सोच । होयगी न वात पोच ॥१८८॥

हंस छन्द

माधव वोल्यौ । फेरि अमोल्यौ ॥
कामद मांनौं । तुम ही जानौ ॥१८९॥

पावकुलक

पट कौं टारि सभा मैं बाहर । आयौ पुनि मकरन्द सुजाहर ॥
विहसत कहत मालती मै हौं । नन्दन के मत को हरि लैहौं ॥१९०॥
सिगरे लगे तमासौ देखन । निज नैननि तैं तजे नमेषनि ॥
माधव ताहि भेंट भरि अंकै । वोल्यौ करि परिहास निसंकैं ॥१९१॥
धन्य भाग नन्दन कै जानौं । जो यातिय के लोभ लुभानौं ॥
सवै काम नीकौं परि पैहै । छिन में उरको ताप सिरै है ॥१९२॥

धारी छन्द

उच्चरी सुवुद्धि खानि । फेरि वैन कामदानि ॥१९३॥

तोमर छन्द

हे पुत्र माधव ! वीर । हे मालती गंभीर ॥
इहिं ठौर तेऽबउताल । तुम जाहु वुद्धि विसाल ॥१९४॥
मो विरहिवें कौ थांन । है वृक्ष सघन सुठान ॥
अरु नाग वल्लरीय छाय । अति रही है सुखदाय ॥१९५॥
तिहिं ठौर व्याह अरत्थ । अवलोकिता समरत्थ ॥
राखे सवै सजि साज । जे मंगलीक समाज ॥१९६॥

तुम जायं कें तिहिं ठार । तव ल्यौं रहै लहि प्यार ॥
मदयन्ति अरु मकरन्द । जव ल्यौं सुछावई चन्द ॥१९७॥

हंस छन्द

फेरि अमोल्यौ । माधव वोल्यौ ॥
हे गुन पूरी । कामद रूरी ॥१९८॥

दोहा

अधिक अधिक सुख होइगो हम कों यह निर्धार ।
मदयन्ती मकरन्द लै आवेगौ मो यार ॥१९९॥

सोरठा

पुनि वोल्यौ कलहंस, सेवन माधव कौ तहाँ ।
हम पायो सर्वंस, जौ महेस ऐसी करैं ॥२००॥

धारी छन्द

फेरि वैन कामदानि । उच्चरी सु वुद्धि खानि ॥२०१॥

आभीर छन्द

यामैं कछु सन्देह । जौ तुम भाषत एहु ॥
उत्तम ह्वै है काम । हैं वैहू गुन धाम ॥२०२॥

चउरस छन्द

वहुरि लवंगी । परम सुठंगी ॥
उच्चरीय वानी । हित सरसानी ॥२०३॥
सुनहु पियारी । सखीय हमारी ॥
भग्वति वैंना । हरन अचैना ॥२०४॥
भग्वति वोली । वहुरि अमोली ॥
हितयन पूरी । सव गुन सूरी ॥२०५॥

दोहा

हे वेटा मकरन्द ! अरु हे लवंगिके वाल !!
हम तुम आवौ इत चलैं करनैं काज उताल ॥२०६॥

प्रिया छन्द

उच्चरी मालती । प्रेम कौ पालती ॥

सोरठा

सखी लवंगीय अव्व, तुहू जायगी उत कहा ?
यह सुनि तज्जि गरव्व, लवंगिका हंसि उच्चरी ।।
हम कौ करनौ जाय, काज उतावल सौं वहां ।
तू निज हित सरसाय, मति मन में चिन्ता करै ।।२०६।।

दोहा

इतनो उचरि लवंगिका, सिद्धिनि अरु मकरन्द ।
तीनों पट अन्तर गये, भये कोरि छर छन्द ।।२१०।।
कामन्दकि के बाग मैं, मालति के पग्संग ।
माधव यौं लाग्यौ कहन, मन में पूरि उमंग ।।२११।।

वड़ी चौपाई

अव हौ इहि ठौर लसत हौ ऐसें, काम अगिनि सरसानैं ।
गहि नवल मालती की भुज पुलकित दुसह विरह विसरानै ।।
ज्यौं जर समेत कलंकित नाल कौं लाल कमल विकसानै ।
लहि सुंडि मद्धि सरोवर में सिंधुर ग्रीषम लीला ठानै ।।२१२।।

दोहा

यौ कहि कै नैपथ्य में एऊ दुरे दयाल ।
और स्वांग आगमन की भई तयारी हाल ।।२१३।।
मालति कौ इहि अंक मै भयौ स्वयमंवर आय ।
नगर देवि के भवन मै विरह झकोर भुलाय ।।२१४।।

हरिगीत छंद

वदनेस नंद प्रताप जाकों तेज दिन मनि तूल है ।
अब करण सौ ताके वहादुर कुंवर आनंद मूल है ।।
तिहि हित्त कवि शशिनाथ ने रच्यौ विचार निसंक है ।
माधव-विनोद सु ग्रन्थ कौ यह भयो षष्टम अंक है ।।२१५।।

इति श्री माथुर चतुर्वेद मिश्र सोमनाथ विरचते माधव–विनोद नाटके मालती स्वयंवरी नाम षष्ठमोङ्कः ।।

अथ सप्तमोङ्कः

दोहा

पट उघारि नैपथ्य कौं, वुद्धिरक्षिता आप ।
हरषि वचन यौं उच्चरी, सिगरे नरनि सुनाय ॥ १ ॥

कवित्त

छूटत हवाई सांझ धूम सरसाई भई,
चकचौधे लोचन मसा वन प्रकास मैं ।
सोमनाथ कहै भीर बढ़ी नरनारिन की,
जानति हौ होयगौ हमारो भलौ पास मै ॥
काहू ठौर भयौ मालति कौ और माधव कौ,
व्याह कामदायन के वचन विलास मै ।
मालती के भूपन अमन्दनि सौं नंदन कौ,
छल्यौ परधान भूरिवित्त के अवास मैं ॥ २ ॥

दोहा

मकरन्दौ पुनि कुसल सौं, छिप्यौ रह्यौ सविलास ।
काहू पहचान्यौ नहीं, यह छर छन्द प्रकास ॥ ३ ॥
इतनो कहि नच्ची चपल, बुद्धिरक्षिता प्रवीन ।
कौतिक वारे लखि रहे, इकटक संक विहीन ॥ ४ ॥

सवैया

मैं अब नन्दन के घर हौ अरू कामदंग तिहिं ठौर सयानी ।
सो तो गई अपने घर कौं निज मांगी विदा सुख में सरसानी ॥
और नवीन वधू के विलास में भूलि रहे सिगरे सुव खानी ।
होयगौ काज समाज भली विधि सो मन मैं निहचैं हम जानी ॥ ५ ॥

पावकुलक छन्द

अवनन्दन मन में ललचायौ । अति अनंग जुर सौं सरसायौ ॥
नवल वधू को भैटन आयौ । अतुराई कर हत्थ चलायौ ॥ ६ ॥
तीय स्वरूप मकरन्द प्रवीनै । वाके दई लात रस भीनै ॥
लागै लात क्रुद्ध अधिकायौ । तव नन्दन यौं वचन सुनायौ ॥

निपट वाल विभिचारन तोसौं । रह्यौ काज कछू नाहि सु मोसौं ॥
सत सौगंध सांच उर धरिहौं । तेरौ फिरि संसर्ग न करिहौं ॥
यौं कहि रंग महल तैं डगर्‌यौ । उर में कहर जहर सौ वगर्‌यौ ॥
नर नारिन में भयो खिसानौ । तन मन मुक्ख समूल विलानौ ॥ ९ ॥

दोहा

सो मै या परसंग करि, मदयन्ती कौ लाय ।
चंद वदन मकरन्द सौं, देहौं आजु मिलाय ॥१०॥
इतनौ कहि कै नृत्य करि, दुरी सुपट में जाय ।
सवैं दिखैयन के हृदय, अति ही चौंप वढ़ाय ॥११॥

प्रवर्तक

पट उघारि नैपथ्य कौ इतने में मकरन्द ।
आयौ लव्यौ सेज पैं, मालती भेप अमन्द ॥१२॥

सुगति छन्द

सु लवंगिका । सु सुभ ढंगिका ॥
तिहि संग ही । स उमंग ही ॥१३॥

मालती छन्द

फिर्‌यौ मकरन्द । समेति अनन्द ॥
कह्यौ यह वैन । रतौपल नैन ॥१४॥

तोमर छन्द

हे लवंगिय सुख दानि । वुधिरक्षिता गुन वानि ॥
मदयन्तिकै समझाय । दैहै मोहि मिलाय ॥१५॥
यह सुनि लवंगिय फेरि । उचरी विषाद निवेरि ॥
इहिं भांति में सन्देह । मति मांनि संजुत नेह ॥१६॥

हरिगीत

सुनि वात नन्दन भ्रात की अकुलात क्रुद्धत चित्त ही ।
मालतिहि डाटन गरब आटन कपट काटन हित्त ही ॥
वुधिरक्षितै संगि लै सुहेली द्वै अकेली धाय कैं ।
तिहि रंगभवनें कियहि गवनैं विविधि वृद्धि सजायकैं ॥१७॥
नव वसन भूषन अति अदूषन अंग अंग विराजई ।
मृगमीन खंजन गर्व गंजन दृगनि की छवि छाजई ॥

जनु दामिनी अभिरामिनी इमि कामिनी गुन वर्तिका ।
त्रिय भेप जंह मकरन्द हौ तंह कौ चली मदयंतिका ॥१८॥

तोमर छन्द

मो जान नूपुर नद्द । एहो तवै अनहद्द ॥
लावति अवैस उमंग । मदयन्तिका कौ संग ॥१९॥
ताते दुपट्टै लानि । तू लेट जावु पठानि ॥
यह वात सुनिकै कान । सोयौ समेति सयान ॥२०॥

दोहा

इहिं औसर मदयन्तिका, वुद्धिरक्षिता साथ ।
आई पट कौं टारिकैं, यौं पुनि उचरी गाथ ॥२१॥
सखी सांचहू भ्रात मो, नन्दन कौ निदराय ।
क्रुद्ध करायौ मालती, अपनै गर्व वढ़ाय ॥२२॥

हंस छन्द

वुधि रच्छिनी । मदगच्छिनी ॥
वैन यौ कह्यौ । चैनं कौ रह्यौ ॥२३॥
झूंठ कहा । भाषिहौं महा ॥
तुव देखियौ । रूप लेखियौ ॥२४॥

मधुभार

मदयन्ति फेरि । रिस कौं सकेरि ॥
उच्चरीय वात । थहरात गात ॥२५॥
तिहिं अधम काम । थीनौं उदाम ॥
मैं ताहि अव्व । करिहौं अगव्व ॥
इतनौं उचारि । मदयन्ति नारि ॥
इत उत निहारि । डग धरी चारि ॥
वुधिरक्षिता सु । मंडै हुलासु ॥
पुनि सुक्ख दैन । उच्चरीय वैन ॥
यह रंग भौन । है अति सुठौन ॥
तहं दुवौ भाम । पैठी ललाम ॥२६॥

चउरस

फिरि मयन्ती । अति रिसवन्ती ॥
उचरीय वानी । मुख मधुरानी ॥३०॥

सखि सुभ ढंगी । सुनहु लवंगो ॥
सोवति प्यारी । हितू तिहारी ॥
वहुरि लवंगी । उचरीय चंगी ॥
अहिन जगावौ । तुम हित ठावौ ॥
तनक स सोई । अव रिस भोई ॥
अति समझाई । तव सियराई ॥
पलंग सु अन्तैं । मृदु विलसन्तै ॥
सरसहु आछै । कहि यह पाछै ॥३४॥

दोहा

यह सुनि के मदयन्तिका, पायन वैठि सुभाय ।
लवंगिका सौ वैन पुनि, वोली छोह वढ़ाय ॥३५॥
काहे तैं रिस में सनी, तेरी सखी कुनारि ।
यह सुनि बहुरि लवंगिका, वोली अनखै धारि ॥३६॥

सवैया

सुन्दर औ नव जोवन वन्त मन्मथहू कौ गुमान गरैया ।
जानत है वतराय कठोर न नारि नईन कौ चित्त हरैया ॥
जाहि न रंचक रोस कहूं पति पाय कैं या विधि कौ तुवभैया ।
क्यों दुख पाय है मेरी सखी लखिकैं तिन आनन चंद जुन्हैया ॥३७॥

अभीर छन्द

बुधिरक्षिते देखि । मन मै वृद्धि विशेषि ॥
लवगिका यह चेति । उलटि उलम्भौ देति ॥३८॥
वुधि रक्षिनी समिलाप । सुनि पुनि वोली आप ॥
झूंठ सांच कै वात । हम तिहि जानै घात ॥
तब मयन्तीय फेरि । वोली अनमिष हेरि ॥
नन्दन की तकसीर । कैसैं कहि लहि धीर ॥४०॥
वुधिरक्षिनी यह वात । सुनिकै उर अकुलात ॥
मदयन्ती सौ बैन । उचरी झूंठ कहै न ॥४१॥

सवैया

भूपति कौ जु मुसाहिव है सुख दायक जाहि सवै जग जानैं ।
औ भगवान समान गिनै पति कौ इमि वेद पुरान बखानैं ॥
जासहु प्रीति की रीति भुलाय बढ़ाय अनीति निरादर ठानैं ।
क्यौं न उराहनै लाय कसो यह सोवत याकी सखी पट्ट तानैं ॥४२॥

सोरठा

और सुनौं मन लाय जो मैं तुम सैं कहति हौं ।
नवल वधूनि हिलाय, तव करनै हो निजु मतौ ॥४३॥

सवैया

फूल समान सुभाव सदा मुरझाय जौ घाम घरी कुं सतावत ।
लाज लपेटी रहै अतिही पतिहू निरखै तैं महा डर आवत ॥
तासौं करी वर जोरी इते पर भाव्यौ कुवैंन अचैन बढ़ावत ।
नन्दन कौ है इते अपराध कलंक लगायैं न क्यौं दुख पावत ॥४४॥

सोरठा

यह सुनि के वतरानि, अंसुवनि ढारि लवंगिका ।
वोली कपटहि ठानि, दोऊ त्रियन सुनाय कैं ॥४५॥

सवैया

हैं सव कैं नर और कुमारीय को पुनि लाज नहीं अपनावै ।
नायक सौ पहिले हीं मिलाय न कौंन के चित्तहि संक हटावै ॥
है रस ग्रन्थन की यह रीति, जु तेह सिराय सनेह बढ़ावै ।
यौ कुल आगर कोऊ कहूँ नव नागरि के हिय कौं पजरावै ॥४६॥

दोहा

मालति कौ यह वचन हुव, सालज नाम परजंत ।
रंचक खटपट होत ही, कहि है वंधु असंत ॥४७॥

चउरस

पुनि मदयन्ती । गुननि अनन्ती ।
उचरीय वानी । अनख मिलानी ॥४८॥
सखि वुधिरक्षी । सुनु हितरक्षी ॥
सचिव कुमारी । निपट दुखारी ॥४९॥

दोहा

लवंगिके की प्रिय सखी, निपट रुठाई आज ।
नन्दन मेरे भ्रात नैं, करि तकसीर दराज ॥५०॥
वुधिरक्षिता नैं कही, मदयन्ती सौं फेरि ।
रस में तेरे भ्रात नैं, दीनौ जहर वखेरि ॥५१॥

बड़ी चौपाई

उनि कह्यौ याहि कों मार बंध की क्रुद्ध अधिक दरसायें ।
अब यातें मेरी सखी सहेली सोय गई अनखायें ॥
यह सुनत बात मदयंती रहि गई श्रवनन हाथ लगायें ।
पुनि छिन में सोच उच्चरी देखौ कहा कही हठ छायें ॥५८॥

सुनि सखि लवंगिके अब तोकों मुख दरसाय सकौना ।
पै कछु बात होय सों कहि हों रहिहों तबै सुमौना ॥
यह सुनि कैं लवंगिका पुनि बोली मयंति सों बानी ।
अब यह तुमरे आधीन भई है चहो सु कहो सयानी ॥५३॥

चउरस छन्द

यह मदयन्ती । सुनि दुतिवन्ती ॥
उचरीय बैना । सहित अचैना ॥५४॥

दोहा

भली भई मो भ्रात ही, क्रोधी निठुर निदान ।
तऊ याहि चहियै जुगति, कहै सु करै प्रमान ॥५५॥

सवैया

है रिस कारन एक अली सुनि कैं जिहिं नन्दन देह गरी है ।
औरन सौ वतराय सकै न क्षुधा अरु नींद तृपा डगरी है ॥
जानत है न लवंगिय तू अनजान भई जु इती भगरी है ।
माधव मालति के हित की चरचा सगरी नगरी बगरी है ॥५६॥

तातैं यही सिखवौ अब याहि जु चाहत हौ अनचित्त समारै ।
जा विधि सौं पति के उरतें कढ़िजाय सुवात कलेस विडारैं ॥
सोई करै निसि द्यौस उपाय भुलाय कैं और सुभाय विचारैं ।
नातर ताहि घरी भरहू सुख दम्पति कौ अबहू हठ धारैं ॥५७॥

सोरठा

पै मति कहियौ एह, हे सहचरि लवगिके ।
मदयन्ती भरि तेह, मोसौं कटु बातैं कही ॥५८॥
इहि विधि के सुनि बैन, लवंगिका पुनि उच्चरी ।
सांची क्यौ न कहै न, जाह कहा तो सौं कहौं ॥
यह सुनि बैन सुहाय, बोली मदयन्ती बहुरि ।
हे सखि ! रोस भुलाय, तुम ही कहि जानौ प्रगट ॥६०॥

दोहा

रहरै औरहू कहत पुनि, ताहि सुनौ दै कान ।
हैं हम हौ सांची अजू, छोड़ो अजौ अयान ॥६१॥

सवैया

मालती जीव है माधव कौ यह वात कहा हम नाहिन जानति ।
जाके निमित्त भई तन की गति पीत सिताई लियें दुति ठानति ॥
और सुनौ पुनि माधव के कर की वकुलावलि प्रान के मानति ।
कंठ में राखे रहैं दिन रैन सु मालती और नहीं उर आनति ॥६२॥
और के चंद समान लसै मुख माधव कौ छवि सौ सरसायौ ।
देह रही दुबराय सबै अरु सो न कछु वह डीठि में आयौ ॥
ता दिनवा पुहपा कर खोरि मै ताहि तिरीछैं निहारि लुभायौ ।
सो न कहा हम जानी तवै अवलोकि वहू विन मोल विकायौ ॥६३॥
और सुनो मन भ्रात के व्याह को कान परयौ विरतंत जवैई ।
दोउनिके अंग अंगनिकौ थकि ह्वै गयौ और हवाल तवैई ॥
मूल समेत उखारि लिये द्रुम तूल भए हिए भांति सवैई ।
सो तुम नैन लखी हि हौं निजु यौं अनखी बतराति अवैई ॥६४॥
डीठि जुराय इतै चित औ अब औरहू वात हमैं सुधि आई ।
ए सुनि कैं वतरानि लवंगिय बोलि उठी उर मै अनखाई ॥
है वह कौनसी बात कहौ किनि सौं तुमनै अब लग्गि छिपाई ।
फेरि कह्यौ मदयंतीय नैं सुलवंगिय सौ सजि कै चतुराई ॥६५॥
सुमनाकर खोरि मझार सखी जब वा गुनवंत नैं चेत लह्यौ ।
तव तोपर डारि कैं माधव सौं इनि हेरि वधाई कौ वैन कह्यौ ॥
तिहि औसर कांमद वातन सौं उचर्यौ पुनि माधव नेह नह्यौ ।
तन औ मनहू धन जीवन मेरौ सु भेट है यौ प्रन मैने गह्यौ ॥६६॥

दोहा

और मोतैंहूं ता समै, कह्यौ वचन मधुराय ।
यही चाह मौ सखो कैं, रही हुती सरसाय ॥६७॥

मोहनी छन्द

वोली वहुरि लवंगिय औसर पाय ।
को हौ वह गुनवन्त सु कहहु सुनाय ॥६८॥
यह सुनिकैं मदयन्तीय वोली फेरि ।
सखि वुधि करि मन मही यासन मुख हेरि ॥६९॥

तव तें निज ज्वाल करालनि सौं मनमत्थ जरावत जोर जग्यौ ।
थहराति पसेव सौं न्हाति कभू मुरझाति नयौ यह रोग लग्यौ ॥६१॥
मदिरा मद घूमति सी अंखियानि विलोकति हौं न कहूँ सरकै ।
समनोरथ के सपने मधि आय पुकारत मोहि गरौ घर कै ॥
पुनि चंचल अंचल ऐंचतु हैं अचकां ससिनाथ महा अर कै ।
तव ही थरकै सब संग सखी भर कैं अतुराय हीयौ धरकै ॥६२॥
औचक अंबर ऐंचि लियौ तवही सब मो अंग अंग उघारे ।
किंकिनिहू कटि तें सरकी उरझी सु उरु मधि गौन विसारे ॥
लाज तें रोस भयौ मन में झहरानी न पै कछू वैन उसारे ।
फेरि सखी सुखसार लहै उमहे दृग नेह के सिन्धु अपारे ॥६३॥
नाहर के नख तिक्ख प्रहारन जो चहुं ओर रही छवियां भरि ।
तासौ लई लपटाय सुहै यह भांति सकी न इतै उत कौं टरि ॥
तच्छन मैं मन में विहंसी सखी आनंद के दृग आंसू परे ढरि ।
एक ही वेर गंभीर वियोग की पीर न जानी गई कित कौं डरि ॥६४॥
जनु हौं फिरि भाजि चली छुटिकैं अतुराय तवै कवरी पकरी ।
मुख मेरो नंवाय सुभायन सौं मिलिकैं अपने बस मांझ धरी ॥
मृदु वाम कपोल पै ओठ लगाय रह्यौ उर मैं नहीं संक भरी ।
अनखानी तऊ कर जोर पर्‌यौ पग औ बिनती ललचात करी ॥६५॥

दोहा

इतने में कछु चेत लहि उधरि गए मों नैन ।
सब जग सूनौ सो लख्यौ, विछुरि गयौ सुख दैन ॥६६॥
मदयंती सुकुमारि की यह सुनिकै वतरानि ।
बोली बहुरि लवंगिका विहंसि चतुरई खानि ॥६७॥

मधुभार

सुनि मदयन्ती । गुननि अनन्ती ॥
नहि तुव वानी । अमृत वखानी ॥६८॥

मोहनी छन्द

तिहिं समैं सुनि नागरि तुव कटि वास ।
फदकि नितंवन फरक्यौ वढ़ति विलास ॥६९॥
वुधिरच्छिन की अंखियनि प्रगटीय हास ।
तिहिं रति रंग रजाईय करि प्रकास ॥१००॥

मधुभार

मदयन्ति तव्व । तजि कैं गरव्व ॥
उचरीय फेरि । लज्जा संघेरि ॥१०१॥
सखि हित अथाह । चलि उतै जाह ॥
अनमिल प्रकास । तू करइ हास ॥१०२॥
वुधिरक्षि तासु । गहि कै विलासु ॥
पुनि उच्चरोय । नहिं विच्चरीय ॥१०३॥

दोहा

हे मदयन्ती ! वात यह, मालति जानति ठीक ।
है तेरी प्यारी सखी, या मै नाहीं अलीक ॥१०४॥
पुनि वोली मदयन्तिका, सुनिकैं इहि विधि वैन ।
मालति कौ उपहास यौं, काहे करति सचैन ॥१०५॥

पात्रकुलक छन्द

यह सुनि पुनि वुधिरक्षिन बोली । हे मदयन्ती ! सखी अमोली ॥
एक वात हौ पूछौं तोसौं । जौ अव सांच कहै तू मोसौं ॥१०६॥
यह सुनिकै मदयन्ती सयानी । वुधिरक्षिन सौं वोली वानी ॥
को सखी तेरी तात सु मैंनें । मानीं नहीं जु कहियौ तैंनें ॥१०७॥
तू है मेरी सखी पियारी । अरु लवंगिका हिय अनुहारी ॥
सुनि बोली पुनि वुधिरच्छी । कला चतुराई घातन अच्छी ॥१०८॥
जु अव तोहि मकरन्द पियारो । मिलै रूप जोवन गुन भारौ ॥
तौ तू करै कहा कहि सोई । प्रेमसिन्धु की लहर समोई ॥१०९॥
सुनि येह वात कुवंरि मदयन्ती । उचरी फेरि सयान अनन्ती ॥
एक वेर नख सिख लौ अंगनि । निरखौं पलक पसारि सुढंगनि ॥११०॥
यह सुनि वुधिरक्षिन पुनि उचरी । चित कै मद्धि वढ़ावत रुचरी ॥
हे मदयन्तिरु कामी ज्योंही । हरि के संग गही गहि गोंही ॥१११॥
सौं तू धर्म वढ़ावन हारी । होय कि नांहि परम सुकुमारी ॥
यापैं कछू कलंक न लागैं । यौं यह विधि कूं आई आगैं ॥११२॥
मदयन्ती यह वातैं सुनि कैं । लै उसास यौं उचरी पुनिकै ॥
समाधन किहि अर्थ वृथा हीं । करति सखी मेरे इहि ठाहीं ॥११३॥

दोहा

पुनि बोली वुधिरक्षिता, चतुराई सरसाय ।
सखि मदयन्ती आपनैं, मन की वात सुनाय ॥११४॥

बोलि उठी सुलवंगिका, इहि औसर प्रकास ॥
आय गयौ आवेस चित्त, तातें लई उसास ॥११५॥

मोहनी छन्द

पुनि बोली मदयन्ती नेह बढ़ाय ।
लवंगिका सौ सुखभरि सांच दिखाय ॥११६॥
हे सखि ! जिहि मो काजैं अपनैं प्रान ।
दीनैं हुते निसंकित प्रान सुजान ॥
नाहर मुख तें यों कह लीयउ बचाय ।
निहचें यह तन चाहै औसर पाय ॥११८॥

सोरठा

वहुरि लवंगिय वैन, मदयन्ती सौ उच्चरी ।
जु तू कहति लहि चैन, है भलेन की रीति यह ॥११६॥
वुधिरक्षिनि यह वात, सुनि कैं वोली ता समैं ।
हे मदयन्ती सिहात, सुधि करिहै यह वचन तू ॥१२०॥

मालती छन्द

मदयन्ति फेरि । झगरौ निवेरि ॥
उच्चरीय वैन । चित मंडि चैन ॥१२१॥

प्लवंग छन्द

हौं अब ह्यां तें आप निपट अतुराय कें ।
है सक्रुद्ध मो भ्रात ताहि समझाय के ॥
सखि मालति के पास पठै हौ चाय कें ।
यौं कहि ठाढ़ी भई कलेस भुलाय कै ॥१२२॥
इहिं औसर मकरन्द उपर्ना टारिकैं ।
आनन चंद समान अमन्द उघारि कें ॥
मदयन्ती कौं हत्थ आपनैं हत्थ मैं ।
गहि लीनों अतुराय पूरि मन्मत्थ में ॥१२३॥

मधुभार छन्द

मदयन्ति वाल । गुनकरि विसाल ॥
उचरीय वैन । पुनि सुक्ख दैन ॥१२४॥

हंस छन्द

नींद न रागी । मालति जागी ॥
यों कहि देखी । वुद्धि विशेखी ॥१२५॥
फेरि उचारी । यौं सुकुमारी ॥
तू इहि ठौरें । लागति औरें ॥१२६॥

मालती छन्द

तवै मकरन्द । भर्यौ छर छन्द ॥
उचारीय वैन । रतोपल नैन ॥१२७॥

कवित्त

वीते वहु वासर भए है मन चीते अव,
अधर सुधा से सने वैन वतराईयै ।
ता दिन तें मोहि न परी है कल एकौ पल,
सोमनाथ कहैं यह सांच ठहराइयै ॥
तैं ही यौं कही है तन अर्पण कीनौ ताहि,
सोई वह सेवक हौं क्यों न अपनाइयै ।
कपट भुलाय नेह मेह वरसाय प्यारी,
कंठ लपटाइयै हिय कौ सियराइयै ॥१२८॥

दोहा

मुख उठाय मदयन्तिकौ, सखी लवंगीय नाम ।
अपने औसर पाय क, वोली वचन ललाम ॥१२६॥

सवैया

सो यह प्यारो निहारि सखी जु हजारनि तेरे मनोरथ पूरिहै ।
सोय गए सव तौ घर के अंधियारी न कोऊ इतै उत धूरिहै ॥
औसर पैं कृत कौं पहचानि, असंकित ह्वै ऽव कलंकनि चूरिहै ।
लै कर में मनि नूपुर खोलि चलौ अतुराय सुठौर न दूरिहै ॥१३०॥

प्रिया छन्द

मदयन्ती । गुनवन्ती ॥
अनमोली । पुनि वोली ॥१३१॥

तोमर छंद

वुधिरक्षिनी अव मोहि । करनौं कहा हित तोहि ।
सुनि वात वुल्लिय फेरि । वुधिरक्षिनी निजु हेरि ॥१३२॥

जो कीयौ मालति वाल। करि सो तुहौ इहिं काल॥
यह वात सुनि मदयन्ति। वोली फिर यौं दुतवन्ति॥१३३॥
सखी मालती ने आप। कीनौं कहा सु मिलाप॥
कर ग्रहन माधव संग। गहि साहसैं स-उमंग॥
वुधिरक्षिनी हुलसाय। पुनि उच्चरी समझाय॥
मदयन्ति के तुव सत्थ। का वकति हौ सु-विरत्थ॥
मदयन्ति सुनि यह बात। वनि गई औचक घात॥
अंखियांनि तैं जलधार। वरसाय दैय अपार॥
बोली विसारि गरव्व। वुधिरक्षिनी पुनि तव्व॥
वड़ भाग हे मकरन्द। अतिही सु आनंदकंद॥
निजु प्रिय सखी मैं अव्व। तोकौं दई लहि ढव्व॥
मकरन्द सुनि यह वात। वोल्यौ हियें हुलसात॥१३८॥

सवैया

पूरब पुण्य उदोत भए निरधार दया विधि काम करी है।
जीवन औ इन नैनन को फल पायौ निहारि विथा निवरी है॥
जाके लियें शशिनाथ अनेक उपाइ किये नहिं संक धरी है।
सो यह आजु की धन्य घरी सु मिली मन भावति भाग भरी है॥१३९॥

दोहा

ताते पश्चिम द्वार ह्वै चलि करियै निजु काज।
यौं कहि के इत उत फिरे, च्यारौं मध्य समाज॥१४०॥

सवैया

मनि कंचन के अनदूषन भूषन अम्वर अंगनि मै पहरैं।
नर नागरि संग उमंगनि सौ विहरैं जुग जामिनी के पहरैं॥
तिनि की मदिरा मिलि चंद्रक चंदन सीरे समीरइते फहरैं।
झुकराय अटारीनि की झंझरीनि सुआवैं सुगन्धि की लहरैं॥१४१॥

सोरठा

इतनी कहि कैं बात सिगरै पर्दे में दुरै।
देखन कों अकुलात, कौतिक वारे रहि गए॥१४२॥

दोहा

मदयन्तिको व्याह ह्वां हुव मकरन्दा संग।
यही सातमें अंक मे, वाढ़ी हरष तरंग॥१४३॥

हरिगीत छन्द

वदनेस नंद प्रताप जाकौ तेज दिनमणि तूल है ।
अव करन सौ ताकै वहादुर कुंवर आनंदमूल है ॥
तिहि हित्त कवि शशिनाथ नै रच्यौ विचार निसंक है ।
माधव-विनोद सु ग्रन्थ कौ यह भयौ सप्तम अंक है ॥

इति श्री माथुर चतुर्वेद मिश्र सोमनाथ कवि विरचिते माधव-विनोद नाटके मदयन्तिका पाणि-ग्रहण वर्णनम् नाम सप्तमोङ्कः ॥७॥

अथ अष्टमोङ्कः

दोहा

पट उघारि अवलोकिता, आई मद्धि समाज ।
बोली वहुरि पुकारि कैं, सजि नैननि में लाज ॥१॥

पद्धरी छन्द

नन्दन के घर तैं कामदानि । आवति है ताको प्रेम ठानि ॥
मैं वंदन करि जैहौंव तत्त । मालति अरु माधव थित जत्त ॥२॥
यौं कहि परिक्रमा सभा मद्धि । करिकैं पुनि वोली नेह सद्धि ॥
उच्चरी लसत ए दुवौ सांझ । वापिका किनारैं सिला मांझ ॥
यौं उचरि परिक्रम करि उताल । दुरि गई ओट पट में रसाल ॥
कौतुक निरखैया रहे देखि । उर मद्धि परम आनंद विसेखि ॥४॥

सोरठा

तातैं पट को टारि, वैठे माधव मालती ।
आयौ स्वांग सिगार, और तहीं अवलोकिता ॥५॥
माधव चित्त मंझार, लाग्यौ करन विचारयौं ।
संध्या समय उदार, लागत परम सुहावनौ ॥६॥

कवित्त

परम उदार सिरदार ग्रह-मंडल में,
प्राची के सिंगार विन्दु तूल दरसतु हैं ।
निसि भरतार तोम तिमिर प्रहार करि,
पार मन्मरथ कौ पियूष वरसतु हैं ॥
छीरधि को नन्द सोमनाथ को सिरोमनि है,
जा विन चकोरनि कौ चित्त तरसतु है ।
अधिक अनंद यह उदित अमंद चंद,
निरखत नैननि अनंद सरसतु है ॥७॥

मुक्तादाम छन्द

लग्यौ चित्र मधि करन विचार । सु माधव यौं सब विधि उदार ॥
किहीं विधि सौं समझावऊं याहि । सुभाव गह्यौ उलटौ इनि आहि ॥८॥

उचारिउ माधव फेरि प्रकास। भरै उर मे मनमत्थ हुलास ॥
प्रिये सुनि मालति मो अब वैन। विलोकि इतै समुहै करि नैन ॥९॥
भई गरमी अति मो अंग अंग। सिराय सु तू अब सज्जि उमंग ॥
करौ विनती कर जोरि बनाय। विराजिय है लखि सांझ जुन्हाय ॥१०॥

दोहा

कहा और ही और तू जानति है नित मोहि।
अजहू नहिं परतीत है, पूछत हूं मै तोहि ॥११॥

सवैया

जव लौं मखतूल के तार से वारन नीर कौ विन्दु चुचात रहै।
अरु वौर्न उरोज कठोरनि की जव लौ जुग कोर सिरात रहै ॥
शशिनाथ अनूपम अंगनि की जव लौ पुलकैं दरसात रहैं।
सव लौ लगि सुन्दरि मो हिय सौ जिय की गरमी सब जाति रहै ॥१२॥

दोहा

जैसै शशि की किरनि लगि होय चन्द्रमनि हार।
स्वेद विन्दु जुत भुजा तुव तैसी है इहिं वार ॥
ते अब मेरे कंठ में डारि सुलेह जिवाय।
यह कठोर हठीली, मन तें दूर वहाय ॥१४॥

मोहनी छन्द

मैं अब विलसतु दूरि सु आवतु पास।
यौं कहि सरक्यौ माधव सहित हुलास ॥१५॥
पुनि वोल्यौ सुनि प्यारी तजि अभिराम।
वातनि हूँ के लाइक हम न सुजान ॥१६॥

सवैया

चंद की चारु मयूपनि सौं बहु वासर मै ताचिवौ अपनायौ।
सूल से फूल दुकूल गिनें अरु चन्द्रक चंदन हू विसरायौ ॥
सो ससिनाथ करौ बिनती अब लागि हियें तिय क्यौ हठ छायौ।
वीन से वैननि के सुनिवे हित हों मन में अति ही ललचायौ ॥१७॥

मधुभार छन्द

अवलोकि तासु। सज्जै हुवासु ॥
पुनि सुक्ख दैन। उच्चरिय वैन ॥१८॥
हे तिय कठोर। पिय चित्त चोर।
यह कौन वानि। उर वसीय आनि ॥१९॥

कवित्त

जाहि विनु देखें छिनु गिनती अलेखें,
आन वेर वेर मोसौं इनि वैननि कौ भाखती ।
कहां रह्यौ प्यारौ वह नैननि को तारो सखि,
रूपगुन भारौ लाज साज सव नाखती ॥
फिरि जु निहारौं तो विसारौं पलकनि,
अंग अंग अवलोकौं यों अनंग अभिलापतीं ॥
तातें भरि अंक अव दूनी ह्वै निसंक प्यारी,
याकौ फल यही कौन जानें कव चाखतीं ॥२०॥

सोरठा

जव मालति को रोकि, यौं उच्चरी अवलोकिता ।
तव सु हिय रिस रोकि; चितई ता तनु मालती ॥२१॥
माधवहू पुनि तव्व, लग्यौ कहन हिय मद्धि यौं ।
जानति वात सरव्व, कामंदानि की सिष्यनी ॥२२॥

पावकुलक छन्द

माधव पुनि इमि वोल्यौ वानी । प्यारी ! सुन मो वच सुखदानी ॥
अवलोकिता सांच यह भाषै । ताकौ तू भूमै मति नाषै ॥२३॥
यह सुनि मालति परम विच्छन । अपनौ सीस हलायौ तच्छन ॥
तव माधव वोल्यौ हित छायें । कपट गुटी कौ दूरि वहायें ॥२४॥

दोहा

लवंगिका अवलोकिता, दुहुँ के जिय की तोहि ।
सौहै प्यारी जौऽवतू भेद न भाषै मोहि ॥२५॥

प्रिया छन्द

उच्चरी मालती । प्रेम कौ पालती ॥२६॥

दोहा

मै जानति कछु नाहि, यौं आधे वरन उचारि ।
ह्वै सलज्ज सो सभा में, नच्ची आरस टारि ॥२७॥

हंस छन्द

माधव वोल्यौ । फेरि अमोल्यौ ॥
हे अवलोकी । नित्य असोकी ॥
क्यों यह वाला । रूप विशाला ॥
चारु मृगक्षी । रोवति लक्षी ॥२८॥

तोमर छन्द

अवलोकिता समुहाय । मालतिय कौं समुझाय ॥
पुनि उच्चरी मधुराय । ढिग जाय निपट लुभाय ॥३०॥
सखि क्योंऽब हिलकिय लेत । फरके भुजा दुख देत ॥
उछरै दुवौ पुनि अंस । कहि सो विचार असंस ॥
उचरी सो मालति फेरि । अवलोकिता तनु हेरि ॥
मों सौं लवंगिय आय । मिलिहै कवै अतुराय ॥
कबलौं सखी यह ताप । सहिहौ विहीन मिलाप ॥
है दुलभ सो धौं तासु । किहि भांति होय हुलास ॥
पुनि ता समै परवीन । उचर्यौ सु माधव दीन ॥
अवलोकिते कहि भेद । यह है कहा हिय खेद ॥
अवलोकिता यह बात । सुनिकैं सजै पुनि घात ॥
उचरी समेति सयांन । तुमही करी विधि आंन ॥३५॥
सुलवंगिके की सौंह । दै कैं सरल करि भौंह ॥
या कैंवता की चाह । चित मैं वढ़ी अनथाह ॥
यह सुनत माधव विप्र । उचर्यौ बचन पुनि छिप्र ॥
अब ही तहां कलहंस । पढ्यौ चतुर अवतंस ॥३७॥
नन्दन भवन की क्षेम । सब जानि कैं लहि प्रेम ॥
रहियौ दुरे पुनि भाय । मौं सौं सु कहियौ आय ॥३८॥

दोहा

सुनि अब हे अवलोकिते, वुधिरक्षित के ख्याल ।
मकरंदै मदयन्तिका, मिलि है रूप रसाल ॥३९॥
पुनि बोली अवलोकिता, माधव सों तजि मौंन ।
महाभाग इहि बात में, है अब संशय कौंन ॥

सवैया

नाहर के नख घातन मूरछि मित्र जवै तुव चेतहि पायौ ।
मालती नें सु बधाई दई तब ताही तें आपौ दियौ छवि छायौ ॥
जौ मदयन्तो मिलै मकरन्दहि कोउ कहै अति ही अतुरायौ ॥
माधव ताकौं कहा अब देहु कहौ हंसि वैन सनेह सुनायौ ॥४१॥

दोहा

यह सुनि कैं माधव हियैं, बोल्यौ औसर जानि ।
जो कहिवे लायक बचन, सो इनि कर्‌यौ वखानि ॥४८॥

सोरठा

आपनं हियहि निहारि, अवलोकितें सुनाय कें ।
चित पै निपट विचारि, प्रगट वचन पुनि उच्चर्यौ ॥४३॥

सवैया

मालति डीठि परी ही जबै मन्मत्थ के कानन मै पहलें ही ।
तब की यह साखि न ठीक कहौ न अलीक सनेह सजेंही ॥
जौ फिरि मोहि लवंगीय मानि दई भ्रम छाय कै सुन्दरि एही ।
सो निज हाथ रची वकुलावलि देहुँ मैं ताहि उतारि अबै ही ॥४४॥

कवित्त

मन्मथ वन कौ मुकुट जो वकुल द्रुम,
ताके पुहपन की रची है अति प्रीति सौं ।
हाथ सहचरि कै विराजी कंठ भांवती के,
वौने उरोजनि सौं विहारी परतीति सौं ॥
सोमनाथ की सौ व्याह विधि कौ निवा करि,
दीनी मोहि सखी के भरम प्रन जीति सौं ।
सोई निजु कर की वनाई यह माल हाल,
देहौं ताहि निवट उछाहि चित्त नीति सौं ॥४५॥

पावकुलक छन्द

यह सुनि अवलोकिता उचारी ! सावधान हो मालति प्यारी ॥
मौरसिरी की माल सुहाई । पर कर अब जैहै अतुराई ॥४६॥
सुनि यह बात मालती वोली । भली बात सखि कहति अमोली ॥
रही मौन गहि उत मन लायौ । सिक्षा वैन जु सखी सुनायौ ॥४७॥
अवलोकिता कही पुनि बानी । कहा भई पै छर सुखदानी ॥
यह सुनि कै नैपथ्यहि ओरैं । चितयों माधव प्रेम वटोरैं ॥४८॥
यह बानी वोल्यौ सरसावतु । अरे ! इते कलहंसक आवतु ॥
इहि अवसर माधव सौ आतुर । बोलि उठी मालति अति चातुर ॥४९॥
प्यारे तुम को निपट बधाई । तुव सहचर मदयन्ती पाई ॥
सुनि यह माधव नैं छवि छाई । हरपि मालती कंठ लगाई ॥५०॥
वकुलावलि सो हिय पहराई । मन की बात सबै वनि आई ॥
अवलोकिता कहन पुनि लागी । हे मालति ! तू परम सभागी ॥५१॥
कामन्दकि की वात निवाहीं । वुद्धिरक्षिता नै तिहि ठाहीं ॥
इतने में मालति ने वैना । कह्यौ फेरि यौं मंडित चैना ॥५२॥

लवंगिका मो सखी पियारी। आई डीठि निपट गुन भारी॥
वड़ी वेर हुव ताहि निहारैं। सुख पाऊंगी अब हित धारैं॥५३॥

दोहा

इति औसर नेपथ्य कै, पट कौ टारि उताल।
कलहंसक मदयन्तिका, वुद्धिरक्षिता वाल॥
अरु लवंगिका इनि सवनि, यौ पुनि भाषै वैन।
हमै रक्षियै रक्षियै, महाभाग सुखदैन॥५५॥

बड़ी चौपई

तहं अरध पन्थ में चौकीदारनि घेरि लियौ मकरन्दै।
हम कलहंसक के संग पठई इति कौं सजि छर छन्दै॥
पुनि बोलि उठ्यौ माधव सौं तच्छन कलहंसक जन रूरौ।
हम इत कौं सोर सुन्यौ तव मन में किय विचार यौं पूरौ॥५६॥
वहु औरों प्यादे महीपाल के मेरे जान पठाय।
यह चोर नहिं जावै कितहूं रहियौ चौकस छाये॥
सुनि इहि विधि के वैननि तक्षन मालति वचन उचारी।
हे अवलोकिता! हाय!! अब सुख दुख संग भए अति भारी॥५७॥

पद्धरी

उचर्‌यौ तहां माधव प्रवीन। मदयन्ति आउ सुन्दरि नवीन॥
मो भवन अनुग्रह करि पधारि। अव सकल दुख डारे निवारि॥५८॥
हो सुचित संक रंचक न मानि। इक मित्र और अरि भीर जानि॥
जिनि हत्यौ क्रूर नाहर कराल। तिहि आगैं ए नर तुच्छ ख्याल॥५९॥
यैं तौहूँ मै ता मित्र पास। करिहौ बजाय विक्रम प्रकास॥
यौं भाषि इतै उत डगन धारि। कलहंस सहित दुरिगौ विचारि॥६०॥

हरिगीत

अवलोकिताऽरु लवंगिका वुधिरक्षिता पुनि ये सवै।
वतरान लग्गिय सोच पग्गिय खेद खग्गिय यौ तवै॥
बड़ भाग ए इहि ठौर निहचै फेरि मुख सौ आय है।
दर्साय लोचन विरह मोचन दुख दन्द वहाय है॥६१॥

सोरठा

इहि औसर अतुराय, वचन उचारी मालती।
अवलोकिता सुनाय, वुधिरच्छिन कौ हाथ गहि॥६२॥

तुम दोउ अव जाय, भगवति सों विरतंत यह ।
कहौ सवै समझाय, पथ में नेकु न विरमियौ ॥६३॥

दोहा

हे प्रिय सखी लवंगिके, तुहू इहां ते जाय ।
महाभाग सौं मोवचन, इह कह आव सुभाव ॥६४॥
हमपै जु हौ दयाल तौ, तुम यह विनती मांनि ।
सावधान ह्वै कीजियौ, तहं विक्रम सुख दानि ॥६५॥

हरिगीत

सुलवंगिका अवलोकिता वुधिरक्षिता हितु राखिकैं ।
दुरि गई पट की ओट तीनों आतुरी अभिलापि कैं ॥
तहं हाय ! हाय !! उचारि मालति हाथ उर पर मारि कैं ।
पुनि उच्चरी यह वैन मुख तैं सकल साहस टारि कैं ॥६६॥
हुत वहुत वार लवंगिका कौ रही कितहू ठहराय कैं ।
हौं जाय ताको पंथ निरखौ रह्यौ हिय हहराय कैं ॥
यौ भाषि इत उत फिरी तिहि ठां अंग सब थहराय कैं ।
नर रहे कौतिक वार निरखत दृगनि रस गहराय कैं ॥६७॥
मदयन्तिका यह जानि औसर उठी हेत उपासि कैं ।
पुनि उच्चरी इहिं विधि वैननि हिये के मधि त्रासि कैं ॥
मों नैन दक्षिन लग्यौ फरकन सगुन उत्तम नासि कैं ।
थिति भई रंग समाज में पुनि दीह स्वास उसासि कैं ॥६८॥

दोहा

फेरि कपाल सुकुण्डला, आई पट कौ टारि ।
ठाढी रहि पापिन कह्यौ, मालति सौ रिस धारि ॥६९॥
यह सुनि संकित मालती बोली यौ सुपुकारि ।
हाय भावते ! अरध वच कहि नच्ची प्रन पारि ॥७०॥

प्रमानिका

तवै धरम्म सो घटी । कपालकुण्डला रटी ॥
पुकारि री ननद कैं । सनेह कौ विहद्द कैं ॥७१॥

सवैया

हैऽव कहां वह जानै हत्यो गुरु मेरो तपस्विय जोग जगैया ।
तो कंह तोय वचाय कुचाल महा सठ पापनि को अपनैया ॥

क्यों तरफै इहि भांति अर्धमिन वाज गही ज्यौं नवीन चिरैया ।
जौ लग श्री नग पै पहौच्यौ तह भक्षि हौं तोहि रक्त पिवैया ॥७२॥

सोरठा

यौं कहि वचन अलीन लै मालति कौ अंक में ।
पट में दुरी कमीन, निठुर कपाल सुकुण्डला ॥७३॥

अथ श्री पर्वत पै मालती अभिलाष है ।

सवैया

मुख चंद निहारि विसारि वियोग चकोरनि के अनतं न टरौ ।
अपनी विरहानल ज्वाल कथा अव कैं शशिनाथ सवै उचरौ ॥
गलवांही कपोल कपोलनि छै निरखौं छवि आसि सौहैं धरौ ।
जु मिलै कवहूं फिर तौ समुदाय निसंकित ह्वै पिय अंक भरौ ॥७४॥

हंस छन्द

तहं मदयन्ती । गुननि अन्ती ।
उचरीय आपै । चहित मिलापै ॥७५॥

मोहनी छन्द

हौंहुं अव तिहि ठांही जैहौं धाय ।
है तिन मो सखि मालति जीय अकुलाय ॥७६॥
यौ कहि इत उत फिरि कैं बोली ऐंन ।
कित ह्वै है सखि मालति पंकज नैन ॥७७॥
पट को टारि लवंगिय आई तव्व ।
वोली यों पुनि वानीय विसरि गरव्व ॥७८॥
हे मालतिय सहेलिय ! यह सुनि वानि ।
वोली यौ सुलवंगीय रस की खानि ॥७९॥
मोहि लवंगीय जानहु मालति नांहि ।
फिरि उचरीय मदयन्तिय गुनि उर माहि ॥८०॥
महाभाग को वतियां कहि समझाय ।
हैऽव कुशल सौ अंगनि मन सुखदाय ॥८१॥
उचरी बहुरि लवंगीय औसर जानि ।
माधव की सव करनी प्रगट वखानि ॥८२॥

परे कहूं भुज दंड खंड कहूं मुंड उदारे ।
और कुम्हेडे तूल कहूं उर पेड प्रहारे ॥
मचि रही कीच कहं मंद मिलि कहं श्रोनित नारे ढरत ।
अरु कहुँ पल भक्षी भूत गन अपनौं मन भायौ करत ॥१००॥

हंस छन्द

यौं सुनि बोल्यौ । प्रेम अमोल्यौ ॥
माधव बन्दा । मानहु चन्दा ॥१०१॥

सवैया

तव चंद की चांदिनी मध्य सुवे नर सुन्दरी संग विहारत हे ।
अरु अम्बर अंगनि साजि सुढंगनि बाग वहार निहारत हे ॥
अब मो भुज दंडन दंडित ते छिति लेटत क्यों हूं न हारत हे ।
निर्धार ह्वै चार असार सवै जग जो हम नित्त विचारत हे ॥१०२॥

पावकुलक छन्द

अरु उत्तम है अवनी को नायक । जग के मद्धि वड़ाई लायक ॥
जानैं हम अपराधी दोऊ । छोड़ि दिये नहीं छोड़ै कोऊ ॥१०३॥
यह सुनि कैं मकरन्द उचारयौ । माधव सौं हित उर में धार्‌यौ ॥
आउ मालती के चलि आगैं । यह चरित्र कहि है प्रन पागैं ॥

सवैया

ये मदयन्तीय के हरिवे के चरित्र जवै तू वनाय जताय है ।
सो सुनि कैं ससिनाथ की सौंह सनेह समुद्र महा उफिनाय है ॥
मालती हाथ हियै धरिकै, तव खंजन नैननि कौ चपलाय है ।
माधव तोहि चितै तिरछाय कैं नारि नवाव हरै मुसक्याय है ॥१०५॥

तोमर छन्द

यह भाषि कैं मधुराय । कर नृत्य गति सरसाय ॥
वोले वहुरि इहिं भाय । यह वही विपन लसाय ॥१०६॥
फिरि आयु माधव एक । यह वचन कहे उस टेक ॥
यह वापिका कौ थांन । क्यौं सुन्नसांन निदान ॥

मालती सुगीत

तवै मकरन्द । बिना छर छन्द ॥
सवुल्य वात । लहै उर घात ॥१०८॥

सवैया

मित्र हमारे वियोग तें व्याकुल मालतीहू बन मध्य सिधाई ।
कौतुक देखत ह्वै है इतै उत क्यों चित में गहियै दुचिताई ॥
अब विलोकें प्रफुल्लित वृक्षनि है जहं सौरभ की अधिकाई ।
पुंजनि पुंज अलिन्दिनि की सुनियै जहं आननि कौ सुखदाई ॥१०९॥

तोमर छन्द

सो आव मित्र उताल । देखै हुवौ तंह हाल ॥
यों कहि सभा के मद्धि । इत उत फिरे हितलद्धि ॥११०॥
तब लौं लवंगीय संग । मदयन्ति विगत उमंग ॥
उचरंतही अतुराय । हे मालती सुखदाय ॥
अचकां परे पुनि डीठि । मकरन्द माधव नीठि ॥
उचरी तबै विय वाल । लखियै हुवौ सु रसाल ॥
मकरन्द माधव फेरि । इमि उच्चरैं तित हेरि ॥
है कहां मालति नारि । सो निपट ही सुकुमारि ॥
फिरि हुवौ उचरी वैन । कित मालती है ऐन ॥
तुव पाइ पै छर पाय । हम छली हैं इहि दाय ॥११४॥

हंस छन्द

माधव बोल्यौ । प्रेम अडोल्यौ ॥
ही भर तापैं । पूरि विलापैं ॥११५॥

सवैया

आवत है मृगनैनी निमित्त सु मेरे हियै में विचार अचैनी ।
प्राननि अंतर त्रास वस्यौ, फरकै दृग वाम विलछन पैनौ ॥
कंप वढ्यौ अंग अंगनि में अब देखियै आगै कहा लखि लैनौं ।
मैं नहि काम विगार्यौ कछू जु विचार्यौ दई नै इतो दुख दैनौ ॥११६॥

चउरस छन्द

यह मदयन्ती । सुनि गुनवन्ती ।
उचरीय वानी । हीय हहरानी ॥११७॥

हरिगीत

बड़भाग याते चल्यौ जवही सखा अपनैं पास कौ ।
बुधिरक्षितें अवलोकितै तब मंडि दीह उसास कौ ॥

भग्वतीय कूल पठाय दीनी समाचार सु कहन कों ।
पठई लवंगीय निकट माधव कहन साहस गहन कों ॥११८॥
जव हुव अवेर लवंगिकै तव मालती अकुलाय कैं ।
तिहि मग्ग देखन गई आगैं आतुरी अधिकाय कैं ॥
हौंहू कठी तिय पिट्ठ पाछैं जाय निजु सखि पै लखौं ।
जब लौं विलोकति ही विरक्षिनि मद्धि नहि अन्तर रखौ ॥११९॥

दोहा

तव लौं आए दीठि तुम, आगै हुवौ सभाग ।
यह सुनि माधव उच्चर्यौ, हिय उमगैं अनुराग ॥१२०॥

सवैया

राखत प्रान मरू करिकै उर में विरहानल ज्वाल वढ़ी है ।
भावती तेरी हंसी अव ह्वै चुकी क्यौं जक आंनि इतीक चढ़ी है ॥
तेरी कछू सुभ सूझतु है न नदुरी कित जाय अमान मढ़ी है ।
सुन्दरि वेग सुनाय सु वैन कहा यह तू निठुराय पढ़ी है ॥१२१॥

दोहा

लवंगिका मदयन्तिका । दोऊ निपट छुहाय ।
वोली हा सखि मालती । तू कित गई दुख्याय ॥१२२॥

छप्पै

पुनि बोल्यौ मकरद मित्र क्यौं विहवल पैसें ।
यह सुनि माधव कह्यौ सखा यौं भाषु तु कैसें ॥
तू नहि जानें कहा मालति माधव हित में ।
जकरि रही है महा विकल हवै है अति चित में ॥
यह सुनि वोल्यौ मकरन्द पुनि आवत है मन वात इक ।
मति भग्वति के ढिग मालती गई होय ठानि ठिक ॥१२३॥

सोरठा

सो अब चलितिहि ठार, आयौ देखें प्रथमही ।
सुनिकै यह सु उचार, हुवौ सखी पुनि उच्चरी ॥१२४॥
हमरे चित्त मझार यह आवति है वात अब ।
सुनि माधव सिर्दार, वोल्यौ यौं पुनि आतुरैं ॥
तुम जु कह्यौ यह वैन, सोमनाथ प्रभु यौं करौ ।
यह सुनि सब सुख लैन, सभा मद्धि इत उत फिरै ॥१२६॥

तोमर छन्द

तवै मकरन्द । विना छर छन्द ॥
कह्यौ यह वैन । हिये मधि ऐन ॥१२७॥

सवैया

मालति कामदि सिद्धिनि के घर होय गई उर मै अकुलानी ।
जीवति है वह नांहि किधौ दुविधा यह एक महा सरसानी ॥
पैं निहचैं ससिनाथ की सौह हितू मिलि है हमकौ सब जानी ।
कौधि उठी अभिरामनि औचक ही समुहै सुखदानी ॥१२८॥

दोहा

यौं कहि कै पट में दुरै, सिगरे औसर ठानि ।
कौतिकवारे लखिरहे, अंखियनि अनमिष वांनि ॥
लायौ है यह अंक में, मदयन्ती मकरन्द ।
आई नृप की फौज सो, खण्डी पाय अनन्द ॥१३०॥

हरिगीत

वदनेस नंद प्रताप जाकौ तेज दिनमनि तूल है ।
अब करन सौ ताकैं वहादुर कुंवर आनन्द मूल है ॥
तिहिं हित कवि ससिनाथ नै रच्यौ विचारि निसंक है ।
माधव विनोद सुग्रन्थ कौ यह भयो अष्टम अंक है ॥

इति श्री माथुर चतुर्वेद मिश्र सोमनाथ शर्मा कवि व्रिरचि माधव-विनोद नाटके मकरन्द विजय वर्नन नामाष्टमोङ्कः ॥८॥

नवमोऽङ्कः

दोहा

पट उघारि सौदामनी, आई सभा मझार ।
कामदानि की शिष्यनी, जोगिनि रूप उदार ॥१॥

सोरठा

सो जुग्गिनि तिहि ठाम, वोली परगट वचन यौं ।
सौदामिन मो नाम, आई श्री नगराज तें ॥२॥

पावकुलक छन्द

पदमावती पुरी मैं आई । यह मैं जानि प्रसंग महाई ।
माधव मालति विरह सतायौ । तानें आपुन पौ विसरायौ ॥३॥
सुहृद बंधुजन सिगरे तजि कें । वह द्रौन गिरि विपननि लजिकें ।
भुमत तहां मै निहचै जैहौं । वाकी खवरि सु आतुर लैहौं ॥४॥
जोग रीति उर मै अपनायें । कैसे आवनिउडी सुहायें ॥
नगर ग्राम पव्वय गुन अगरे । कढ़त जात अंखियन ह्वै सगरे ॥
पीछे कौ सौदामिनि चितई । सिद्धिनि ता निहचें कै जितई ॥
वोली पुनि ऐसें सो वानी । पद्मावती पुरी सो जानी ॥
उन्नत अटा अटारी जा मै । परसत जे अंवर अभिरामैं ॥
सवनां नौवत रंगिनि सोहै । उठै तरंग तुंग मन मोहै ॥
राजत अंकुर हरे किनारें । नागरि गागरि भरें विहारैं ॥
अरु जल केलि करत हितसानी । तजिकें सव की संक सयानी ॥
वहुर्‌यौं औरै ठौर निहारी । फिरि या विधि सौं वचन उचारी ॥
कैसै कूल नदी नें काटे । ठौर ठौर थल लखियै फाटे ॥६॥
तिन मै गिरै नीर अतुरानौ । होत नद्द घन गरजें मानौं ॥
कुंजर सद्द समान भयद्दा । काहू ठौर होत अनहद्दा ॥१०॥
अरु लखियै वन यह अति भारौ । वृक्ष निकुंजनि कौ अंधियारौ ॥
अश्व करन सूधे अति रूरे । सघन हरित पत्रनि सों पूरे ॥११॥

पद्धरी

धव नीर खैर धम्मनि उदार । सीस्मौ खंडारि वट को विदार ॥
पीण्डरि खजूर कंजे तमाल । मक्खी करील अरनी विसाल ॥१२॥

पीलू ववूर हिगोट ताल । सागौन छौंकरा अंड जाल ॥
सैंवरि कदंव पापरीय वेलि । सालरि फरास औंगा गंगेलि ॥१३॥
संहजनी फोग अरु कैंच ढाक । पाडर पमार अरु कुडा आक ॥
वरनार वज्रदन्ती सुवेल । कंग हीसरा फोकानि रेल ॥१४॥
धो झरू कठूं भरि अमलतास । अरु हीस वकाव्न जालु पास ॥
अरु चनक सभा भू तिल्लक पुंज । सेंहडि अनगनें वंस मुंज ॥१५॥
अंकोल मिलाये सप्त वर्न । तैंदू अरु थूहरि हरित वर्न ॥
करहरी चिरोजी अरु पटीर । नारीयर सुपारी द्रुमनि भीर ॥
कठरंभा नीबू वैत और । वहुवेली लपटी ठौर ठौर ॥
औरौं अनेक तरवतर अटूट । तहां पन्थ नाहिं वन जटाजूट ॥१७॥
डुल्लन्त रोझ वुल्लन्त स्यार । घघ्घरैं घोर घुग्घू अपार ॥
गुजरत वाघ ह्वै मत्त चूरि । भज्जै कुरंग चीते सुदूरि ॥
गाढ़े अनेक पाठे फिरन्त । ठाढे द्विरद कहूं मद झरन्त ॥
गैडा स ऐंड भय भीर छंडि । कीड़त कहूं मन मोद मंडि ॥
बड फनैं फुंकरैं कहूं नाग । डारन्त जहर के कहर झाग ॥
झिकरैं जोर झिल्ली अनन्त । वन जन्तु घनैं औरौं रटन्त ॥२०॥

दोहा

यह लखि दक्षिन दिसा के वन गिरि सरित अपार ।
सुधि अवत गोदावरी, वारे व्यौंत उदार ॥
पुनि वोलीं सौदामिनी, आहा कहि तिहिं वार ॥
है यह मधुमत्ती नदी, सिन्धु गामिनी धार ॥२२॥

संजुता

अति अमल सीतल नोर है । कहुँ थाह कहुँ सुगंभीर है ।
सुथरी उतंग तरंग है । वहु रंग कोलसु ढंग है ॥२३॥
चहुँ ओर सौरभ जोर है । लहकैं बयार झकोर हैं ॥
भन्नाति पुंजनि भौंर है । सर तै ढुरैं मनु चौर हैं ॥
जल जाति पातनि तै घनी । जलविन्दु सोहत यौं वनी ॥
मरकत के जनु थार मैं । मुक्ता धरे अन ठार मैं ॥२५॥
अरु कच्छ मच्छ तिरन्त है । जलजन्तु और अनन्त हैं ॥
अरु तीर तीर कुलंग हैं । करीं रु चक्र विहंग है ॥
वहुरैं इतै उत चैन सौं । उचरंत हैं भरि मैन सौ ॥
पुलिनै अनूप विराजई । अवदात सोभ समाजई ॥

कहूं कूल कहूं गिरत है। कहूं नीर भौंर फिरन्त हैं ॥
कहूं घोर सद्द सजन्त है। मनु अट्ट अट्ट हंसन्त है ॥
कहू नीर कुक्कुट जुट्टई। पग पंख चुट्टनि कुट्टई ॥
कहूँ सार सारस बुल्लई। कहुं ग्राह उद्दत उल्लई ॥
कहू नीर पीवत आयकै। मृग पुंज प्यास बुझाय कैं ॥
कहू केलि कुंजर मंडई। अरु वृन्द वृन्दनि खंडई ॥
पुनिसुडि में जलधारिकैं। निजु अंगलेत पखारिकैं ॥
पुनि या नदी जल पान सौं। नर भोगई सुख स्थान सौं ॥३१॥

दोहा

देव प्रतिष्ठित है यहां, सुवरन विन्दु महेस ।
जिन के दरसन के करै, सिगरे कटत कलेस ॥३२॥
यौं कहिकै लागी करन, सिव अस्तुति मन लाय ।
जोगिनि सो सौदामिनी, दोऊ हाथ उचाय ॥३३॥

छप्पै

सरद घटा से अंग प्रीति सिर जटा जूट धर ।
तापर वलित भुजंग, तुंग गंगा तरंग वर ॥
चन्द लिलार अमन्द तीनि दृग कोटि कष्ट हर ।
भूत पास अट्टट्ट हास नित श्री विलास कर ॥
अरु मुण्डमाल कंकालकर, कंठ विसाल कराल गर ।
जय सोमनाथ आनंद निधि, जस प्रसिद्ध सब सिद्धि घर ॥३४॥

दोहा

जहां उतरिवे कौ करी, चित्त वृत्ति ललचाय ॥
अरु बोली पव्वय निरखि, बानी मधुर बनाय ॥३५॥

त्रिभंगी छन्द

वहु शृंगै जाकी मुकुट प्रभा की नील घटा की दुति जीतैं ।
सीतल जलधारैं श्रवत अपारे झरना भारे लहि रीतैं ॥
द्रुम पुंजनि वेली जिही सुहेली पुहुपनि वेली थिर थहरैं ।
मकरन्द वटोरे पवन झकोरे जह चहुँ ओरै मृदु फहरै ॥३६॥
फहरै सु प्रभंजन गरमी गंजन खग दुख भंजन धुनि वोलैं ।
अरु नचत मयूरा शृगनि रूरा शिपिनि हजूरा मन खोलै ॥
वहु विधि के विहरै आनंद लहरै मृग छवि छहरै लाय हियैं ।
तपसी जिहि कन्दर वसिकै अन्दर वनफल सुन्दर खाय जियैं ॥३७॥

सोरठा

इतनौ कहि सुख पाय, ऊंचै कौ निरखी वहुरि ॥
दुपहर भयौ अघाय, सोई लक्षन देखियत ॥३८॥

सवैया

चीतह चिकारति अंवर मै अरु टिट्टिट भटेरति मडि विहारनि ।
सारस औ चकई चकवा मुख ढंकि रहे निजु पक्ष उदारनि ॥
कुक्कुट कूकत ताप तचै अरु चातक जाचत मेह की धारनि ।
जन्तु अडोल भये वन के अरु वोलति है पिंडुकि द्रुम डारनि ॥३९॥

सोरठा

भला होउ कछु क्यौ न, मोहि तहां चलनौ अवै ।
जहां माधव तज भौन, विलखतु है मकरन्द संग ॥४०॥
इतनी कहिकें वात, सौदामिनी पट में दुरी ।
सवै रहै मुसक्यात, कौतुक वारे मनुज गन ॥४१॥
माधव अरु मकरन्द, पट वाहर आए वहुरि ।
लै उसास भरि दन्द, वोल्यौ यौ मकरन्द निजु ॥४२॥

सवैया

निहचैं अति आनन रास भयौ चित में भ्रम आनि महा सरस्यौ ।
इक वार ही मोह अंध्यार वढ्यौ अखियांनि कलेसनि कौ परस्यौ ॥
अरु काज कछू वस के कर नाहिं फिरैं पसु से यम कौ तरस्यौ ।
विधि के विपरीत भए हम पै सुजलद्द विपत्तिन कौ बरस्यौ ॥४३॥

हंस छन्द

वांह उठायै । छोहहि छायै ॥
पेम अतोल्यौ । माधव वोल्यौ ॥४४॥

पावकुलक

हाय मालती प्यारी मेरी । कौन कौन विधि सुमरौं तोरी ॥
कहां गई तू मैं नहि जानौं । तो विन हियौ महा अकुलानौ ॥४५॥
वेगि आय दै दरसन प्यारी । क्यौ तैं मेरी सुरति विसारी ॥
हो प्रसन्न अव भरि मौं अंकैं । चूरि डारि मनमत्त्थ अतंकैं ॥
कंकन वद्ध हत्त्थ अरविंदा । तेरौ जो भूपननि अनिन्दा ॥
ताकौ दरसन अति सुखदाई । कव मोकौ ह्वै है अचकाई ॥

हे मकरन्द ! मित्र !! सुखकारी । दुर्लभ इमि मिलिवौ फिरि नारी ॥
अरु को वैसैं नेह निवाहै । मो समान जो मोकौं चाहै ॥
सिरस कुसुम से कोमल अंगनि । सह्यौ मदन कौ दाह कुढंगनि ॥
जन समान जीतव ठहरायौ । ताकौ डर मन मद्धि न आयौ ॥
अरु पुनि कौन गहै इमि आहै । कीनौ अपनौं आप विवाहै ॥
तातें वैसी सब जग मांही । दूजी कहूं रची विधि नांही ॥५०॥

सवैया

वार अनेक हियौ धर कै पुनि होतु नहीं किरचै अचकांही ।
मोह समुद्र समान भयौ अरु चेत रहै किहि हेत वृथांही ॥
देह जरै परिखेह न होय कलेस करै पै हतै विधि नांही ।
और कहा कहियै ससिनाथ सनेह कियौ न उपाधि विसांही ॥५१॥

मालती छन्द

फिर्‌यौ मकरन्द । लहै उर दन्द ॥
रच्यौ यह वैन । रतोपल नैन ॥५२॥

हरिगीत छंद

चहु ओर पांहन पारि तापै विविधि वृक्ष अनंत है ।
लखि मित्र माधव सलिल तामै अमल कमल मिलंत हैं ॥
ससिनाथ मंजुल पुज पुंजनि भ्रमर गुंज करंत हैं ।
पग चंचु चिन्हित पंक हसिनि हंस वहु विहरंत हैं ॥५३॥
फहरानि सौरभ सनी सीतल मंद मंद वयारि है ।
वढ़ि रह्यौ विरह हुतास तो तन ताहि तुरंत निवारि है ॥
सजि कै विवेकहि चित्त अंतर नैकु ह्यां थिर धाइयै ।
मैं परसि ठोढी कहत प्यारे वचन कौं अपनाइयै ॥५४॥

मालती छन्द

इति कहि वात । हियैं अकुलात ॥
इतें उत जाय । भए सु थिराय ॥

तोमर छन्द

अब और विधि मैं याहि । वहिराय हौ वुधि गाहि ॥
मकरन्द नैं तिहिं वार । यह कियौ चित्त विचारि ॥५६॥
उचर्‌यौ फिरयौ परकास । मकरन्द वुद्धि निवास ॥
यह खिली मल्लिय मित्र । ललि नैकुं ताहि विचित्र ॥५७॥

दोहा

इतने में माधव उठ्यौ, आतुरता सों दौरि ।
अंग अंग जालिम जगी, पंचवान की दौरि ॥५८॥

त्रिभंगी छन्द

ढंगनि कौ छंडै हित कौ मंडै सुखनि विहयैं तर्रानौ ।
तिहि ठां नहि वैठ्यौ दुखनि अमैठ्यौ वन में पैठ्यौ अर्रानौ ॥
मालति विनु देखैं छोह विशेषैं माधव भेखैं पियरानौं ।
मकरंद सिखावै को उर लावै तन थहरावै अकुलानौ ॥५६॥

अकुलानौ दपटै तजिकैं कपटै वेलिन लपटै भ्रम छायौ ।
मालति सुधि लहरैं पाइन ठहरैं स्वेदनि विहरै मुरझायौ ॥
कवहूं हित जितवै इत उत चितवै वासर वित्तवै सांवरिया ।
पुनि वुधि विसरावै गिरैं अठावैं औचक आवैं तांवरिया ॥६०॥
तांवरिया भूलैं प्रेम कवूलै तन दुख रूलैं उठि धावै ।
प्यारी दृग टौनैं सुधि करि लौनैं निजु मृग छौनैं गहिलावै ॥
वैनी अनुहारी नागिनि कारी पकरि डरारी नहि डरपै ।
मकरन्द अकेलौ मित्र सुहेलौ जनि दुहेलौ असु अरपै ॥६१॥
अरप्यौ असु चाहैं सहित उछाहै पै दुख थाहैं नहिं पावै ।
मालति अति प्यारी हियैं विहारी नैंकु न न्यारी जो भावै ॥
सो रंच न दरसै दृग तल वरसै फिरि फिरि तरसै हाय कहैं ।
अरु आरंभनि समझि उदंभनि रंभा थंभनि धाय गहै ॥६२॥
गहि कैं मग डगरै विसरैं दगरैं द्रुम के रगरैं नांहि गनैं ।
तन अटके कांटे अम्बर फाटे मन्मथ सांटे खाय घनै ॥
को तियैं मिलावैं हियैं सिरावैं विरह बचावै जल लीनैं ।
माधव यौं उचरैं प्रन कौं संचरै नैंकु न विचरै रस भीनैं ॥६३॥

भीनै विष जानैं पट रस खानैं वस न ठिकानैं विसरानैं ।
निद्रा नहिं नैननि आवै चैननि विलपै वैननि विलखानैं ॥
रसनां तुतरानी पीयै न पानी कथा कहानी को मानै ।
पूछै मकरन्दै निवरि अनन्दै नहिं छर छन्दै पहिचानैं ॥६४॥

पहिचानैं एकै सहित विवेकै अपनी टेकै निर्वाहै ।
जनु मालति आई निकर सुहाई यौ वुधि आई गहि आहै ॥
निजु भुजनु पसारैं मिलन विचारैं सुन्नि निहारै तव हारैं ।
कर उर सौ मारै खाय पछारैं फेरि सम्हारै पग धारैं ॥६५॥

धारैं पग अग मे डगमग मग मै ता विनु जग मै अंधियारौ ।
सुमिरै हिय घातैं पहिली वातैं नैकु सुवातैं न करारौ ॥
मकरन्द सिखावै हियै लगावै अरु ललचावै परचावै ।
नहि तोऊ माधौ छिनु पलु आधौ मन करि साधौ सचु पावै ॥६६॥

दोहा

माधव कौ तिहिं ताल तट, वैठार्यौ फिरि आय ।
तऊ भज्यौ मकरन्द तव, वोल्यौ नेह वढ़ाय ॥६७॥

तोमर छन्द

उन्मत्त तूल असंक । भजि वयौ चल्यौ गति वंक ॥
पुनि लै सु दीह उसास । वोल्यौ फिरौ अनयास ॥६८॥
परसन्न हो मम मित्र । ए नांसि विकल चरित्र ॥
ए वैंन कुंज निहारि । परसै जु सरिता वारि ॥६९॥
जूही प्रफुल्लित और । अरु जाल तरु वहु ठौर ॥
गिरि शृंग कुटज खिलत । अरु घनैं मोर नचन्त ॥७०॥
घन रहे छाय अनन्त । मन हरपि मंडि हसन्त ॥
फूले कदम्ब लसात । मानौ खरे सु जंभात ॥७१॥
अरु कन्दरानि उदार । केतक लसात अपार ॥
अरु औरहू वहु वृक्ष । ते सोभिये परतक्ष ॥७२॥
मकरन्द की ए वात । सुनिकैं विकल ह्वै गात ॥
उचर्‌यौ सुमाधव फेरि । भरि नैन सम्मुख हेरि ॥७३॥
हे मित्र ! यह गिरिभूमि । जो रही फूलनि भूमि ॥
मो पै सु लखिय न जाय । उर मैं रह्यौ दुख छाय ॥७४॥
हे मालती त्रिय हाय । आछैं दियौ विसराय ॥
करुना न आवति मोर । प्रहरै मनोज कठोर ॥७५॥

दोहा

सोक रूप ह्वै सभा मैं, कीनौ नृत्य विशाल ।
कौतुक दर्सयानि के, हियरा भयौ दुशाल ॥७६॥

मालती छन्द

फिर्‌यौ मकरन्द । लहै उर दंद ॥
कह्यौ यह बैन । भरै नल नैन ॥७७॥

सोरठा

माधव की अब आस मेरे मन में नाहिनै ।
याकी दसा प्रकास, निपट अटपटी देखियै ।।७८।।
समय गगन तिन देखि, मूरख की सी भांति पुनि ।
बोल्यौ छोह विशेखि, मालति सौं मकरन्द सों ।।७९।।
अव तिय दया बिसारि तब साहस करि व्याह किय ।
माधव सौ दुख धारि, तो विन प्राननि कौ तजौ ।।८०।।
क्यौ नहि अवहू आय, समाधान कौ करति है ।
सर्वस लियौ चुराय, मैं मार्‌यौ तैनै सखी ।।८१।।

सवैया

आवत रुंध्यौ हियौ अतिही अरु अंगनि में सिथलाई छई है ।
डीठि परै जग सूनौं सवै अरु अन्तर की गति ताप तई है ।।
वूडत मोह समुद्र पर्‌यौ अब नाउन सूझत रूप रई है ।
ज्वाव दियौ निहचै विधि मोहि कहा मैं करौ मति भाजि गई है ।।८२।।

मोहनी छन्द

मोहि कष्ट हुव अतिहीं हिय अकुलाय ।
देव प्रवल है निरदै कछु न वसाय ।।८३।।
मालति नैंन चकोरनि पूरन चंद ।
माधव विरह जलदनि होत सुमन्द ।।८४।।
मो तन तेरी डीठि सु लागति एम ।
चंदन रस की छीटैं ज्यों भरि प्रेम ।।८५।।
अरु तेरो शशि आनन भैंट न दन्द ।
ताहि लखत ही मो हिय बढ़िय अनन्द ।।८६।।
सो तू अब अनसमयै तज्जई प्रान ।
हाय ! मर्‌यौ मैं माधव ह्वै कल कान ।।८७।।
छै माधव के अंगनि उचर्‌यौ फेरि ।
हितू निपट मकरंद सुक्ख निवेरि ।।८८।।
माधव हाय पियारे रंचक वोलि ।
मो तन क्यौं नहि चितवत अंखियनि खोलि ।।८९।।

दोहा

इतने में माधव लह्यौ चेत आपनै चित्त ।
लै उसास बोल्यौ तवै, मकरन्दा तिहि मित्त ।।९०।।

बड़ी चौपाई

सित्त धोये नवल वसन सम जाके अंगनि सोभ सुहाई ।
सो मेरौ मित्र वरसि जलधर नै हित करि लियौ जिवाई ।।
मो वड़े भाग जो बच्यौ भावतौ नित्त महा सुखदाई ।
यौ कहिकै लई उसास हियौ भरि कछुक विपत्ति भुलाई ।।६१।।
इहि औसरही आवेग सहित पुनि माधव उचर्यौ वानी ।
अब काहि विपन के मध्य प्रिया को वात कहौं सुखदानी ।।
एके स्याम जंवू कुंजिन तैं श्रवै असित जल खाग्यौ ।
फिरि चितै उच्च कौ साधु साधु कहि वात कहन पुनि लाग्यौ ।।६२।।
पुनि सहसा उठि ठाड़ौ ह्वै माधव नीचैं नारि नरवायै ।
जुग हाथ जोरि अंजुलि करि जाचन लग्यौ छोह अधिकायै ।।६३।।

दोहा

मैं नाचतु हौं प्रेम सौं, हे भगवान ! जलद्द ।
सुनियौं तुम मेरी विथा, वाढ़ी हियै अनहद्द ।।६४।।

कवित्त

सव दिस डोलत कलोल भरे मेघ तुम,
　　ताप निवरत सलिल वरसाय कैं ।
मालती कहूँन जो रावरे कै डीठि आवै,
　　तव मेरी दसा कहियौ दया कौ सरसाय कैं ।।
तो विन विकल माधौ खान पान अरु,
　　भजि गई नैंननि लैं नींदो अरसाय कैं ।
है अब उपाय एक यही सचुपाय प्यारी,
　　ताहि लै जिवाय मुखचंद दरसाय कै ।।६५।।

सोरठा

सुख पायौ मन मद्धि, माधवनै यह जानिकै ।
मो वानी हित सिद्धि, मानी जलधर नैं अवैं ।।६६।।
अरे चले तजि थांन, एऊ अपनै काज कौं ।
अन्त समेत सयांन हौऊ जाय निहारि कै ।।६७।।
इत उत कौ डग धारि, सभा मध्य माधव फिरयौ ।
तव मकरन्द निहारि, वोल्यौ लखि उन्माद गति ।।६८।।
कैसौ माधव चन्द, ग्रस्यौ राहु उन्माद नैं ।
भगवति वुधि विलन्द, हमरी रक्षा कीजियै ।।६९।।

हंस छन्द

माधव बोल्यौ । प्रेम अतोल्यौ ॥
छोहहि छायौ । सीस नवायौ ॥१००॥

सवैया

लौद के वृक्षनि देह की दीपनि लोचन चारु कुरंगनि छीनैं ।
चौरि लियौ नइवौ नव वेलनि जानि अकेली विनोद विहीनैं ॥
श्री शशिनाथ की सौंह मतंगनि सुन्दरि की गति आनंद भीनै ।
वांटि लियौ अंग अंग सु यौ मन भावती के अपनौ मत कीनै ॥१०१

दोहा

भली करी सो करी विधि, अब मैं नग वन जीव ।
तिन कौ हित सौं पूछिहौ, तीय के भेद अतीव ॥१०२॥
यौ मन में कहिकैं विकल, पूछन लाग्यौ भेद ।
क्योंहू करि आवैं नही, परिपूरन निर्वेद ॥१०३॥

कवित्त

कंचन की वेलि सी अकेली अलवेली वैस,
वौनैं कुच लौनैं नैंन चैन उपराजई ।
व्याह के समै कौ कर कंकन विराजे अरु,
मनिमय भूपन वसन छवि छाजई ॥
सोमनाथ की सौ जाके आनंद अमंद आगैं,
कोरि कोरि पून्यौ के मयंक लखि लाजई ॥
ऐसी मनभावती कहूँ जौ तुम देखी होय,
दीजियै वताय तौ अनन्त सुख साजई ॥१०४॥

हंस छन्द

काहि अगाऊं । सुक्ख सुनाऊं ॥
कौन वचावै । काम सतावै ॥१०५॥

सवैया

नव मोरनी ओर निहारि कुहक्कत नच्चत मोर मनोज भरे ।
अरु उत्तम कोर चकोरनि कौ ललचावत नैन नचाय खरे ॥
मुख पोंछति चुंवति वामनि कौ पुनि लंगर लंगुर औ वनरे ।
अव पूछियै काहि उछाहनि सौं इत एऊ सवै हित फन्द परे ॥१०६॥

बड़ी चौपाई

यह दोवौ गोल कपोल प्रिया के द्विरद सुंडि सौं छीवैं ।
अरु अध मूदी अंखियनि तस नीकी रद खुजाइ रस पीवैं ॥
पुनि कोऊ नाल समेति कमल कौ लै उखारि अतुरायें ।
निज प्यारी के मुख मद्धि गहावै निपट मोद सौं छायें ॥१०७॥

दोहा

अति उतंग बन सघन कौ यह धनि गजराज ।
सग आपनी प्रिया के, विलसत सुक्ख समाज ॥१०८॥
आगैं चलि कैं फेरि इकदन्ती लख्यौ उतंग ।
ताकौ पुनि वर्नन लग्यौ माधव विगत उमंग ॥१०९॥

पावकुलक

इथनी के दुख निपट दुखारी । लखियै यह दन्ती प्रन भारी ॥
घन की धुनि सुनि गुजत नाही । भूख प्यास भूल्यौ मन मांही ॥११०॥
मद उतार ह्वै गयौ विचारौ । लखियै दुर्वल डोल डरारौ ॥
गुज करत नहि पुज अलिन्दा । दरसै सून्य भसुंड अनिन्दा ॥१११॥
यह कहि और ठौर पुनि देख्यौ । हियैं भावती विरह विशेख्यौ ॥
अरु वोल्यौ पुनि या विधि वानी । निपट अयानप सौ लपटानी ॥११२॥
हतिही जाति रही वुधि मेरी । मूरखता हिय वढ़ी घनेरी ॥
वचन मित्र सौ कहिवे लायक । सु मैं पसुनि सौ कहत सुभायक ॥११३॥
हाय मित्र मकरन्द पियारे । यौ कहि औरौं वचन उचारै ॥
मो पैं नही कछू वनि आयौ । प्रिया विरह नैं अति वौरायौ ॥११४॥
कवहु मित्र मकरन्दे लैकैं । वैठ्यौ नही इकन्तौ ह्वै कैं ॥
मृग तृष्णा रूपी या सुक्खैं । है धिक्कार अतित पुरक्खैं ॥११५॥
ए सुनि कैं माधव की वातैं । प्रेम जाल जकरयौ अकुलातैं ॥
वोल्यौ परम सखा मकरन्दा । मन्द मन्द विधि वुद्धि विलन्दा ॥११६॥
देख्यौ याको नेह अपारौ । कैसो है मौ सौ उजियारौ ॥
जऊ विरह मैं व्याकुल ठाढ़ौ । तऊ मोहि सुमरै हित गाढ़ौ ॥११७॥
मोहि आपनैं निकट न जानतु । मन आवै सो वचन वखानतु ॥
तातें आपौ याही जतैयैं । और वात नहिं उर में लैयैं ॥११८॥
यौ विचारि माधव के आगैं । ठाढ़ौ ह्वै कैं अतिहित पागै ॥
निजु बोल्यौ मकरन्द प्रवीनौं । करिकैं वचन प्रेम रस भीनौ ॥११९॥
मै यह तेरौ सांचै चेरौ । जोरैं कर तजि और वखेरौ ॥
ठाढ़ौ हौ तुव आगै भाई । विधि सौं मेरी कछु न वसाई ॥१२०॥

दोहा

यह सुनि कैं मकरन्द की, अपनाइत की वात ।
वोल्यौ माधव प्रेम कौं, हियै सिन्धु उफनात ॥१२१॥

पावकुलक छन्द

हाय मित्र ! मिलि मोहि पियारे । समाधान मो करि गुन भारे ॥
गई मालती भये निरासा । फट्यौ जात हिय लेत उसासा ॥१२२॥

सोरठा

यह सुनिकै मकरन्द, दसा मित्र की देखि पुनि ।
तजिकै सव छरछन्द, वोल्यौ हरपहिं पाय कै ॥१२३॥
समाधान तुव मित्र, अव हौं करिहौं भली विधि ।
धीरज राखि विचित्र, दुख हरता समरत्थ हरि ॥१२४॥
करुना भरिकैं वैन, हितकारी मकरन्द पुनि ।
उचर्यौ मंडि अचैन, निपट वड़ौ यह दुख है ॥

सवैया

ससिनाथ कहा कहिये यह वात मो अंक में माधव आवत ही ।
तत्काल ही मूर्छा पाय कुभाच अचैत भयौ तन तावत ही ॥
अव याके कहा जीय की कछु आस अनेक उपाव उपावत ही ।
मन मेरौ गयौ थकि सो अतिही लखि कैं मुख कै पियरावत ही ॥१२६॥
तुव नेह कौ देह मैं दाह वढ़ै अंग अंगनि में थहरानि भई ।
विन कारन तो पै विपत्ति निहारि सवै विसर्‌यौ भय चित्त छई ॥
छिनवेई हुते सुभ तोहि सचेत विलोकत है जव मोद मई ।
दिन रात न जानीय ते कित जात कियै वतरानि नई पै नई ॥१२७॥
अव तो मोहि भारी सरीर लगै अरु जीवन वज्र कौ नूल भयौ ।
दिसि औ विदिसा सव सूली समान सु डीठि परै अंधियार छयौ ॥
नहिं इन्द्रिय काज करै अपनौ रसना जपनौ तुव नाम लयौ ।
छिन हू छिन वीतत है दुख सौं निरखै यह तेरौ हवाल नयौ ॥१२८॥

प्लवंग छन्द

मन मैं चिन्तौ यौं सुत वै मकरन्द है ।
प्रीति रीति निर्वाहक बुद्धि विलन्द है ॥
मित्र मरन की साखि हौउगौ मैं कहा ।
यातैं या गिरि शृंग चढ़ौगो डहडहा ॥१२९॥

तह तै गिरिहौं छिप्र संक विसराय कै ।
मित्र मरन तें अग्ग पहुच्यौं जाय कै ॥
फिर्‌यौ सभा के मद्‌ध इतेक विचारिकै ।
करुना भरि लखि फेरि उचार्‌यौ हारिकैं ॥
हाय कष्ट है कष्ट जु याकौ कमल सौ ।
कोमल अमल शरीर चंद तैं अमल सौ ॥
मोकौं तृप्ति न होती जासौं भेंट तैं ।
और मालती लखित हुती दुख मेट तैं ॥
ताकौं है यह दुख अचंभौ अत्य है ।
बालकपन में हुतौ गुनी यह सत्य है ॥
ताकी यह गति होति कहा अब कीजियै ।
पर्‌यौ राहु मुख मध्य चन्द लखि लीजियै ॥
सजल मेघ ही लख्यौ उडायैं ईरनैं ।
सफल वृथा ही नास्यौ दवा गंभीर नैं ॥
जगत सिरोमनि ह्वै तू पावतु काल है ।
अब तातैं तोकौं भेंटत मित्र विहाल है ॥१३३॥

छप्पै

मिलिकैं वोल्यौं हाय ! विमल विद्या निधि प्यारे ।
गुन वृन्दन के गुरू मालती प्रान अधारे ॥
कामन्दकि मकरन्द दुहुनि के आनंद कन्दा ।
अन्त सवैं को मिलन मोहि दै तजि दुख फन्दा ॥
अव मेरौ जीवन जगत मै माधव जानि न एक छिन ।
अरु मैंनैं माकौ दूधहू कवहूं पियौ न तोहि विन ॥१३४॥

दोहा

सो तू चाहत है पियौ मित्र ! तिलंजलि एक ।
माधव यह अब कौन विधि वनि है तजैं विवेक ॥१३५॥

सवैया

माधव की पलकैं न लगैं लखियै मुखचंद महा मुर्झानौं ।
वैननि मालती नाम हुतौ जिय वूडि गयैं सवहू विसरानौं ॥
नैंकहू हाथ न पाय हले वढ़ि स्वेद सरीर सवैं सिहलानौं ।
नेम के पेचन तैं सुरझ्यौ परि प्रेम के पेचनि में उरझानौ ॥१३६॥

हरिगीत

धरि हाथ छाती लखै ताती गति सिराती जानि कै ।
तजि लोक व्रीड़ैं करनि मींड़ैं हुवय पीडै हानि कै ॥
लखि यौ विचित्रैं परम मित्रैं हित चरित्रैं पारतौ ।
जनु डस्यौ रिसुवनि अहि कसुवनि चल्यौ अमुवनि ढारतौ ॥१३७॥

मकरन्द तरसतु अश्रु वर्संतु सोक सरसतु चित्त मैं ।
गिरि परन ठान्यौं मरन मान्यौं सांचु आन्यौं मित्त मैं ॥
तिहि मेरु श्रृंगनि चढ़ि कुढंगनि सिथल अंगनि चातुरौ ।
माधवहि टेर्‌यौ गगन हेर्‌यो पगन फेर्‌यौ आतुरौ ॥१३८॥

सोरठा

उठ्यौ सभा के मद्धि करुना भरि इत उत फिरयौ ।
अपनौ औसर लद्धि, मेरु पहुँचि वोल्यौ सु यौं ॥१३९॥

काव्य

नदी पाटलावती भगवती वहति यही है ।
मैं यह जाचतु तोहि मांनियौ वात सही है ॥
मेरो अरु मो मित्र जु माधव है अव ताकौ ।
दूजौ संगहि जनम लखावन मोद कला कौ ॥१४०॥

वेर वेर यह भापि गिरनि गिरि पै ते लाग्यौ ।
औरन सों निर्मोह मित्र के हित सौ पाग्यौ ॥
तौलौं सौदागिनि खोलि पट वाहिर आई ।
अर्वराय क वात उच्चरी यह मन भाई ॥१४१॥
ए वच्चा मकरन्द करै मति साहस ऐसौ ।
यह सुनिकैं मकरन्द देखि वोल्यौ सु अनेसौ ॥
माता तू है कौन मोहि जो वरजै ठाढ़ी ।
मनौं हेम की लता तपस्या मडित गाढ़ी ॥१४२॥
सौदामिनि उच्चरी फेरि वानि मधुराऐं ।
रे! तू है मकरन्द विकल सुधि वुद्धि भुलाऐं ॥
पुनि वोल्यौ मकरन्द मन्दभागी हौं सोई ।
छोड़ि छोड़ि मोहत्थ मित्र को मिलिवो होई ॥१४३॥
यह सुनि कै वतरानि फेरि उचरी सौदामिनि ।
भस्म भाल में लगी देह दमकैं जनु दामिनि ॥

रे ! मैं जोगेश्वरी पतौ मालति कौ लाई ।
है वह जीवत ठीक जांनि जिन रंच झुठाई ॥१४४॥
वकुल फूल की माल देखि यह छवि लपटानी ।
निपट डहडही वनी नहीं नेकौ कुमिलानी ॥
यह सुनिकै मकरन्द लख्यौ पहचानी माला ।
फेरि उच्चरो अरी ! जियति है मालति वाला ॥१४५॥
यह सुनि सौदामिनि उच्चरी फेरि सयानी ।
है जीवति निर्धार सत्य तोसौं वतरानी ॥
कछु अनिष्ठ माधवै भयौ रे ! कहा कह्यौ किनि ।
कम्पतु मेरौ हियौ मरै तू जातै भरि घनि ॥१४६॥
पुनि वोल्यौ मकरन्द सुनौ जोगेश्वरि अव्वै ।
जानि मर्‌यौ सो ताहि इतै आयौ तजि सव्वै ॥
तातें वाकौं वेगि चलौ हम दोऊ देखैं ।
यौं कहि इत उत फिरे सभा में प्रेम विशेखैं ॥१४७॥

सोरठा

मानौं पहुंचे जाय, दोऊ माधव के निकट ।
लखि माधवै सुभाय, तव वोल्यौ मकरन्द निजु ॥१४८॥
माधव भयो सचेत, आहा ! दैव दयाहि तै ।
लोचन सोभ निकेत, खुलत मुदत पलकैं जुगल ॥
सौदामिनिहू देखि वोली यौं लखि कैं समौ ।
मालति बुद्धि विशेखि, कहै दुवौ हो भांति तिहिं ॥१५०॥

मधुभार छन्द

लैकै उसास । माधव प्रकास ॥
इमि कह्यौ वैन । पूरित कुचैन ॥
मोकों छुहाय । थाहू जगाय ॥
दीनौं उताल । कीनौं निहाल ॥१५२॥

दोहा

पै निहचै यह वात मैं, जांनीं अपने चित्त ।
मेह बूंद जुत पवन तैं, प्रगट्यौ आपु चरित्त ॥१५३॥

सवैया

हे पुरवाई समीक बडे तव नीरद पुजनि कैं घुमडैया ।
चातक और मयूरन के इर अंतर के परताप उड़ैया ॥

केतक के वन कौ अति पोषि संजोगनि कौं सुख सिन्धु वढ़ैया ।
मूर्छा में तें जगाय कठोर दियौ दुख मोहि क्यौं धीर छुड़ैया ॥१४४॥

सोरठा

पुनि वोल्यौ मकरन्द, जगत प्रान या पवन तैं ।
भली करी तजि छन्द, माधव कौं जु सचेत किय ॥
माधव वोल्यौ फेरि, अंखियनि अंवर हेरिकै ।
तौहू जाचतु टेरि, देव रूप ए ! रे ! पवन ॥

सवैया

फूले कदम्ब सुगंध समेत समीर मो प्रांननि कौं संग लीनैं ।
जाह तहां नव मालति है नव चम्पक वेलि सी केलि विहीनैं ॥
कै मिलि वा सह मो कंह भेटि कहौ ससिनाथ की सौंह नदीनैं ।
मेरी तवै निहचै गति होय न खोय वृथा समयौ परवीनैं ॥१५७॥

दोहा

यौ कहि माधव जोरि कर, लाग्यौ करन प्रनाम ।
मन मैं तव मकरन्द नै, यह वच कह्यौ ललाम ॥
जीयत मालति कौ पतौ, दैवै कौं छिन एह ।
यौं विचारि कैं माल सो, डारि दई भरि नेह ॥१५६॥

पावकुलक छन्द

माधव तक्षन उचरयौ वैना । बड़ौ अचम्भौ है सुख दैना ॥
मन्मथ वन मै मै सु बनाई । वकुल कुसम की माल सुहाई ॥१६०॥
मालति हिय पै लोटन वारी । कैसैं ह्यां आई सुखकारी ॥
है यह वही किधौं यह औरीं । यह संदेह कछुक हिय औरौं ॥
निरखत याही प्रीति सरसानीं । तातैं ठीक वही मैं जानी ॥
विषम वनी ही तन मन हारैं । मालति कौ मुखचन्द निहारैं ॥
लवंगिका कौ मोद बढ़ावनि । सुरति मालती की सरसावनि ॥
यौं कहिकैं उन्माद समानौ । ढाढौ ह्वै वोल्यौ बौरानौं ॥
हे प्यारी मालति तू देखति । मेरी नहीं दया अव रेखति ॥
यौं कहिकैं उर मैं अनखानौ । माधव पुनि वोल्यौ अनस्यानौं ॥१६४॥

सवैया

जात है मान कढ़ै से वढैं दुख रूंधि कैं और हियौ दर कैसौ ।
छावत सौ अंखियान तमो गुण, अंग अनंग सन्यौ भर कैसौ ॥

हौं न कठौर उतावलि साजि नही उपहास समौ घर कैसौ ।
मो अव नैन चकोरन कौं सुख दै मुख ऊगि निसाकर जैसौं ॥१६५॥

दोहा

यौं कहि चारौं ओर कौं, सजल दृगनि सौं हेरि ।
ह्यां कित प्यारी भाषियौ, वोल्यौ माधव फेरि ॥१६६॥
वकुल माल तू प्रिया की उपकारिनी समर्थ ।
भली करी आई इहां, मैटन विरह अनर्थ ॥

सवैया

मो मिलिवो के निमत्त हतौ जब मालती के हिय दाह दुहेलौं ।
ता समैं पै तू रही जियदानि औ कै चतुरानन आपु अकेलौ ॥
मेरे मिलाप समान प्रिया कंह तौ मिलिवौ है निदान सुहेलौ ।
तो विन याके हिये कौ विषाद सु होयगौ कौंन सी भांति पछैलौं ॥१६८॥

सोरठा

यौं कहि करुना धारि, फिरि सुभाव मालतीय के ।
कहन लग्यौ प्रन पारि, माधव न्हायौ प्रेम नद ॥

सवैया

भांवती कंठ तैं तोहि घरी न विसारत ही इतनौं हिय हेत भौ ।
ताहि मनम्मथ कौं सरसाय कैं तेरौ मिलाप महा सुख देत भौ ॥
सो सुधि आवत है अब मोहि सरीर थक्यौ दुचिताई निकेत भौ ।
यौं कहि कैं वकुलावलि कौं उर लाय कैं माधव फेरि अचेत भौ ॥१७०॥

दोहा

निकट आय पंखा करत, फिर वोल्यौ मकरन्द ।
सावधान हो मित्र तू, टरिजै है दुख दन्द ॥
यौं सुनि माधव उच्चर्‌यौ, लैकै उच्च उसास ।
तोहि कछु दरसातु है, कौतिक मित्र प्रकास ॥
वस्तु मालती की कछू पाई है मो मित्र ।
सो तेरे मन में कहा, आवति परम विचित्र ॥१७३॥

सोरठा

पुनि मकरन्द उदार वोल्यौ माधव मित्र सौं ।
इहि जोगेस्वरि यार ! पतो मालती कौ दियौ ॥१७४॥

वड़ी चौपाई

यह सुनि कैं दीन रूप ह्वै माधव हाथ जोरि कैं वोल्यौ ।
हे जोगेश्वरि परसन्न होउ तुम लखियै धर्म अतोल्यौ ॥
कह जीवति है मेरी प्यारी मालति नाम सुहाई ।
पुनि सौदामिनि सुनिकैं यह वोली है जीवति दुवराई ॥१७५॥
सुनि माधव अरु मकरन्द उच्चरे सावधान ह्वै तासौं ।
जो ऐसैं हैं तो समाचार कहि हम सुख पावैं जासौं ॥
तव सौदामिनि नैं कही कराला देनी के मठ आगैं ।
इहं माधव नैं अग्घोरघंट कौं मार्यौ क्रुद्धहि पागैं ॥
यह वात सुनत ही माधव वोल्यौ मौंन गह्यौ हम जानीं ।
तव वोलि उठ्यौ मकरन्द मित्र कहि है यह कहा कहानी ॥
पुनि यह सुनि माधव नैं मकरन्दै इतनी वात जताई ।
यह सव कपाल कुण्डला नैं निज करी वात मन भाई ॥
तहं सौदामिनि सौं फेरि उच्चर्यौ सो मकरन्द सयानौं ।
यह ऐसैं ही है वात कहतु हौं ज्यौं माधव मर्दानौं ॥
पुनि सौदामिनि सुनि कैं यौं वोली तप अरु सत्य सयानी ।
है ऐसैं ही ज्यौं कहतु पुत्र मो माधव मधुरी वानी ॥१७८॥

मोहनी छन्द

यह सुनि कैं मकरन्दा वोल्यौ हाय ।
वड़ौ कष्ट हुव विधि सौं कछू न वसाय ॥१७९॥

कवित्त

सरद के चन्द की अमन्द दुति चन्द्रिका,
सुकुमुद के वृन्दनि के मध्य गुन पाई ही ।
सोमनाथ कहै और कहियै कहा लौं वातु,
सो तो भली भई सव ही के मन भाई ही ॥
फिरि कौन कीनी चतुराई चतुरानन,
सुविधि ऐसी कहा मन आई ही ।
ताहि असमय जो अति सघन घटानि नीच
छवि निदराई कछू कहा दुखदाई ही ॥१८०॥

मोहनी छन्द

फिरि वोल्यौ सो माधव मालति हाय ।
वड़े दुख मधि प्यारी तू अकुलाय ॥१८१॥

नाराच

जवै कपाल कुण्डला गही सुतू उताल ही ।
भयौ हवाल होयगौ कहा सुतौ अकाल ही ।।
कराल धूमकेतु की हती कला मयंक की ।
तिहि समान होयगी भई भरी अतंक की ।।१८२।।

हे ! कपाल कुण्डले ! मालति विधि नें हित करि ।
आदर लाय करंची त्रिपुर की सुन्दरता भरि ।।
तुव पूतनां भाव आपु पति पायौ चाहइ ।
क्रूर वुद्धि इमि प्रगटि पाप कै सिन्धुहि गाहइ ।।
जे फूल सीस पर धरि हरषि नर नारी सोभा लहैं ।
नहिं तिन्हैं मुसल सौं कूटिवौ उचित यही स्यानैं कहैं ।।१८३।।

पावकुलक

माधव सौं बोली सौदामिनि । चुप करि लह तौई निजु कामिनि ।।
जु मैं रक्षि नहिं वासौं लरती । तौ पापिनि मन भायौ करती ।।१८४।।

पुनि माधव मकरन्द सयानैं । दोऊ यौं वोले सुख सानैं ।।
कौन हमारी तू हितकारी । जिनि यह दुख हर वात उचारी ।।
सौदामिनि पुनि बोली बैनां । जानोगे आगे सुख दैनां ।।
यह कहि ठाढ़ी ह्वै पुनि बोली । जोग सिद्धि के मद्धि अतोली ।।१८६।।

देखौ गुरू प्रसाद तैं अव्वै । चाह तुम्हारी करिहौं सव्वै ।।
मंत्र जंत्र तंत्रनि के बल सौं । और जोग की जुगत अमल सौं ।।
यौ कहि माधव को संग लीनैं । पर्दा ओट दुरी सुख भीनैं ।।
श्री पर्वत पै पहुँची आछैं । मालति सौं मिलि यो प्रन काछैं ।।१८८।।

यह कोतुक लखि कै मकरन्दा । पुनि वोल्यौ यौ विगत अनन्दा ।।
वडौ आचिरज भयौ अचानिक । अब कासौं कहियै यह बानिक ।।
चमकि तडकि सो हगनि मुदै कैं । गयौ वेगिही जोति वितैकैं ।।
निरखि इतै उत फिरि भय भीज्यौ । वोल्यौ इमि उर अन्तर खीज्यौ ।।
नहीं मित्र माधव ह्यां मेरौ । नयौ भयौ यह कहा बखेरौ ।।
छिनकु आपनैं चित्त विचारौ । मन तैं मित्र टरै नहिं टार्यौ ।।
घेरि तर्क मन में उपराजी । जोगेस्वरि नैं ह्वै कै राजी ।।
निजु प्रभाव कछु परगट कीनौं । पै मेरौ मन भयौ मलीनौं ।।
अर्थ भयौ कि अनर्थ अपारौ । हर्ष शोक सौं भरिकैं भारौ ।।
सो विरतन्त फेरि सुधि आओै । जातें हौं हमनैं दुख पायौ ।।१९३।।

दोहा

तातैं ह्वां करिहौ कहा, चलियै तैं हीं थान ।
जहां वाटिका मध्य सो, संगी है बुधिवान ॥
कामदायनि सौं जाय कैं, कही यै सिगरी वात ।
यौं कहि पर्दा में दुर्‌यौ लहिकैं अपनी घात ॥१९५॥
सौदामनि इहि अंक में आय सुदरसन दीन ।
समाचार मालतीय के कहै मोद रस लीन ॥१९६॥

हरिगीत

वदनेस नंद प्रताप जाकौ तेज दिनमनि तूल है ।
अब करन सौ ताके वहादुर कुंवर आनंद मूल है ॥
तिहि हित्त कवि ससिनाथ नै रच्यौ विचारि निसक है ।
माधव विनोद सु ग्रन्थ कौ यह भयौ नवमौं अंक है ॥१९७॥

इति श्री माथुर चतुर्वेद मिश्र सोमनाथ शर्मा कवि विरचिते माधव विनोद नाटके सौदामिनि दर्शनम् नाम नवमोङ्कः ॥९॥

दशमोऽङ्कः

दोहा

कामंदानि मदयन्तिका अरु लवंगिका नाम ।
सभा मद्धि पट टारिकैं, आईं दुखित उदाम ॥१॥

काव्य छन्द

कामन्दकि उच्चरी हाय मालति सुकुमारी ।
मो गोदी के मध्य सोभ सरसावन वारी ॥
अपनौं बोल सुनाय मोहि तू कहां पधारी ।
तुव वातें मौंहनी मोहि सुधि आवत भारी ॥२॥
बालपने के मद्धि रोवनैं हंसनैं तेरे ।
छोटे छोटे दन्त कुन्द कलिका से नेरे ॥
निकसि आवते रुचित और तुतरी वतरावनि ।
सुधि आवति है निपट और तुव बांह हलावनि ॥३॥

दोहा

लवंगिका मदयन्तिका, वोली दोऊ हाय ।
माधव कौं लै नाम कौं, व्याकुलता दरसाय ॥४॥
मालति सुन्दरि कित गई, कहा भयौ यह ख्याल ।
हे माधव तोकौं भयौ, दुख यह निपट विसाल ॥५॥

सोरठा

कामन्दकी पुकारि, वोली अति अकुलाय कै ।
माधव मालति नारि, हाय कठिन तुम कौं वनी ॥
तुम दुहूनि अनुराग ऐसी विधि परगट भयौ ।
ज्यौं द्रुमलता सभाग, मिलि समीर वल टूटई ॥७॥

तोमर छन्द

करिकै अनन्त विलाप । प्रगटाइयौ हित छाप ।
मन मै पगी परताप । उचरी लवंगिय आप ॥८॥

सवैया

रे ! हिय वज्र !! हजारनहूतें कठोरता तोमें रही सरसाय कैं ।
ठौरहि ठौर नही दरक्यौ जु टिक्यौ इमि सोक समुद्र पचाय कैं ॥

नैननि तैं अंसुवा ढरकाय औ वैननि यौं सवही कौं सुनाय कैं ।
कूटि दुहूं करसौं छतिया सुलवंगिय भू मैं गिरी भहराय कैं ॥९॥

मुक्तादाम छंद

तवै मदयन्तिका वोली वैन । भरे जल सौं नव नीरज नैन ॥
अरी छिन एक सु धीरज राखि । विलोकि कहा अव होतभिलाखि ॥१०॥
लवंगिय यौं सुनिकैं वतरानि । उचारीय फेरि भई दुख खानि ॥
अरी मदयन्तिय मैं इहि वार । कहा सु करौं नहिं नैकु करार ॥११॥
हियौ अति वज्र समान कठोर । वस्यौ जिय ता मधि पापीय मोर ।
नही निकसै लहि औसर एह । सरीर जऊ पजरै भरि नेह ॥
इते मधि कामद सिद्धिनि फेरि । उचारीय सीस जटानि विखेरि ॥
अरी सुन मालति प्रान अधार । लवंगिय सौं तुव ही अति प्यार ॥
रही नित आरही तें तुव संग । भयौ कवहूं न कलेस प्रसंग ॥
गई अव तू ताहि इकन्त । दया उपजै नहिं तोहि असन्त ॥
न तो विनि सोभति है इहि भांति । वुझी जिमि वत्ति वरज्जित कांति ॥
अरी अरू छोडति मारति मोहि । कहा कहि कारन पूछति तोहि ॥१५॥
उठाइ सु आंचर में भरकाई । वढ़ाय लिये तुव अंग सुभाइ ॥
पढ़ाइय पुत्तलि ज्यौं सव रीति । प्रवीन करी अतिहि लहि प्रीति ॥१६॥
फिर्यौ तुव लायक सुन्दर कंत । विवाहिय ताहि लखै गुनवंत ॥
इतौ थरु तो सह तेरीय माय । कर्यौ नहिं मैं जु कर्यौ हुलसाय ॥
सुतोहि न मो तजिवौ न उचित्त । विचारि लहै अपनै किनि चित्त ॥
इतौ कहि सिद्धिनि सो तिहि काल । भई तन औ मन मद्धि विहाल ॥
उचारीय कामद फेरि दुख्याय । महा अन्तर छोह मढ़ाय ॥
रहयौ अभिलाप इतौ मम प्रान । लख्यौ नहिं सो विधि है वलवान ॥१९॥

सवैया

मालति हाय गई कित तू अव कंचन वेलि समान सुवेखी ।
वात रही यह मन मद्धि सु पीर नहीं चतुरानन लेखी ॥
सीस सौं लागी पिसी सरस्यौं मुसक्यात विलोकत नेह विशेखी ।
आपनैं पूत ही गोद में राखि उरोज को दूध न प्यावत देखी ॥२०॥

दोहा

वोली आप लवंगिका कामदानि सौं फेरि ।
भग्वति होउ प्रसन्न तुम दया दृगनि सौं हेरि ॥

मै अव अपनै प्रान कों क्यौं हू राखि सकौ न ।
तातैं चट गिरि शृंग तें, गिरि मरिहौ गहि मौन ॥२२॥

सोरठा

तातैं मोहि असीस, भग्वति तुम अव देहु यह ।
वासौं विस्त्रे वीस, और जन्महू में मिल्यौ ॥२३॥
कामदानि यह वात, सुनि कै वहुर्यौ उच्चरी ।
लवंगिके मृदु गात, सुनि मैंहू जीऊं नहीं ॥
मेरौ तेरो प्रेम, है समान मालतीय सों ।
तातैं कीनौ नेम, हौंउ गिरि है मेरु तैं ॥
जो कर्मन के खोट, ह्वै है नहीं मिलाप हू ।
तउ वियोग की चोट, प्रान तजै सियराय है ॥२६॥

तोमर छन्द

कामन्दकी कौ वैन । यह सु लवंगिय ऐन ॥
उचरी तवै इहि भाय । भग्वति सों समुझाय ॥२७॥
जो कहौ तुम अपनाय । सो करैं हम अतुराय ॥
यह भाषि तीनौं नारि । ठाढ़ी भईं डर डारि ॥
तिहिं समैं कामद फेरि । उचरी संयान वखेरि ॥
सुकुमारि हे मदयन्ति । रसखानि गुन की पन्ति ॥
मदयन्तिका यह वानि । सुनि कैं सयान पढानि ॥
उचरी समौं पहचानि । भग्वती सौं हित मांनि ॥
तुम कहा अज्ञा आप । मो सौं करो लहि ताप ॥
मैं चलहुंगी तुव अग्ग । गिरि तैं गिरनि लखि मग्ग ॥
यह सुनि लवंगिय तव्व । उच्चरीय आयु सुगव्व ॥
मदयन्तिका तन देखि । उर में कछू रिस रेखि ॥
अब रहौ तुम इहि ठार । ह्वै कै प्रसन्न अपार ॥
लैहौ कहा तजि प्रान । विसरौ हमैं प्रभु आनं ॥३३॥
जव यौं लवंगिय वाम । वोली कुवैन उदाम ॥
मदयन्तिका रिस छाय । वोली तवै अनखाय ॥३४॥
चलि दूर तू उत जाह । जानैं न वचन सलाह ॥
मैं हौ कहा बस तोर । जो कहति बात कटोर ॥
कामन्दकी अकुलाति । वोली वहुरि इहिं भांति ॥
मति यौं कहै अरसाय । मरि है यहू समुदाय ॥३६॥

दोहा

मदन्ती नैं चित्त मै, वच यौं कह्यौ ललाम ।
तो कौं मेरे अंस के, है मकरन्द प्रनाम ॥३७॥
तीनौं पर्वत शृंग पै, पहुँची जाय उताल ।
यौं उर मैं पहिचानि कै, लखियै नृत्य रसाल ॥३८॥

सोरठा

पुनि लवंगिका नारि, बोली पर्वत शृंग चढ़ि ।
हे भग्वति निर्धारि, कौतुक यह अद्भुत लखौं ॥३९॥
नदी मधुमती नाम, या पर्वत के कूल ही ।
मिली बहति अभिराम, उठत तरंगै तरल अति ॥
यह सुनि कामद फेरि, बोली दुहुंनि सुनाय कैं ।
झगरौ सबै निवेरि, गिरियै अब या मेरु तैं ॥
सुनि कैं यह बतरानि, मरिबे को उद्दत भई ।
राखे हिय हित सांनि, चूरि करी चिंता सकल ॥४२॥

दोहा

इहि औसर नैपथ्य में, भयौ अचानक सब्द ।
कहिये कह सुनाय कैं, हुव अचरज वेहद्द ॥४३॥
भाई कोऊ तेज इक, आंखिनि कौं झपकाय ।
सांत्ति ह्वै गयौ तुरत ही, रह्यौ तमोगुन छाय ॥४४॥
कामंदनि अवलोकि कैं, मेरू शृंगतैं फेरि ।
बोलि उठी अकुलाय कैं, दुहुंन दया सौं हेरि ॥४५॥
कछु बच्चा मकरन्द सौं, दौरौ आवत इत्त ।
कहा जानियैं है कहा, बात अहित्त कहित्त ॥४६॥
इहि औसर पट टारिकैं, सभा मद्धि मकरन्द ।
कढ़ि आयौ छवि सौं छयौ, प्रगटा वनि नट छन्द ॥४७॥

सोरठा

यौं बोल्यौ अतुराय, पुनि मकरन्द सुहावनौं ।
जोगेश्वरि नैं आय, अति महिमा परगट करी ॥४८॥
पुनि नैपथ्य मझारि, और सब्द वह प्रगट हुव ।
कहा हौन है हारि यौगन कौं दुःसह समय ॥४९॥
सुनि मालति को नास, भूरिवित्त-नृिभु जरन कौं ।
स्वर्न विन्दु सिव पास, सव सुख तजि कैं जातु है ॥५०॥

हम अब मारे जात, याही के जियत हैं।
यह व्यौरौ अवदात, पद्मपुरी में जानियैं ।।५१।।

काव्य छंद

मदयन्तिका लवंगीय वोली औसर लखि कें।
माधव अरु मालतीय गए दोऊ सुख नखि कें ।।
वुरी भई यह वात निपट ही दुख अधिकायौ।
विधि सौं कहा वसाय करै सो निजु मन भायौ ।।५२।।
कामन्दकि मकरन्द इते में दोऊ वोले।
देखौ अव यह वात कहा धौं भई कलोले ।।
असि लगि वोऊ और छिरकि वौ चन्दन तन में।
और वरसिवौ अग्नि सुधा ह्वै वौ पुनि मन में ।।५३।।

दोहा

फेरि सव्द नपथ्य मैं, भयौ अचानक एह।
कौतुक वारे कान दैं, सुनन लगै भरि नेह ।।५४।।

काव्य छंद

हाय! तात! थिर दाह कमल मुख तुव हौ देखति।
अह अपनी करतूति आपनैं उर अव देखिति ।।
दीपक जम्बूदीप मरै तू मेरे काजैं।
मैं खोटी नैं त्याग कर्‌यौ तेरौ तजि लाजैं ।।५५।।

तोमर छंद

यह सद्द करुण अपार। गुनियैं अकाल अभार ।।
नैपथ्य के मिस मित्र। वन्यौ प्रकास विचित्र ।।५६।।

पावकुलक छन्द

हे पुत्री! कामद यौ बोली। तू वीय जन्म लही अनमोली ।।
अरु अनर्थ दूजौ यह लेख्यौ। उर अन्तर अति खेद विशेख्यौ ।।५७।।
जैसैं चंदकला छवि छाई। दुष्ट राहु के मुख में आई ।।
यह सुनि कामंदकि की वांनी। लवंगिका वोली विलखांनी ।।
हाय! मालती प्रान पियारी। सुन्दरि मेरी सखि सुकुमारी ।।
कहां गई मोकौं दुख दैकैं। कौन विचार चित्त में लैकैं ।।५८।।

सोरठा

इहिं औसर पट टारि, माधव मालति कौं लिये।
सभा मद्धि सुख धारि, आयौं सोभा सौं सन्यौ ।।६०।।

दोहा

माधव बोल्यौ तिहिं समैं, वड़ौ कष्ट है एह ।
निज प्रवास के दुख तैं, छुटि मालती अतेह ॥६१॥
भूरिवित्त निज पिता के मरन संदेह मझार ।
फेरि परी यह दैव कौ कहियै कहा विचार ॥६२॥
यह सुनि कै मकरन्द निज, माधव के ढिग जाय ।
बोल्यौ वह जोगेश्वरी, है कित मित्र सुभाय ॥६३॥

पद्धरी

पुनि माधौ बोल्यौ समैं जानि । मकरन्द मित्र सुनि सत्य मानि ॥
श्री पर्वत तैं हम तिहीं संग । आवत है पाछे जुत उमंग ॥६४॥
उहि वन मैं करुना वचन आप । सुनि कै उर अतर सहित ताप ॥
सो विछुरी तव तै फिरि लखी न । को जानैं कत डगरी प्रवीन ॥६५॥
कामन्दकि पट की ओर देखि । नभ जानि सुबोली वुधि विशेखि ॥
करि रक्षा जोगेश्वरी अब्ब । हम कहत दुरि रही कित सगब्ब ॥६६॥
मदयन्ति लवंगिय दुवौ वाम । इमि बोली सिद्धिनि सौ ललाम ॥
हे भग्वति ! है मालत्तिय एह । हम कहत लखौ याकौं सनेह ॥६७॥
हिय धरकै याकौं थर थराय । अव समाधान कीजै सुभाय ॥
हा ! भूरिवित्त !! हा, सखि सुसील ! हुव मृत्यु हेतु तुम अब न ठील ॥६८॥
पुनि कामन्दकि बोली सु आपु । हे मालति ! यौं करिकैं विलापु ॥
अरु यौं पुनि माधव कह्यौ वैन । हा प्यारी मालती ! सुगुन ऐंन ॥६९॥
मकरन्द उच्चर्‌यौ करुन छाय । हे अतिही प्यारी ! सखी हाय ॥
यौं भापि मूर्छा में अचेत । ह्वै गए सवै पुनि लह्यौ चेत ॥७०॥

दोहा

ऊपर कौं लखिकै वहुरि, बोली कामद नाम ।
देखौ कोऊ घटानि तें, निकसत छन अभिराम ॥७१॥
सुखित करत सौहै हमै, या मैं झूंठ न रंच ।
जानैं कौन विरंचि कै, अगिनत भांति प्रपंच ॥७२॥

सोरठा

माधव बोल्यौ फेरि, रे मालती ! सचेत हुव ।
रहे सवै मिलि हेरि, सुख सरस्यौ हिय मैं कछुक ॥७३॥

सवैया

ऊंची उसासनि के उकसै उचकें अव याके उरोज सुहाए ।
खंजन से मन रंजन और लसैं पुनि लोचन हू छवि छाए ।।
और लसै मुख मंडल हू चटकीलौ महा मन मोर वढाए ।
भान उदोत समै सरसीरुह ज्यौ सवही निरख्यौं अतुराय ।।७४।।

दोहा

फेरि भयौ नैपथ्य मै, शव्द अचानक और ।
सो मैं आगे कहत हौं, सुनौ रसिक सिर मौर ।।७५।।

काव्य छंद

भूरिवित्त के पाय परसि नृप नंदन हारे ।
तिन कौं करि अपमान चित्त यौं व्यौंत विचारे ।।
जरिहौं अग्नि मझार नहीं संका उर आनौं ।
ताकौ आई राखि आजु मै सांची जानौं ।।७६।।
माधव अरु मकरन्द दुवौ ऊंचै कौं लखिकैं ।
कामन्दकि सौ वैन कहौ इहि भांति हरखिकैं ।।
तुम्हें वधाई लक्ष भग्वती सुनौ सुहाई ।
सो जोगिनि है एह घटा जानैं दरकाई ।।७७।।
जाकी अमृत धार पुंजन सौं आपै ।
निदरै धट जलधार जऊ मैंटति तन तापैं ।।
यह सुनि कामन्दकी उच्चरी मधुरे वैंननि ।
भली भई यह वात भरे अंसुवा सुख नैननि ।।७८।।

बड़ी चौपाई

धुनि इतनी सुनत मालती बोली मै भग्वान जिवाई ।
पुनि कामन्दकि बोली मालती वच्ची आउ सुहाई ।।
तव सुनिकैं मालति उचरी आगैं भग्वति है का ठाढ़ी ?
यौं कहिकैं पाय कमल सिद्धिनि कै रही पकरि हित वाढ़ी ।।७९।।
इहि औसर सीस उठाय पगनि तैं हित सौं हियैं लगाई ।
पुनि मांथौ सूंघि उच्चरी सिद्धिनि आनंद में लपटाई ।।
अव तू वची अरु तेरो प्रीतम जियौ सुमंगल छायौ ।
तू निजु सील अंग सौं मोकौं सीतल करि मन भायौ ।।८०।।
अरु तेरी है जु लवंगिय प्यारी अव जिवाय तू ताकौं ।
यह तो विन हुती ही व्याकुल परगट प्रेम कला कौं ।।

पुनि बोलि उठ्यौ माधव हू तक्षन हू मकरन्द पियारे ।
तू निहचै जियौ जानि अब मोकौ मैं वच सत्य उचारे ।।८१।।
यह सुनि मकरन्द उच्चर्यौ माधव मित्र बात है यौ ही ।
जो तैंने कही प्रेम करि मोंसौ तजि प्रपंच की गौही ।।
पुनि लवंगिका मदयन्ति बोली मालति सौ हित सांनी ।
तू हमहू सौं मिलि सखी प्यारी हम तो बिलखानी ।।८२।।
तब हाय प्रिया ! सखि यौ कहि मालति मिली दुहुँनि सौं आछै ।
यह कौतिक निरखि सिद्धिनी बोली परम प्रेम कौ काछै ।।
हे माधव मकरन्द ! हुवौ तुम हौ मो पुत्र प्रवानैं ।
यह है वृत्तंत कहा सो मौसौं प्रगट कहौं हित सानैं ।।८३।।
पुनि माधव मकरन्द उच्चरे हे भगवति सुन लीजै ।
हुव क्रुद्ध कपाल कुण्डला तातै दुख पायों कहा कीजैं ?
हम ता कलेश तैं जोगेश्वरि नें करिकैं कृपा छुटाए ।
तव पग अरविंद तुम्हारे तिन के हमनै दरसन पाए ।।८४।।

दोहा

यह सुनि कैं कामन्दकी बोली दुहुँनि सुनाय ।
हत्यों अघोरघंट जु फल ताकौ प्रगट्यौ आय ।।
लवंगिका मदयन्तिका वहुर्यौं उचरी बैन ।
वडौ आचिरज देव कौ अंत्य भयौ सुख दैन ।।८५।।

कुन्डलिका

दामिनि सी दुति देह की दमकति तप कैं जोर ।
रतनारे भारे नयन छुवैं श्रुतन के छोर ।।
छुवैं श्रुतन के छोर हरैं खंजन चपलाई ।
कुण्डल अरु मृग चर्म फटिक की माल सुहाई ।।
कहि ससिनाथ सुजांनि सिद्धि करिकैं अभिरामिनि ।
तछिन पट कौं टारि प्रगट हुव यौं सौंदामिनि ।।८७।।

सोरठा

नच्ची विविध प्रकार, ताल मृदंगनि धुनि सहित ।
सिगरी सभा मझार, पुनि बानीं यौं उच्चरी ।।८८।।
हे भगवतो ! उदार सौदामिनि तुव सिष्यनी ।
प्रनति करति बहु बार, हित सौं जोरैं कर जुगल ।।८९।।

मुक्तादास

इतो सुनि सिद्धिनि कामद फेरि । उचारीय तासहु सन्मुख हेरि ॥
सुदामिनि है तुव मंगल दानि । लखी वहु वासर में तप खानि ॥९०॥

पावकुलक छन्द

माधव अरु मकरन्द सयानैं । दुहुनि वचन इहि विधी वखानै ॥
आहा यह सिष्यनी तुम्हारी । है सौदामिनि गुन गन भारी ॥९१॥
जो इनि रक्षा करी हमारी । सो तों मुक्त करी सुख कारी ।
यह सुनि पुनि कामन्दकि वोली । सौदामिनि सौ प्रेम कलोली ॥९२॥
आउ भूरिवसु अंस की रक्षिन । जोग जुगति में परम विच्छन ॥
मैं सुख सनी दैव सुख ताकौ । मिलि मोसौं लहि नेह कलाकौं ॥९३॥
भला करि चुकी प्रनति अपारनि । तुही प्रनति लायक वहु वारिनि ॥
वीज जु हम तुम परिचय वारो । सफल भयौ सो अव उजियारौ ॥९४॥
यह सुनिकैं वतरानि सुहाई । लवगिका मदयन्ति सुनाई ॥
है यह भग्वति वह सौदामिनि । कहत हुती जो तुम अभिरामिनि ॥९५॥
इहिं औसर वोली पुनि मालति । भग्वति सौ हित सौ प्रन पालति ॥
या जोगिन ने मोंहि वचायौ । डाटि कपालकुण्लै नायौ ॥९६॥
निज घर लाय बहुत सुख दीनौ । प्रगट्यौ नयो जनम नवीनौं ॥
और वकुलमाला दरसाई । तुमहू सिगरे लिए जिवाई ॥९७॥
यौं सुनि लवंगिका मदयन्ती । वोलि उठी दोऊ गुनवन्ती ॥
हम पै भई प्रसन्न महाई । छोटी भग्वति हू छवि छाई ॥९८॥
इहिं औसर पुनि वोल्यौ माधौ । देखौ है अचिरज यह साधौ ॥
चिन्तामनि हू चिन्तत फल कौं । चाहति है वह वुद्धि अमल लौं ॥९९॥
सुनि उचरी सौदामिनि मन मैं । है माधव पूरौ दृढ़ पन मैं ॥
सज्जनता याकी अति मोकौ । लज्जा उपराजति अनरोकौं ॥१००॥
फेरि खरै वोली सौदामिनि । जोग रीति ज्ञाता अभिरामिनि ॥
हे भग्वती मैं और वखानौ । मुनि कै ताहि सत्य उर आनौं ॥१०१॥

छप्पै

लियैं नन्दनैं साथ चित्त तैं खेद भुलायैं ।
पद्मावती जो पुरी नृपति ताकौं छवि छायैं ॥
भूरिवित्त कै अग्र पत्र लिखिवाय सिहायैं ।
पठ्यौ माधव अर्थ प्रेम करि कै अपनायै ॥
यह कहि माधव के हत्थ में सौंप्यौ समयौं जानि कै ।
तिहिं वाचन लाग्यौ चाइकैं सो माधव सुख मानिकैं ॥

दोहा

भूरिवित्त की ओर तै नृप नैं दियौ लिखाय ।
भलौ होउ अव सखिन कौ इतनौ वचन सुहाय ॥१०३॥

छप्पै

स्वस्ति श्री द्विजराज सकल उपमनि के लायक ।
गुन समुद्र अनछुद्र आपनैं कुल के नायक ॥
तौहि पाहुनौं पाय दुख मैंने सव टारे ।
और अति भयो प्रसन्न सुखी रहियौ करि प्पारे ॥
तेरे निमित्त मदयन्तिका तुव ने ही मकरन्द कौं ।
मैं दीनी सो तू संक विनि विहरि कहूं तजि छन्द कौं ॥१०४॥

सोरठा

कामन्दकि हुलसाय, वोली माधव सौं वचन ।
वच्चा सुन्यौ सुभाय, जो या चीठी मैं लिख्यौ ॥१०५॥
पुनि यह सुनि कें वात, माधव कर जुग जोरि कैं ।
भग्वति सौं हुलसात, वोल्यौ इमि वानी मधुर ॥१०६॥

दोहा

समाचार ए मैं सुनैं, वांचे नैन लगाय ।
सकल हमारे काज अव, विधि नैं किये सुभाय ॥१०७॥

तोमर छंद

पुनि मालती यह वात । सुनि कै हरष्यित गात ॥
उचरी समेति सनेह । अव गए सव सन्देह ॥१०८॥
वोली लवगिय नाम । लखि कैं समै अभिराम ॥
मन के सवै विधि अर्थ । कीनैं विरचि समर्थ ॥१०९॥
मकरन्द पट तिन देखि । हित सनी डीठि विसेखि ॥
उचर्यौ वचन परकास । उर मद्धि पूरि हुलास ॥११०॥

दोहा

वुधिरक्षित अवलोकिता, अरु कलहंस उताल ।
नृत्यत आवत हैं चले, आहा देवदयाल ॥१११॥
पट उघारि कैं तिहिं समैं, तीन्यौ हर्ष समेत ।
सभा मद्धि परगट भए, नृत्ये सव सुख देत ॥११२॥

त्रिभंगी छन्द

वहु रंग चीरनि सजे सरीसनि मुख मै वीरनि झमकाऐं ।
कंचन मनिवारे वनैं अपारे भूषन भारे छवि छाऐं ॥
लै आवज संगनि तान तरंगनि भरी उमंगनि गति ठाऐं ।
सव मिलि कै नच्ची गुन करि सच्ची प्रेम परच्ची प्रीय पाऐं ॥११३॥
पाऐं प्रिय सगरी रूपन अगरी सौरभ वगरी चहुं ओरैं ।
कटि किंकिनि झनकैं पायल छनकैं नूपुर ठनकैं चित चोरैं ॥
खंजनि से अक्षनि करै कटक्षनि हसि हसि लक्षनि वय थोरे ।
जनु दमकै दामिनि इमि अभिरामिनि मुख पै कामिनि पट कोरे ॥११४॥

दोहा

विविध भांति सव नच्चिकैं, करि भग्वतिहि प्रनाम ।
सभा मद्धि सव मंडली, वैठी पुनि अभिराम ॥११५॥

तोमर छन्द

अवलोकिता ढिग जाय । निजु सरस कैं हुलसाय ॥
भग्वतिसौं इमि वोल । उचरी समेत कलोल ॥११६॥
जय भग्वती तपखानि । तोसी तुही महुवानि ॥
चित में करै जु विचार । सो करनि वारि उदार ॥११७॥
इहिं वात कौं सुनि अव्व । अचरज्ज सहित अगव्व ॥
लखि रही मृदु मुसक्याति । समझी कछू नहीं भांति ॥११८॥

दोहा

सवै सभा के नरनि सौं लवंगिका मुसिक्याय ।
वोली चंचल नैन करि, उत्तम औसर पाय ॥
ऐसौ कहूं वसन्त मै, दूजौ प्रगट न और ।
काहू नैं नैननि लख्यौ, हौ रसिकनि सिर मौर ॥१२०॥

सोरठा

इमि सुनिकै बतरानि, सौदामिनि पुनी उच्चरी ।
या प्रकरन में आनि, यह विलास आछौ भयौ ॥१२१॥

बड़ी चौपाई

इहिं भूरिवित्त अरु देवरात सौं हुव समबन्ध सुहायौ ।
अति सफल मनोरथ भये दुहुनि कें मोद हियैं अधिकायौ ॥

यह सुनि कांवत मालती मन मैं इहिं विधि चितन लागी ।
किय कौन भांति ही प्रथम प्रतिज्ञा परम प्रेम सौं पागी ॥१२२॥
पुनि समौं जानिकैं अपनौ माधव अरु मकरन्द प्रवीनैं ।
गुन निधि कामदानि के आगे उचरे निपट अधीनैं ॥
नहि कवहूं भूंठी होय बात वह जो भग्वती विचारै ।
यह निहचैं है मेरे उर अन्तर बहुविधि सिद्धि सचारै ॥१२३॥
यह सुनिकैं लवंगिका सिद्धिनि सौं कान लागि वतरानी ।
अव भई सिद्धि सगरे काजनि की ही पहलैं जो ठानी ॥
पुनि कामंदकी उच्चरी संका हुवौ सु तन की भागी ।
सो नन्दन और नृपति सुन्दर हू भए कपट तज राजी ॥
द्विज देवरात और भूरिवित्त नैं कहौ वचन हौ आगैं ।
करि मोहिं और सौदामिनि साखी उर अति ही हित जागैं ॥
जब ह्वै है कवहूं सन्तति प्यारे मेरैं और तिहारैं ।
तव आपुस में सम्बन्ध परस्पर करिहैं प्रन को धारैं ॥१२५॥

सोरठा

यह सुनिकै मृदु गात, हरषि उचारी मालती ।
भई उचित ही बात, उर तैं सव संका गई ॥१२६॥

छप्पै

पुनि माधव मकरन्द उच्चरै औसर कौं लहि ।
धन्य धन्नि भग्वती बड़ी है तू वुद्धिनि गहि ॥
यह सुनि कामन्दकी वचन बोली इमि आपै ।
बच्चा हो तुम भेद सुनौं मो पै तजि तापै ॥
ही करी प्रतिज्ञा भूरिवसु देवरात नैं प्रथम ही ।
सो उनके पुण्यन सौ वहुरि मेरे विक्रम सौं रही ॥१२७॥

काव्य

अरु मेरे जो सिष्य सफल इच्छा हुव तिन की ।
आछैं भयौ मिलाप कहा कहियै या छिन की ॥
अव ह्यां कैसी लाज है सो निर्खो किन दम्पती ।
अरु यातै अति चारु कौंन है दूजी सम्पत्ती ॥१२८॥

पावकुलक छन्द

माधव जिहि दुख हुतौ दुखारी । अवलोकी सु मालती प्यारी ॥
इकटक रह्यौ विसारि निमेषै । प्रेमसिन्धु की लहरि विशेषै ॥१२९॥

जैसे रंक वित्त कै पायें । हर्षित होत कलेस वहायें ॥
अरु चकोर लखि पूरन चन्दैं । भूलि जात ज्यौं सब दुख दन्दैं ॥१३०॥
ज्यौं भुजंग मनि पावैं खोई । अरु जल पाय मीन ज्यों होई ॥
आनन्द के दृग अंसुवा ठरकें । अवर सवर माधव के थरकें ॥
फेरि चित्त में साहस करिकैं । कहन लग्यौ निजु दुख ठहरिकें ।
तो विन भई दसा जो मेरी । कहि न सकै सो जीभ अनेरी ॥१३२॥
सीतल मन्द सुगन्ध समीरन । लियौ ज्वाल सौं झेलि सरीरनि ॥
पिक की कूकनि हूक वढ़ाई । रही स्वास तुव आस डिठाई ॥१३३॥
तव तैं नाहिं नींद नियराई । रही न भूख एक हू राई ॥
पानी की सु कहानी कैसी । लगी वसन की वात अनैसी ॥
भूपन गिरे कौन सी ठारैं । मैं जानी नहि खात पवारैं ॥
निज भागनि सौं तूव निहारी । नैननि के फल लह्यौ सुखारी ॥१३५॥

दोहा

जवै मालती सौं कहै, माधव नैं यौं वैन ।
सुनि पुनि वोली मालती, माधव सौं भरि नैंन ॥
निकसी तुव मग लखन जव, तिहि वन में हौं आप ।
मोहिं कपाल सु कुण्डला लै आई दै थाप ॥१३७॥

त्रिभंगी

खपची मैं मसकी करि निजु वसकी नैंकी नसकी रिस ठांनैं ।
जल विन ज्यौं झखियां विलखी अंखियां निकली वखियां उससानैं ॥
नहिं कहूं थिरानी करकस वानी उचरति आंनी तिहिं थानैं ।
गहि के सगवन की गगन पवन की विथा सुमनकी को जानैं ॥१३८॥
का जानैं पीरैं छिपौ न नीरैं तन की चीरैं भूलि गई ।
विसकी सी लहरें छहरी गहरें पवनैं फहरें रूलि छई ॥
हौ भूषन पग मै गिरे सुमग मै अरु पुनि जग में वैरु भर्यौ ।
नहिं भोजन भायौ जुर चढ़ि आयौ मदन अठायौ वैस पर्यौ ॥१३९॥

दोहा

यौं कहि माधव मालती, कसकि मिले भरि अंक ।
अंग अंग हरषित भये, निवर्यौ विरह अतंक ॥१४०॥
पुनि वोली कामन्दकी, सिद्धिनि समौं निहारि ।
नृप अरु नन्दनहू भये, हर्षि कपट विसारि ॥१४१॥

सिगरे हितकारीन कौं, वहुर्‌यौ भयौ मिलाप ।
जग में को कल्यान है, यातैं और प्रताप ॥१४२॥
यह सुनि कै जुग जोरि कर, भगवति सौं सुख पाय ।
वहुर्‌यौ माधव उच्चरौ, विनय भर्‌यौ मुसिक्याय ॥१४३॥

सोरठा

याहू तें प्रिय और, हम कौ है संसार मैं ।
हो सिद्धिनि सिर मौर, तुव प्रसाद तै होउ सों ॥१४४॥

सवैया

सुर भो······रना सम छीर थवै लखि मोद हियै परसातु रहै ।
अरु है जु हमारौ समाज सवै, सुसनेह सन्यौं दरसातु रहै ॥
ससिनाथ कहै जव चाहियै ता छिन मेह महा वरसातु रहै ।
सिगरें जगकें सुख स्यौं नृप कौ यह राज सदा सरसातु रहै ॥१४५॥

दोहा

यह सुनि कै कामन्दकी, वोली मृदु मुसिकाय ।
सोमनाथ की कृपा तैं, यौंही होउ सुभाय ॥१४६॥

सोरठा

इतनी कहि कै वात, सव पट के भीतर गईं ।
रीझे नर हुलसात, कौतिक वारे सभा के ॥१४७॥

हरिगीत

वदनेस नंद प्रताप ताकौ तेज दिनमनि तूल है ।
अव करन सौ ताकैं वहादुर कुंवर आनंद मूल है ॥
तिहिं हित्त कवि ससिनाथ तैं रच्‌यौ विचारि निसंक है ।
माधव विनोद सुग्रन्थ कौ यह भयौ दसमों अंक है ॥१४८॥

रचनाकाल :

ठारह सै अरु नव वरप, संवत आश्विन मास ।
सुक्ल त्रोदसी भृगु दिनां, भयौ ग्रन्थ परकास ॥१४९॥

इति श्री मन्महाराज कुमार जयति कुलावतंस श्री वहादुरसिंह हेतवे माथुर कवि सोमनाथ विरचिते माधव विनोद नाटके सकल समागम नाम दशमोङ्कः ॥

सांगीत रचनायें

१. हास्यार्णव :	ले० रस रूप	र० का०	सन् १६८६–८६ ई०
२. माधव-विनोद :	ले० सोमनाथ	र० का०	सन् १७५२ ई०
३. प्रवोध चन्द्रोदय :	ले० व्रजवासीदास	र० का०	सन् १७५६ ई०
४. लैला-मजनूं :	ले० विसराम	लिपिकाल	सन् १८३३ ई०
५. गोवर्धन लीला :	ले० कंवरसेन	र० का०	सन् १८३७ ई०
६. प्रह्लाद :	ले० लछमनदास	र० का०	सन् १८४३–४८ ई०
७. गोपीचंद :	,,	,, ,,	,, ,,
८. भरतरी :	,,	,, ,,	,, ,,
९. सब्ज परी :	ले० शालिग्राम वैश्य	र० का०	सन् १८५४ ई०

१०. हीरा परी और लाल शहजादा :
११. परीरु और गुलरू शहजादा :
१२. प्रेमसरिता या सांगीत कन्हैयाजी ;
१३. राजा परीक्षित :
१४. अंधर जोगन
१५. सनोवर परी और गुल शहजादा :
(१०–१५) ले० झव्वीलाल मिश्र र० का० १८४९–१८५३ ई०

१६. इन्दर-सभा :	ले० अमानत	र० का०	सन् १८५३ ई०
१७. इश्क-चमन :	ले० शालिग्राम वैश्य	र० का०	सन् १८५४ ई०
१८. ध्रुव चरित :	ले० नयनसुख	लिपिकाल	सन् १८७२ ई०